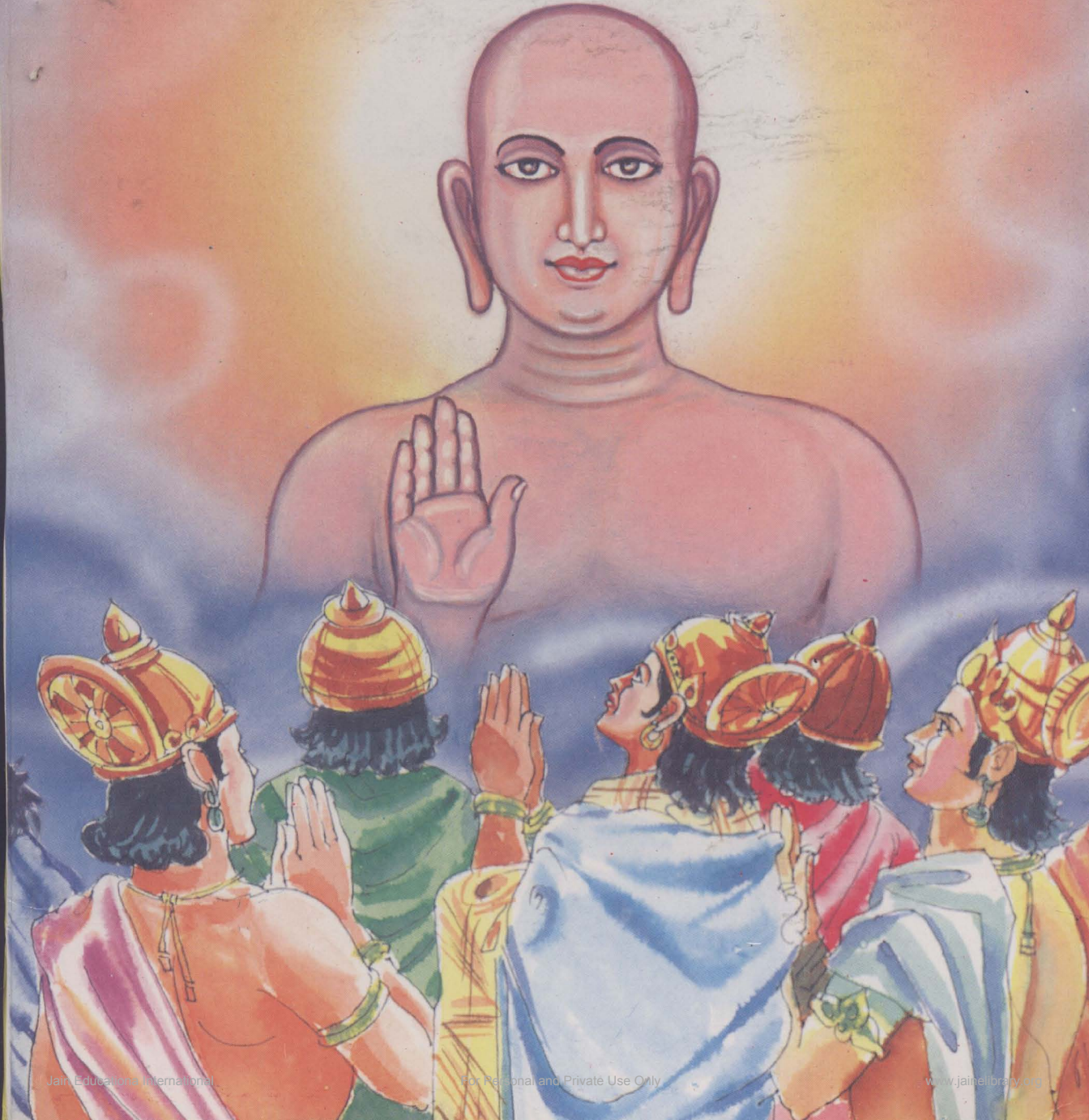


# सचित्र श्रमण भगवान महावीर

एम. सुब्बा राव

*Illustrated* ŚRAMANA BHAGWAN MAHAVIRA

*M. Subba Rao*



# सचित्र

# श्रमण भगवान् महावीर

*Illustrated*

**ŚRAMANA BHAGWAN MAHAVIRA**

एम. सुब्बा राव

*M. Subba Rao*



सन्मति, हैदराबाद.

Sanmati, Hyderabad.

Illustrated  
SRAMANA BHAGWAN MAHAVIRA

Rights Reserved

First Edition : 1998

English Translation :

Sri B. Dayananda Sarawasthi, MA

Hindi Translation :

Sri Y. Someswara Sarma, MA Sahithya Ratna

Illustrations by :

Sri B. Anjaneyulu

For Copies :

SANMATHI,  
120/C, Santosh Nagar Colony (Old),  
Near Saidabad,  
Hyderabad - 500 059. A.P.  
Tel : 040-4534563

**सन्मति**

१२०/सी, सन्तोश नगर कॉलोनी (ऑल्ड)  
सैदाबाद के सामने,  
हैदराबाद - 500 059. आ. प्र.  
दूरभाष : ०४०-४५३४५६३

Desktop :

Sri Ushodaya Graphics,  
Baghlingampally, Hyd  
Ph: 7612258

Printed at :

Sri Sai Ratna Process  
Himayathnagar, Hyd.  
Ph : 7607900

**Price: Rs.150/-  
US \$ 5**

अंकित

निर्गन्थो गुरुः

यह पुस्तक माननीय गुरुदेव शताधिक ग्रंथकर्ता श्री आचार्य तुलसीजी की स्मृति को अर्पित है।

जन्म

1916

महाप्रयाण

23.06.1997

एम. सुब्बाराव



Nirgrantho Guruhu

Dedicated to the memory of Respected Gurudev Shri Acharya Tulsiji.

Birth  
1916

Mahaprayan  
23.06.1997

**M. Subba Rao**





# निवेदन

श्री महावीर स्वामी पर कई ग्रन्थ लिखे गये। अतः कुछ लोगों ने यह प्रश्न किया कि बार बार उनका चरित्र लिख कर छापने की क्या आवश्यकता है ? इसका समाधान यह दिया जा सकता है कि कल भोजन तो किया है न, तो आज नहीं किया ? कल कपडे पहने हैं न, तो आज क्या पहनना छोड़ा ? किंया हुआ संसार क्या फिर नहीं करते ? तो परम पावन, पवित्र मूर्ति, ज्ञान की प्रतीका श्रमण भगवान महावीर स्वामी को कितनी ही बार ध्यान में लाओ, कितना ही उनके बारे में पढ़ो, और सुनो वह सब थोड़ा ही है।

इसी से पुनः पुनः

सत्य जन्मानहः शरणम प्रपद्यामि ।

रत्नत्रयस्य शरणम प्रपद्यामि ।

एम. सुब्बा राव

## PREFACE

One may ask 'why another book on Lord Mahavira yet ? we have already had enough of such books'. One may be justified in asking thus. However, on second thoughts such a question deteriorates into a stock one. When a writer takes it into his head to write on a noble topic or about a great man, the motive is always lit up by a germ, a flash of an idea to explain the topic from a novel point of view. The novelty consists in the perception and in the presentation. Apart from that, there is no end to the telling and the retelling of a great man's life just as there is no end to the singing and the re-singing of a melodious song by singers in newer and newer tones and tunes. Do we stop our daily rounds of taking in food and drink again and again? Do we not feel the return of hunger and thirst ? The pangs of spiritual hunger take an individual interpreter, as well as an avid reader, to a great topic. It is thus a person returns again and again to the same quest. The effort may be modest, but the intention is sincere. Faith and reverence are essential for the enjoyment of this work. So skeptical logic is a rank outsider.

*Sathya Jan Manaha Saranam Prapathyami*

*Ratnathrayasya Saranam Prapathyami*

*M. Subba Rao*

## FOREWORD

Jainism claims great antiquity. The following Hymn from the Rigveda, while praising the First Tirthankara Shri Rishabhanatha Swamy establishes the fact that the Jina or Arhanta, was worshipped from time immemorial.

ऋषभं मासमाननां सपत्नानां विसासहीम् ।

हंतारं शत्रूणां कृधि विरजं गोपितांगवाम् ॥ (ऋग्वेद x 12.166)

The 23 Tirthankaras that followed Sri Rishabhanatha Swamy have purified the lives of their disciples for the attainment of ultimate reality. The spiritual and ascetic lives of Tirthankaras have inspired the devotees that belong to Jainas as well as Non-Jaina sects and the book in your hand "Illustrated SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA" is a proof of that reality. When the writer Mr. M. Subbarao approached me to learn certain fundamentals of Jainism, I had recommended and handed over to him two great Jaina works viz., (1) Illumination of Jaina Tenets by Gurudev Mahaganadhipathi Shri Acharya Tulsi Ji, and (2) Shramana Mahavira by Shri Muninathalmalji. It is only befitting tribute to that this book is dedicated to the pious memory of Sri Acharya Tulasi Ji who had undertaken Mahaprayan on 23.6.1997.

The aim of this book, I presume, is to create interest in Jainism among non-Jainas in general and inspire children of Jaina origin in particular. After examining the 100 odd pictures followed by equal number of pieces of text that cover the central theme of the book, I feel that the writer has achieved this objective. I think the writer deserves every encouragement from all sections of Jainas. Let me utilize this opportunity to advise him to devote his energies in future to the writing of such kind of works. I wish him every success in this direction.

**(Balachand Sancheti)**

Advocate

Ramkote, Hyderabad

# प्रस्तावना

जैन धर्म की मान्यता बहुत ही प्राचीन है। “जिन” या “अर्हत” की पूजा बहुत अनादिकाल से होती रही है और यह ऋग्वेद के निम्न श्लोक से (सिद्ध) होता है।

ऋषभं मासमाननां सपत्नानां विसासहीम् ।

हंतारं शत्रुणां कृधि विरजं गोपितांगवाम् ॥ (ऋग्वेद x 12.166)

तिर्थंकर ऋषभनाथ और उनके पश्चात के तेइस तिर्थंकरों ने जीवन (उत्थान) एवम् मुक्ति के लिए आध्यात्मिक मार्ग सर्व जीवों को दिखाया था। सभी तिर्थंकरों की जीवनी इतिहास की बहुत बड़ी निधी है और उनके अध्ययन से सर्व मानव जाति को, चाहे जैन धर्म अनुयायी हो या न हो, उत्तम जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है और यह पुस्तक इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है।

श्री सुब्बारावजी, जो आन्ध्र प्रदेश के लेखापरीक्षक कार्यालय में कार्यरत है, मेरे पास आए और अपना परिचय देने के उपरान्त बताया कि वें जैन धर्म के विषय में पुस्तक लिखने का विचार रखते हैं। और जैन धर्म के मूल भूत तत्वों के विषय में जानकारी चाही। वार्तालाप और परस्पर विचारों के आदान प्रदान के पश्चात मैंने उन्हें निम्न लिखित दो पुस्तकें दी।

1. Illumination of Jaina Tenets (जैन सिद्धान्त दीपिका)

(आचार्य श्री तुलसी द्वारा लिखित)

2. श्रमण महावीर मुनि श्री नथमल जी द्वारा लिखित (वर्तमान में आचार्य महाप्रज्ञजी)

लेखक ने अपनी पुस्तक को मर्तरूप देने में अन्य जैन साहित्य कृतियों, जैन धर्म सम्बन्धित पुस्तकों और गृन्थों तथा उपरोक्त लिखित पुस्तक का अध्ययन किया होगा।

मेरे विचार में लेखक का इस पुस्तक का लिखने का उद्देश्य उन लोगों में जैन धर्म और जैन सिद्धान्तों के ज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न करना है जो जैन धर्म के अनुयायी नहीं हैं एवम् उन्हें धर्म के प्रति प्रेरणा प्रदान करना है।

जब हम पुस्तक के १०० से अधिक चित्रों और उनमें सम्बन्धित लेखों का अवलोकन करते हैं जो पुस्तक का मूल भाव दर्शाते हैं, मेरे विचार में लेखक ने अपने मुख्य उद्देश्य को साध्य करने में और मुख्यतया उन बालक बालिकाओं में, जो जैन धर्म के अनुयायी है सफलता प्राप्त की है। मेरे विचार में सभी वर्गों के जैनियों को लेखक के कार्य की सराहना करनी चाहिए और लेखक का उत्साह बढ़ाना चाहिये।

मेरी कामना है कि भविष्य में भी लेखक इस प्रकार की उपयोगी कृतियों का लेखन कार्य करने में यशस्वी बने।

लेखक ने यह कृति आचार्य श्री तुलसी को समर्पित कर, उनके प्रति अपनी श्रद्धा का आनंद अनुभव किया है एवम् यह बात लेखक को गौरवित करेगी ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

संचेती बालचंद

एडवोकेट

रामकोट, हैदराबाद

## **ACKNOWLEDGEMENTS**

At the outset, I thank Shri Balachand Sancheti, Advocate for introducing me to Jainism.

I profusely thank respected Shri B. Dayananda Saraswati Garu, MA for translating the Telugu Version of this book into English in a remarkably short time quite graciously and charitably. I join the band of his disciples and students in saluting him for his encyclopaedic knowledge in every branch of study which he gains with his characteristic magical insight.

Further, I thank respected Pandit Shri Y. Someswara Sharma, M.A., Sahitya Ratna (Hindi) for translating the Telugu Version into Hindi, despite his personal difficulties. I bow to him with reverence for his magnanimity in accepting the assignment without any favour in return from me.

I thank Smt. Giri Kumari for helping me in drafting the translation of certain portions of this work in Hindi.

I thank Shri B. Anjaneyulu Garu for drawing all the pictures (including the designing of cover pages). He did this work deftly and single-handedly and I admire his patience and forbearance in completing the job amidst distractions and personal problems.

Further, I thank Smt. P. S. Lakshmi, B.Sc., MBA, without whose help it would not have been possible for me to locate the right artist for this work.

I thank Shri Mohd. Kamaluddin for imparting knowledge about vernacular Hindi.

I thank Kum. M. Ramadevi, Chief Executive, Sri Ushodaya Graphics, Baghlingampally, who has done the DTP work to my great satisfaction.

I thank the proprietor and staff of Sri Sai Ratna Process, Hyderabad for printing the book neatly and elegantly.

I once again thank Shri Kushal Chandji Singhvi for helping me in more ways than one.

Lastly but not in the least, I thank Shri Kasthurchandji M. Jhabak for educating me in Jainalogy from the religious point of view.

**M. Subba Rao**

The Author



# अभिस्वीकृति

आरम्भ में मैं, श्री बालचन्द्र जी सन्चेटी, एडवोकेट का आभारी हूँ जिन्होंने मुझे जैन धर्म का परिचय दिया।

मैं आभारी हूँ, माननीय श्री बी दयानन्द सरस्वती जी, एम.ए., का, जिन्होंने केवल शिष्टता और परोपकार भाव से अत्यंत कम समय के भीतर इस पुस्तक का तेलुगु अनुवाद अंग्रेजी में किया। मैं उनके ज्ञान भण्डार को सादर नमस्कार, साधुवाद करते हुए उनके शिष्य मंडल में अपने आप को समर्पित करता हूँ।

मैं आभारी हूँ माननीय पंडित श्री वाई. सोमेश्वर शर्माजी एम.ए. साहित्य रत्न (हिन्दी) का, जिन्होंने अपनी व्यक्तिगत समस्याओं के बावजूद तेलुगु रुपान्तर का अनुवाद हिन्दी में किया। मैं उनका सदैव आभारी हूँ कि उन्होंने बिना किसी लाभ के इस कार्य को स्वीकारा।

इस पुस्तक के हिन्दी रुपान्तर में कुछ अध्याय के हिन्दी अनुवाद कार्य में सहायता देने के लिए मैं, श्रीमती गिरी कुमारी का भी आभारी हूँ।

मैं श्री बी. आजनेयुलु जी का आभारी हूँ जिन्होंने (मुख्य पृष्ठ सहित) सभी चित्र बनाए। उन्होंने बहुत ही लगन से यह कार्य अपनी समस्याएँ तथा अन्य आपत्तियों के बावजूद स्वयम् ही सम्पूर्ण किया।

मैं आभारी हूँ श्रीमती पी. एस. लक्ष्मी, बी. एस.सी., एम. बी. ए. का, जिनकी सहायता के बिना मैं एक उत्तम व उत्कृष्ट चित्रकार नहीं ढूँढ पाता।

मैं श्री मोहम्मद कमालुद्दीन, हिन्दी पंडित का आभारी हूँ जिनके अमूल्य सुझावों से उस पुस्तक को सरल बनाने में सहायता मिली।

मैं आभारी हूँ कुमारी एम. रमादेवी जी, श्री उषोदया ग्राफिक्स का जिन्होंने सतोष्जनक डी. टी. पी. कार्य किया।

श्री साई. रत्न प्रिंटर्स के मालिक तथा स्टाफ का आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को मुद्रित किया।

श्री कुशल चन्द्रजी सिध्नी का उनकी सहायता के लिए मैं एक बार फिर से अपना आभार प्रकट करता हूँ।

अंत में मैं आभारी हूँ श्री कस्तूरचन्द्रजी एम. झाबक का जिन्होंने मुझे जैन धर्म के धार्मिक दृष्टिकोण से शिक्षा दी।

एम. सुब्बा राव

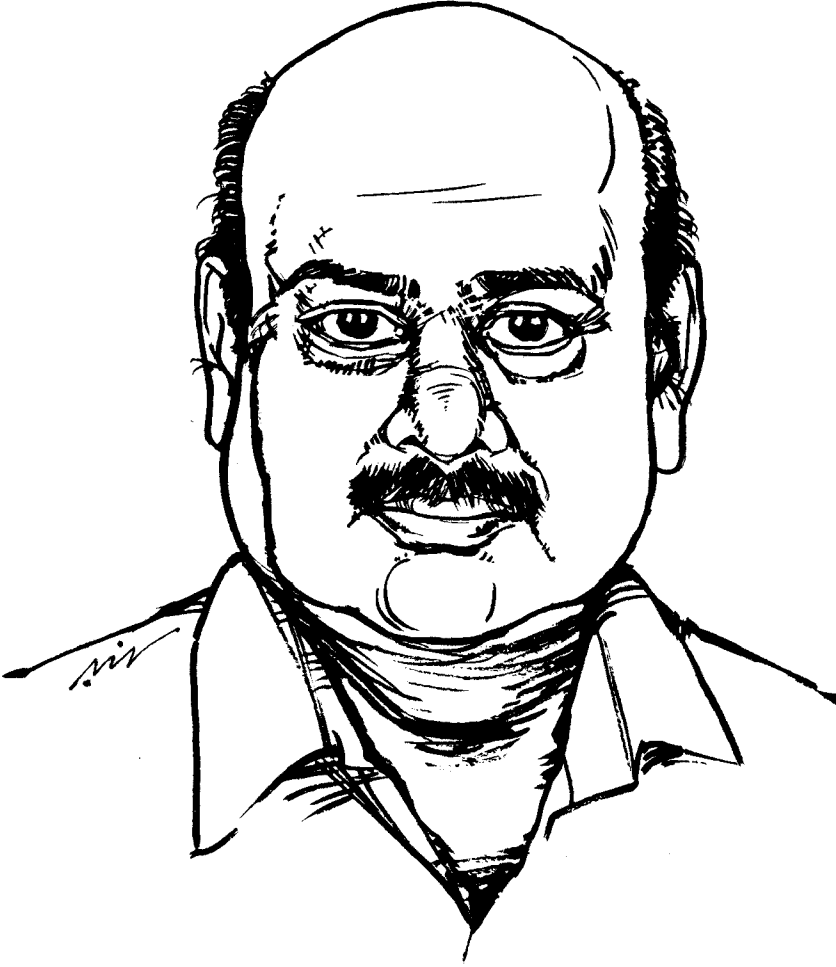
लेखक



## धन्यवाद

श्री कुशलचन्दजी सिंगवी का विशेष रूप से आभारी हूँ जिन के मार्गदर्शन में मुझे यह पुस्तक पूरा करने का अवसर मिला ।

एम. सुब्बाराव



## SPECIAL THANKS

I am thankful to Respected Shri Kushal Chandji Singhvi whose gracious support enabled me to complete this book in time.

**M. Subba Rao**

नमस्कार महामंत्र

णमो अरहंताणं,  
णमो सिद्धाणं,  
णमो आयरियाणं,  
णमो उवज्झायाणं,  
णमो लोए सव्व-साहूणं

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो ।

मंगलाण च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥

# दिव्य संदेश

दूध से घी निकालने की एक प्रक्रिया है। दूध में घी है किन्तु उसे देखने और पाने के लिए एक प्रक्रिय से गुजरना होता है। हमारे भीतर आत्मा है। उसे देखने के लिए, आत्मा से परमात्मा बनने के लिए एक प्रक्रिय से गुजरना आवश्यक है। उस प्रक्रिय से गुजरे बिना न आत्मा को देखा जा सकता है, न परमात्मा बना जा सकता है। आत्मदर्शन की प्रक्रिया है - जानो, श्रद्धा करो, आचरण करो और तपो। यह मार्ग आत्मा से परमात्मा बनने का मार्ग है और इसे ही मोक्ष मार्ग कहा गया है।

वर्तमान युग को एक मोड़ देने की आवश्यकता है। अगर इस भौतिकवादी और सुविधावादी युग में, विज्ञापनों और गलत आकर्षणों के युग में मोड़ न ला सके तो आनेवाली पीढ़ी दायित्वहीन, बौद्धिक दृष्टि से कमजोर और विद्या की दृष्टि से शून्य होगी। दायित्व-बोध और गंभीरता जैसे तत्त्व विरल बन जाएंगे। इसलिए उपदेश-रुचि पर अधिक से अधिक ध्यान केन्द्रित होना चाहिए। हम उपदेश-रुचि के प्रयोग द्वारा जनता में नव तत्त्वों के प्रति, सत्य और धर्म के प्रति एक अनिवार्यता की अनुभूति जगाएं, यह अपेक्षित है। यह अनुभूति कराना हमारा सामाजिक दायित्व है, राष्ट्रीय दायित्व है और आत्मिक दायित्व है। उपदेश-रुचि का होना इन तीनों दृष्टियों से बहुत महत्व-पूर्ण है। ऐसा करने वाला व्यक्ति युग को मोड़ने वाला है और वह युग प्रवर्तन में अपनी समुचित भूमिका निभाता है। युग के प्रवाह में न चलकर उसके प्रतिकूल चलने वाला व्यक्ति आकर्षण की दिशा को बदल सकता है। अभिभावकों का, माता-पिता का, यह दायित्व है कि वे बच्चों की रुचि के साथ न चलें किन्तु उनकी रुचि को मोड़ने में अपना योग दें। यदि ऐसा होता है तो महावीर की उपदेश-रुचि वालो बात हमारे लिए बहुत सार्थक और प्रासंगिक बन पाएगी।

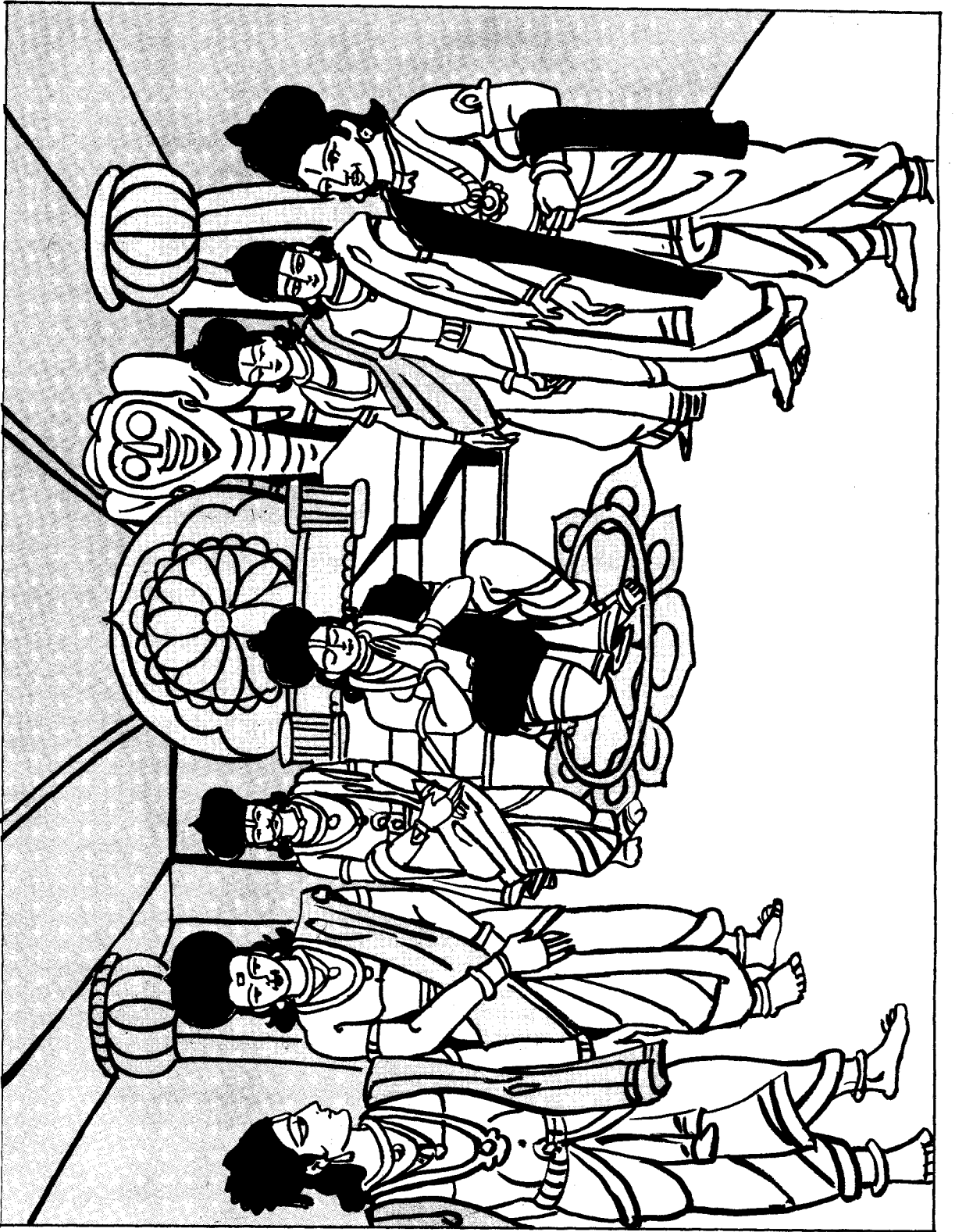
- आचार्य श्री महाप्रज्ञा जी

“महावीर का पुनर्जन्म” से

(H. H. Acharya Sri Mahapragya Ji)

From "Mahavir ka purnarjanma"





## 1. इन्द्र सभा

देवताओं के अधिपति इन्द्र सौधर्मकल्प नामक स्वर्ग में शेष देवगणों के साथ चौबीसवें तीर्थङ्कर के लिए अत्यन्त उत्सुकता और भक्ति पूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। अबतक आये तीर्थङ्करों का इन्द्र ने अपने परिवार के साथ स्वागत करने के साथ साथ, उनके सन्यासी जीवन में भी सहायता कर उनके भक्तों को महदानन्द पहुँचाया। उन्होंने अपने अवधी-ज्ञान से जान लिया कि जम्बूद्वीप के विदेह राज्य के, कुन्दग्राम में चौबीसवें तीर्थङ्कर श्रमण भगवान् महावीर का अवतार होनेवाला है। तुरन्त हड़बड़ी में अपने ऐरावत पर अधिरोहण (सवार) होकर जम्बूद्वीप की ओर प्रयाण कर जाने को उद्यत हुए। अतः इन्द्र ने अपने ऐरावत पर अधिरोहित होकर जम्बूद्वीप की ओर प्रस्थान हेतु उद्युत हुए।

## 1. THE COURT OF INDRA

From his Swarga called Soudharmakalpa, Indra the King of Gods was eagerly watching and awaiting the incarnation of the 24<sup>th</sup> Tirthankara. Uptil now Indra had welcomed and paid obeisance to the 23 Tirthankaras that had incarnated. He, Indra (as well as his retinue i.e. Heavenly hosts), apart from assisting them to the best of his ability in their leading ascetic lives, had always been a source of joy to the devotees of the Tirthankaras. The King of Gods had known that in Jambudvipa (the present day India) the 24<sup>th</sup> Tirthankara, Shramana Bhagawan Mahavira was about to incarnate in the village of Kunda in the Kingdom of Videha. Now the time had arrived and so Indra, riding his Airavata was all set to travel to Jambudvipa to be present there on the auspicious occasion.



## 2. इन्द्र को भगवान महावीर के दर्शन

श्री महावीर के दर्शन के लिये चल पड़े इन्द्र ने कुन्द ग्राम के ब्राह्मण अग्रहार में बसी हुई देवानंद नामक बहमणि के गर्भ में उत्तर फल्गुनि नक्षत्र में, दिनप्रति दिन प्रवर्धमान हो रहे श्रमण भगवान महावीर को देखा और भक्ति के साथ विनम्र भाव से नत-मस्तक हो दण्डवत् प्रणाम किया ।

## 2. INDRA IS BLESSED WITH THE SIGHT OF MAHAVIRA

Indra who thus set out for the Holy Darshan of Lord Mahavira saw with his divine sight that Mahavira, who had entered the womb of a Brahmin woman Devananda of the Colony of the High Born in the village of Kunda, with Uttara Phalguni as the auspicious presiding star of his entry into the womb, was growing unimpeded in divine atmosphere. Having been blessed with the sight of the foetal Mahavira thus, Indra saluted him with reverence and humility.



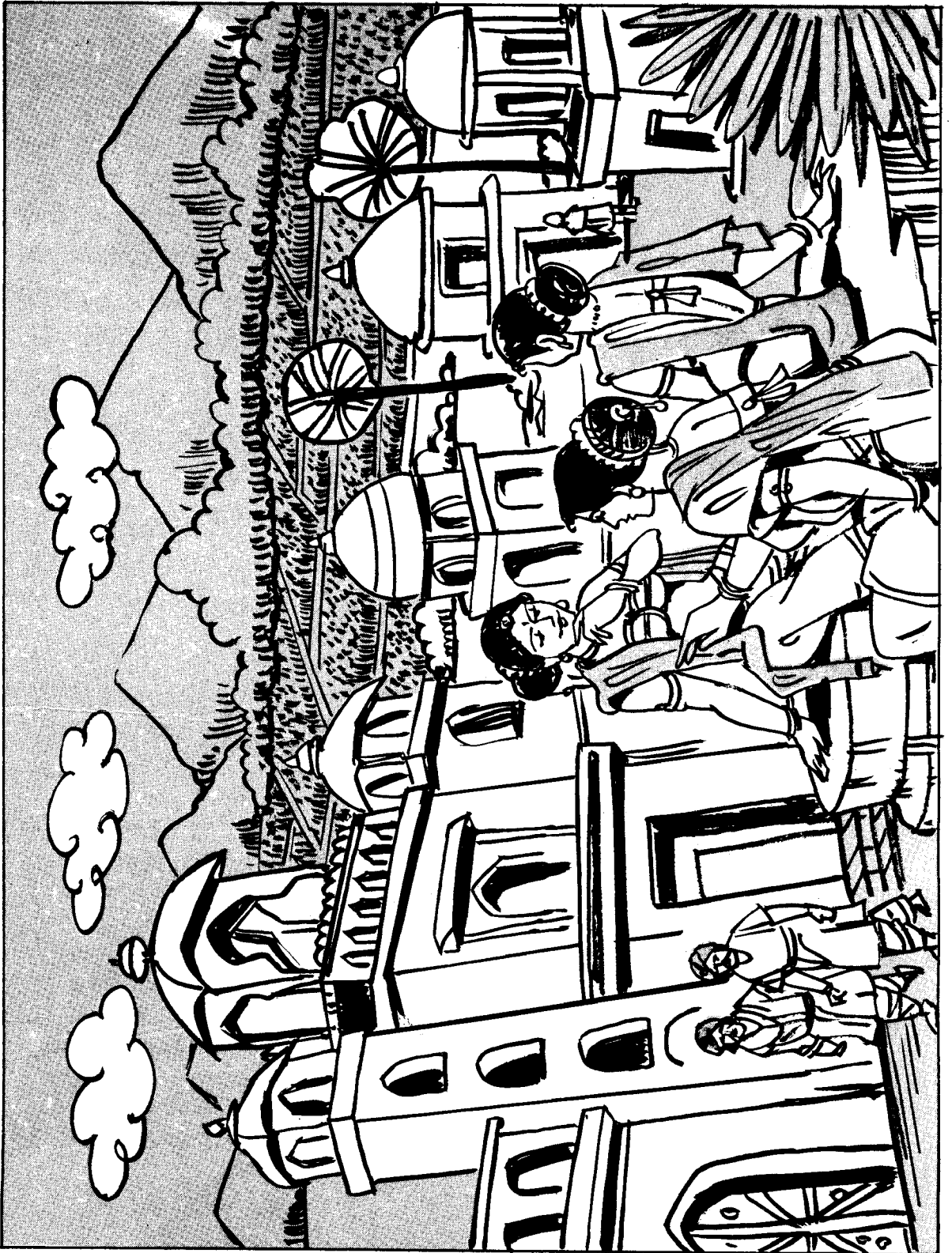


### 3. इन्द्र का दुविधा में पड़ना, संशय-मुक्त होना ।

श्रमण भगवान महावीर के दर्शन के पश्चात इन्द्र धर्म-संशय में पड़े । अब तक जिन तेईस तीर्थंकरों का प्रादुर्भाव हुआ उन सब ने उन्नत एवं सुसम्पन्न, क्षत्रिय परिवारों में जन्म किया तथा धन-धान्य-प्रपूर्ण सम्पत्ति का अनुभव करके, राज्य-त्याग कर सन्यास की दीक्षा लेली । अब श्रमण भगवान का ब्राह्मण-परिवार में जन्म लेना नियम-विरुद्ध है । अतएव इन्द्र ने इस विपरीत स्थिति को हटाने के लिये देवताओं के सेनानी हरिणगमेशिं मेशि को बुलवाया और आज्ञा दी कि तुरन्त ब्राह्मणि देवानन्द के गर्भ में उदित श्रमण भगवान महावीर को क्षत्रिय कुन्द राज्याधीश्वर सिद्धार्थ की पत्नी रानी त्रिशाला देवी के गर्भ में रखवी दिया । उस आज्ञा को शिरोधार्य मानकर, हरिणगमेशी अपनी महिमा के बल से ब्राह्मणि देवानन्द के गर्भ में स्थित भगवान महावीर को उत्तर फल्गुनि नक्षत्र में क्षत्राणी त्रिशाला के गर्भ में रख देता है ।

### 3. INDRA ON THE HORNS OF A DILEMMA: RESOLUTION

Having been blessed with the sight of Shramana Bhagawan Mahavira, then growing in the womb of the Brahmani Devananda, Indra suddenly found himself on the horns of a dilemma. So far, all the 23 Tirthankaras that had incarnated were born in Kshatriya families that enjoyed pomp and luxury before relinquishing these things, and taking to the vow of monkhood - but then this 24<sup>th</sup> Thirthanka, Sharmana Bhagawan Mahavira would be born in a Brahmin family (then proverbial for poverty) - which seemed to be a deviation from the precedent - so Indra was resolved in his mind to set this anomaly right. He called forth his Commander in Chief, Harinegameshi and ordered him to transfer the foetal Shramana Bhagawan Mahavira from the womb of Brahmani Devananda into that of Rani Trishla Devi, wife of Siddartha, the ruler of Kshatriyakawa (Videha Kingdom). In obedience to this order Harinegameshi transferred the foetal Mahavira into the womb of Rani Thrishla as aforementioned, when the auspicious Star Uttaraphalguni was ruling the Horoscope. Thus Bhagwan Mahavira was transferred from the Brahmani's womb into that of a Kshatriya woman.

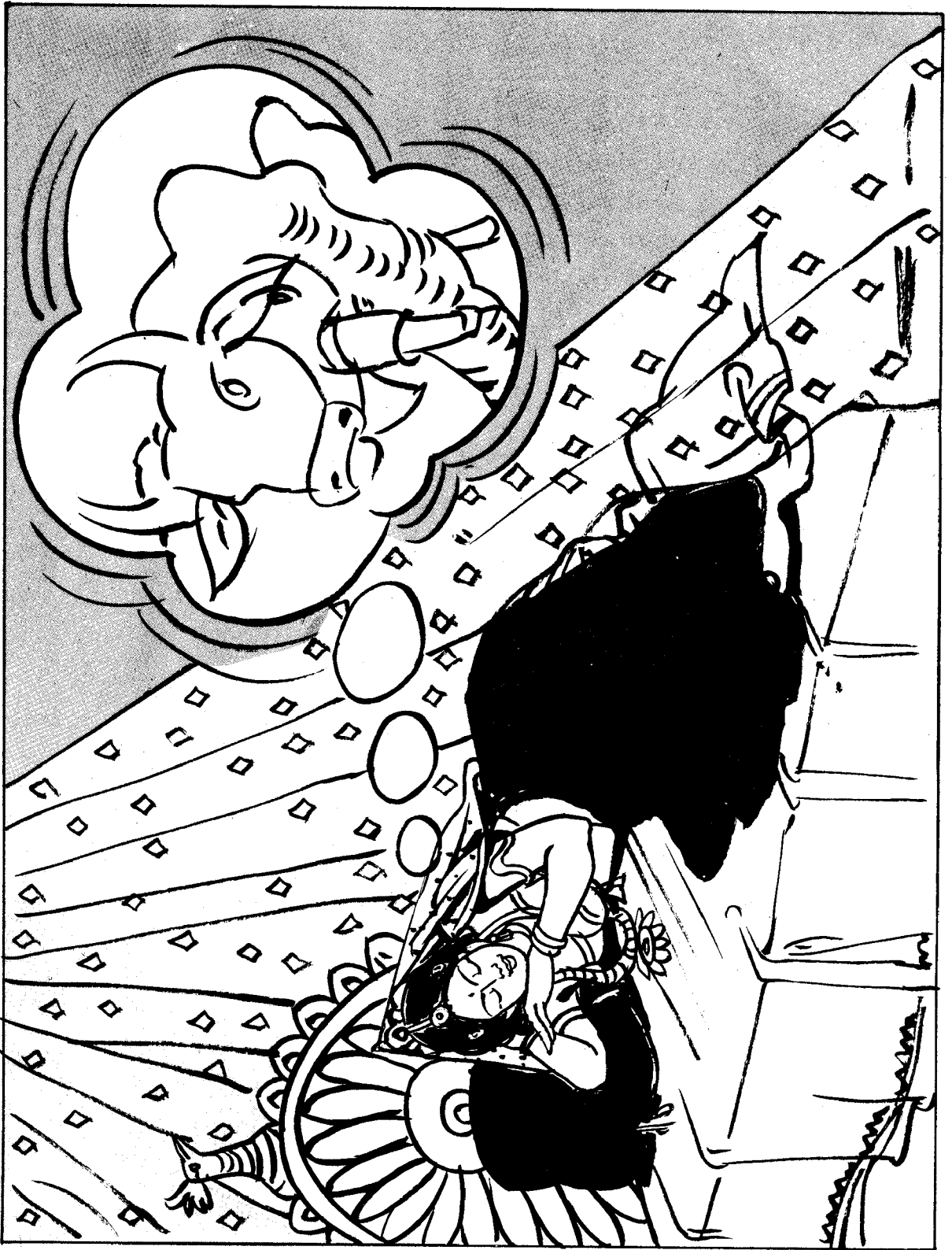


## 4. क्षत्रियकुन्द

वह विदेह राज्य का क्षत्रिय कुन्द नामक नगर है। उसका पालन राजा सिद्धार्थ करता था। वह बड़ा नियमशील दयालु एवं दानशील था। वह अपनी प्रजा का पालन निज सन्तान की भान्ति करने में कोई कमी नहीं होने देता था। उसकी पत्नी का नाम त्रिशाला था। वह बहुत बड़ी पतिव्रता थी। पुत्र के रूप में भगवान महावीर होने से पहले उनको नन्दिवर्द्धन नामक एक पुत्र और सुदर्शना नामक एक पुत्री थी। अब इन्द्र की कृपा की वजह से श्रमण भगवान महावीर को उसने गर्भ में धारण किया।

## 4 KSHATRIYA KUNDA

Kshatriya Kunda was actually in the Kingdom of Videha and its ruler King Siddhartha was a man of rectitude, kindness and charity. He was a ruler devoted to the securing of the welfare of the people. His wife Trishala was a very gentlewoman much devoted to her noble husband. Prior to the conceiving of Mahavira by Rani Trishala two children had already been born to the couple - a son Nandivardhana and a daughter Sudarshana. Thanks to the divine will and grace of Indra this queen Trishala conceived Shramana Bhagwan Mahavira - a pious surrogate mother she may be called.



## 5. दिव्यानुभूति

श्रमण भगवान महावीर को गर्भ में धारण करने के पश्चात राणी त्रिशाला ने उसी दिन से दिव्यानुभूतियाँ पाना शुरू किया। उस रात को अपने शयन मन्दिर में सोई हुई त्रिशाला को १४ दिव्य स्वप्न दिखाई दिये।

### 5 A BLISSFUL AND HOLY EXPERIENCE

From the moment she began to carry Shramana Bhagwan Mahavira in her womb queen **Trishala** started experiencing holy, blissful feelings. This Kshatriya queen was blessed with 14 divine dreams while sleeping on her bed of down in her private chamber.





## 6. इन्द्र का ऐरावत

इन्द्र का सफेद रंग वाला ऐरावत (हाथी) बादलों के बीच में अद्भुत ढंग से दिखायी दिया ।

## 6 AIRAVATA, THE VEHICLE OF INDRA

The queen saw in her dream Airavata, the great elephant travelling in the clouds.

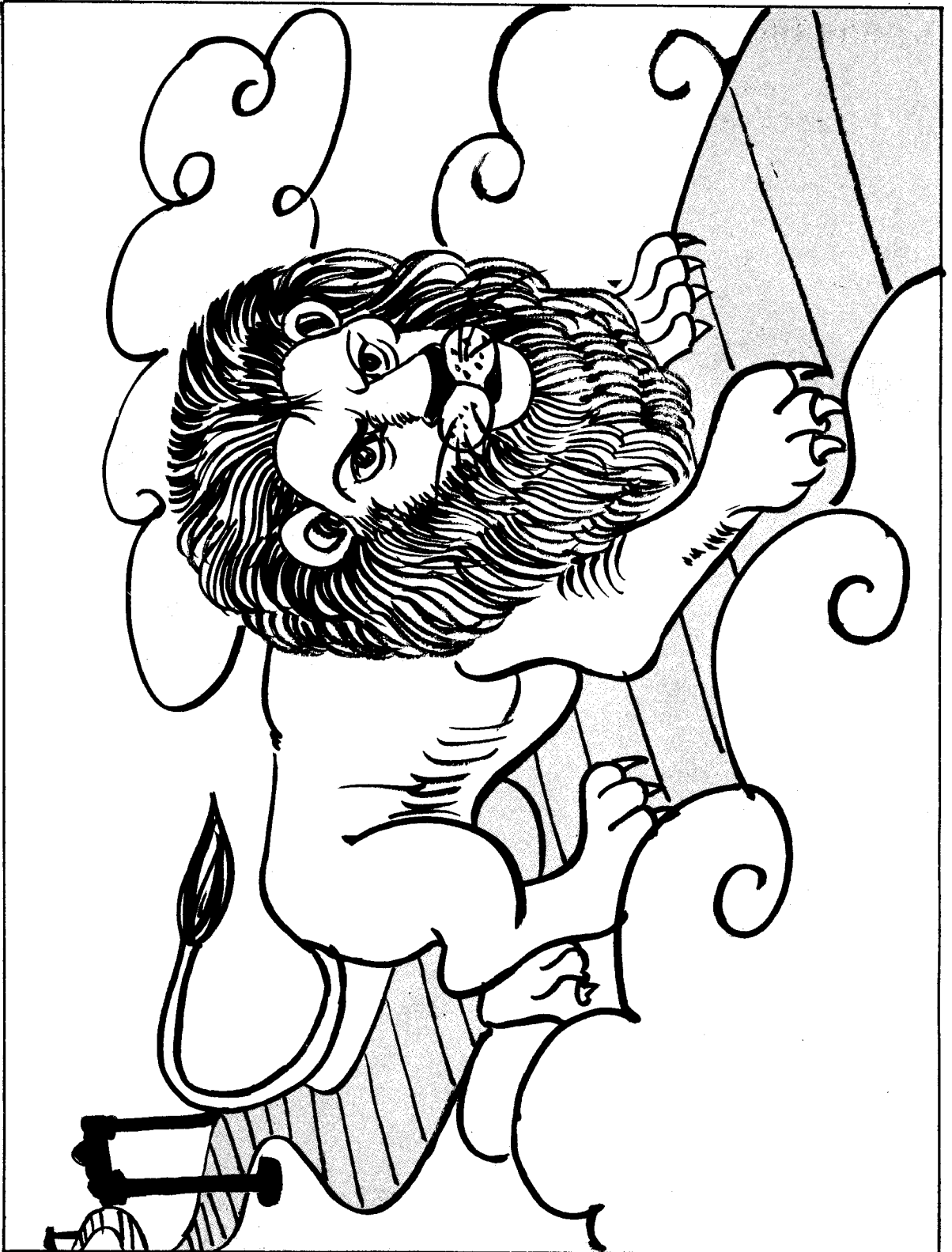


## 7. वृषभ (बैल)

गंभीर ककुदे से युक्त सफेद रंग का सुन्दर वृषभ दिखाई पड़ा ।

## 7 THE BULL

Queen **Trishala** saw, in the next dream, a royal, white bull with a magnificent hump.



## 8. सिंह

सुन्दर (केसर) से युक्त, आँखों को चकाचौंध करने वाला सुनहरा रंगवाला सिंह (शेर) दिखाई पड़ा ।

## 8 THE KING OF BEASTS

The queen next saw in her dream a majestic lion endowed with a luxuriant mane and characterised by a dazzling golden complexion.



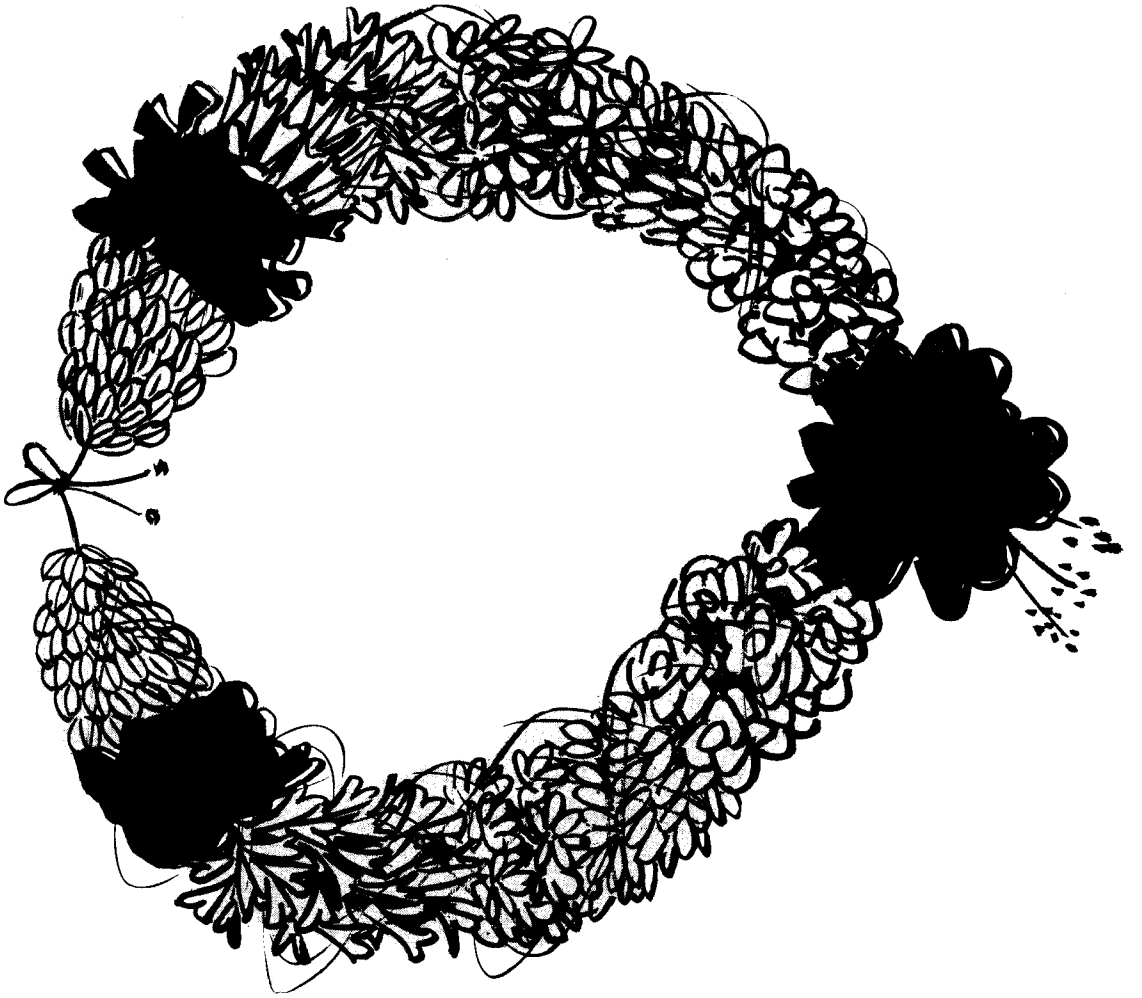
## 9. श्री लक्ष्मी

सम्पत्तियों की अधिष्ठात्री श्री लक्ष्मी दृष्टिगोचर हुई जिस के दोनों तरफ दो सुन्दर हाथी फूल-मालाएँ था में खड़े हुए और देवगण ऊपर से पुष्प-वृष्टि करते हुए दिखाई पड़े।

## 9 SRI LAKSHMI

Queen **Trishala** now saw in her dream Sri Lakshmi, the presiding deity of wealth. Two royal elephants flanked the Goddess and, lifting their majestic trunks, not only held up floral garlands, but also rained flowers of all hues upon her.



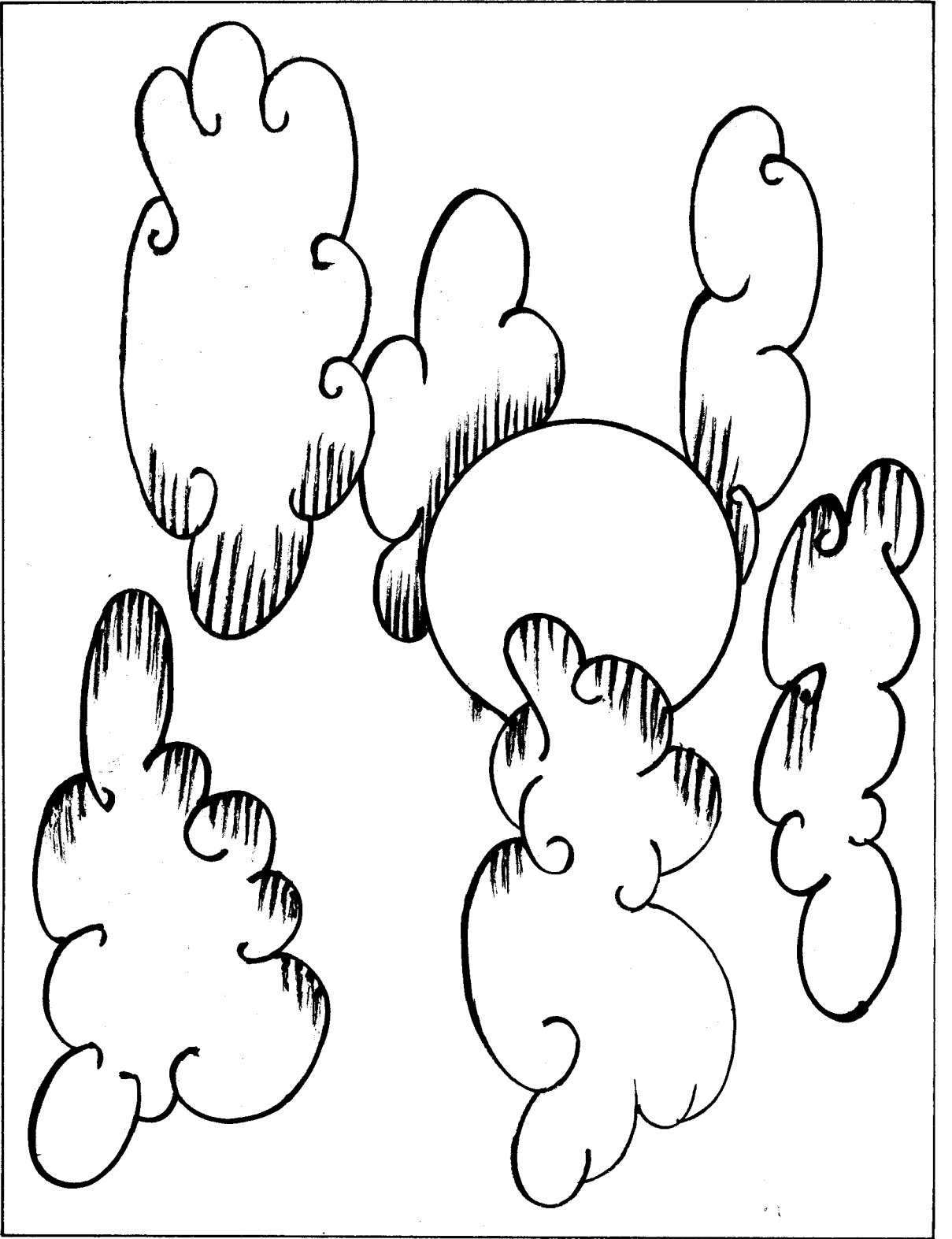


## 10. मन्दार

विविध प्रकार के सुन्दर फूलों से गूँथा गया मन्दारों (स्वर्ग के देव वृक्ष के फूलों) का गुच्छ दिखाई पड़ा।

## 10 HIBISCUS

Queen Trishala saw in her dream a divinely beautiful Hibiscus flower set as the crown piece of a fragrant bouquet composed of different exotic flowers. [The Divine Hibiscus is one of the five chief plants in the Celestial Garden of Indra].

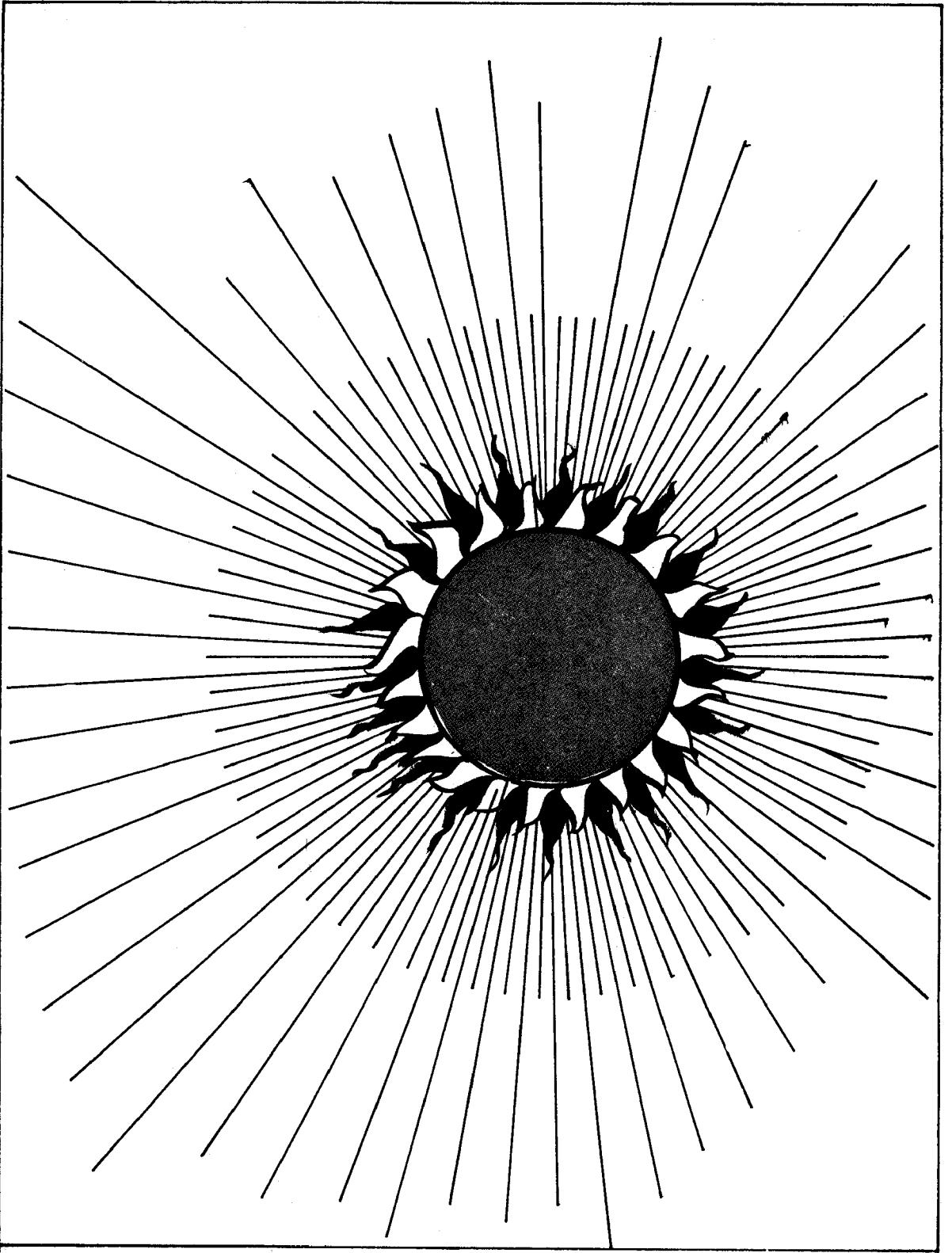


## 11. चन्द्रमा

धवल और बहुत ही अधिक मनोहर पूर्णिमा का चन्द्रमा दृष्टि गत हुआ ।

## 11 THE MOON

In her next dream queen Trishala saw the cool and radiant picture of the full moon.

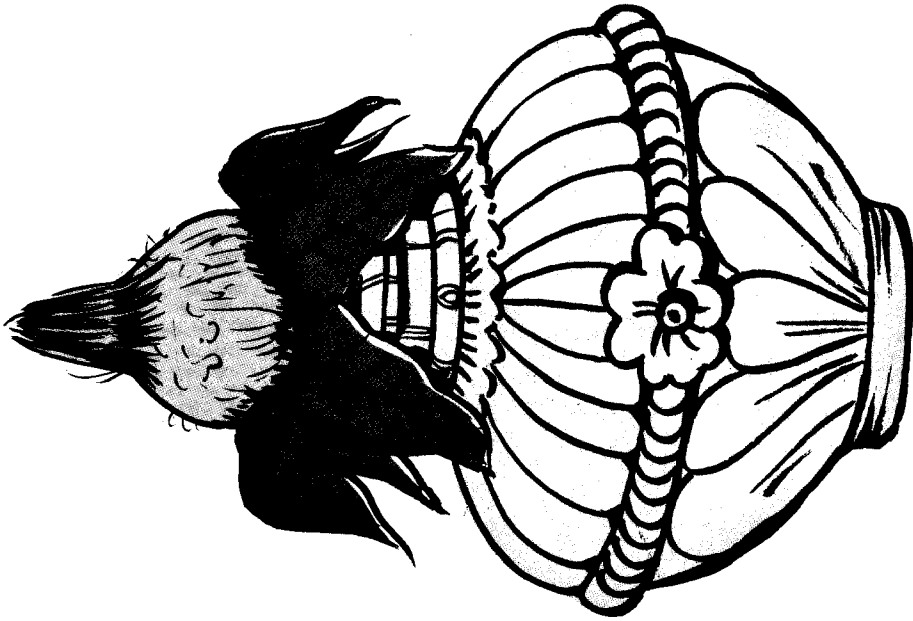


## 12. सूरज

अरुण-वर्ण लाल रंग से जगमगाता हुआ - प्रकाश मान सूरज नज़र आया ।

## 12 THE SUN

Queen Trishala saw in her next dream the Sun God shining forth in the orange colour of his rising phase.



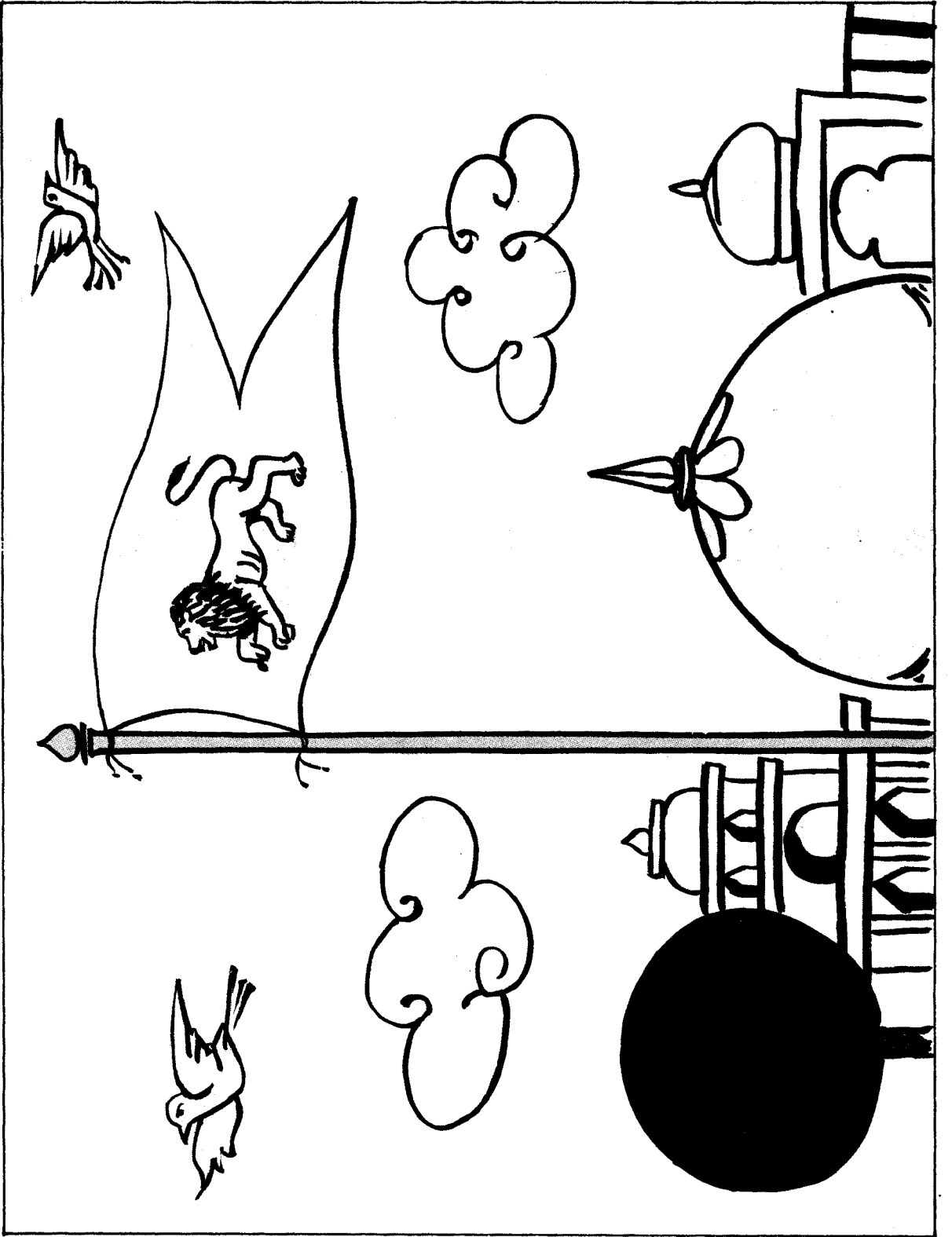
## 13. कलश

सभी शुभों के चिह्नों से अंकित पवित्र-जल से भरा और कमल के फूलों से सुसज्जित कलश नज़र आया ।

## 13 THE HOLY VESSEL

In her next dream the Queen was endowed with the vision of a beautiful ornamental vessel decorated with lotus flowers and containing holy water in it.



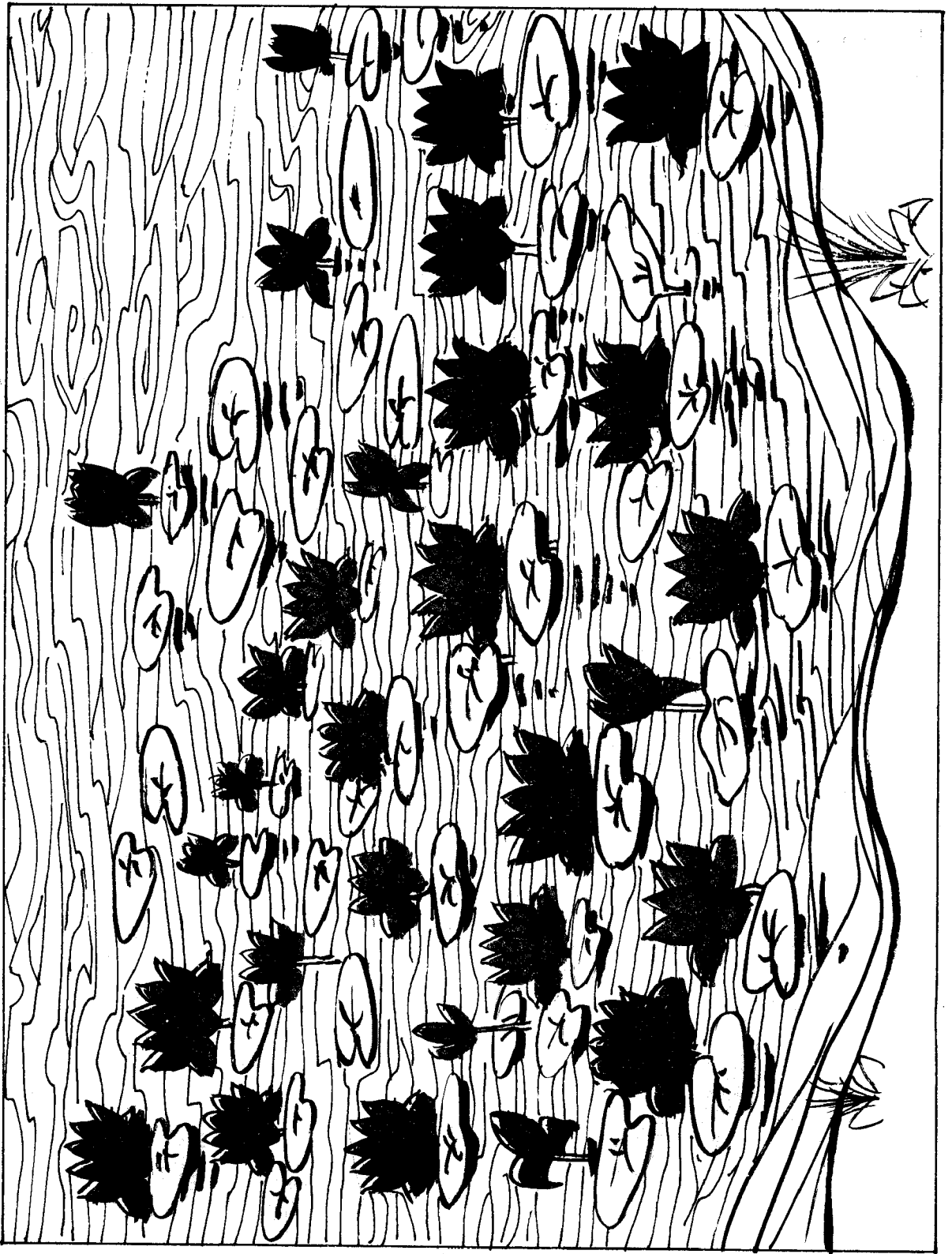


## 14. पताका (झण्डा)

हवा में ऊँची उड़ती हुई सिंह की छाप वाली विजय-पताका देखने में आयी ।

## 14 THE ENSIGN

The next dream of the queen brought forth the vision of an ensign, with the symbol of the Lion, fluttering majestically high in the air.

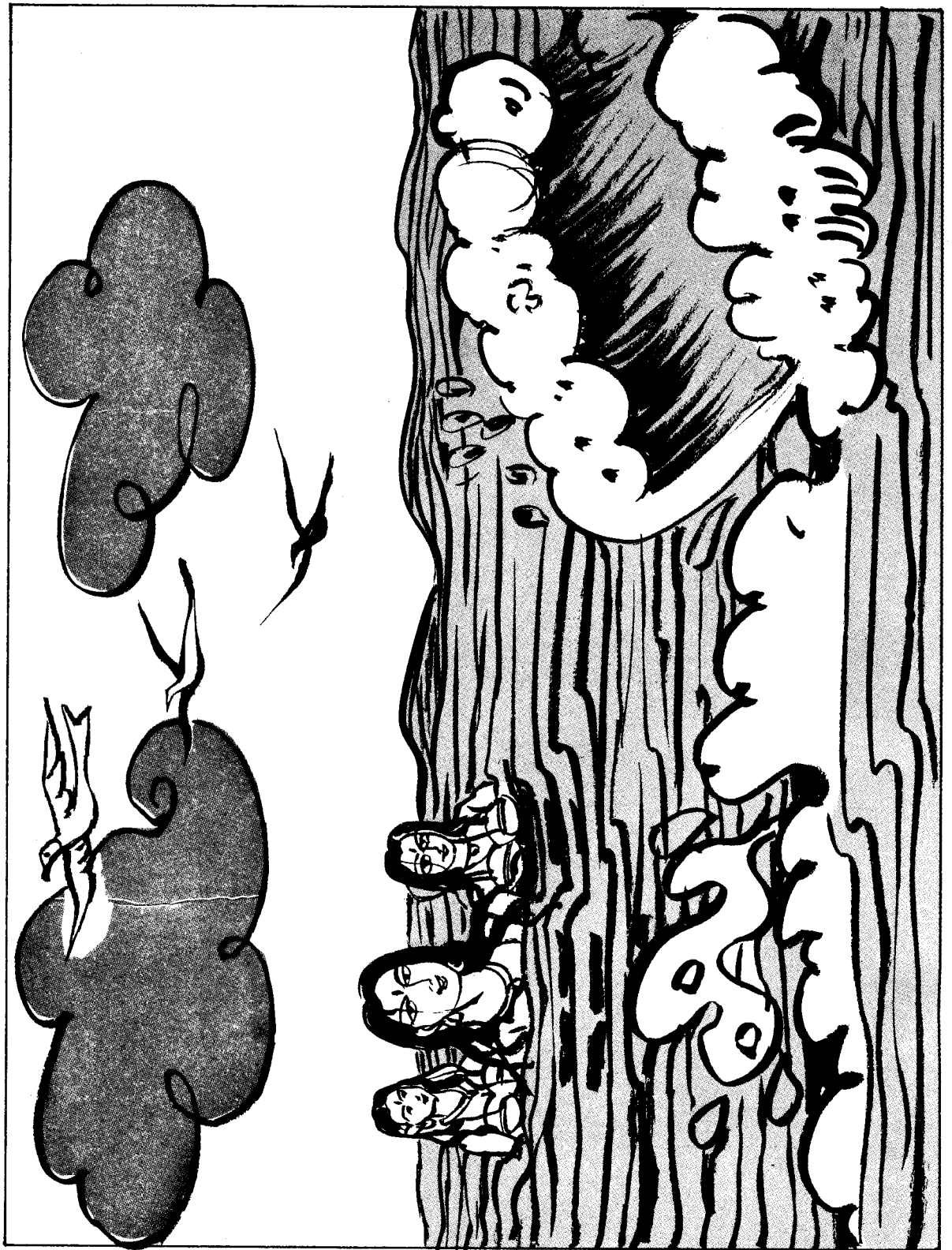


## 15. सरोज-सरोवर

अगणित कमल के फूलों से भरा हुआ विशाल सरोवर ।

## 15 THE LOTUS POND

The queen next saw in her dream a beautiful and broad pond where innumerable lotuses were in full bloom

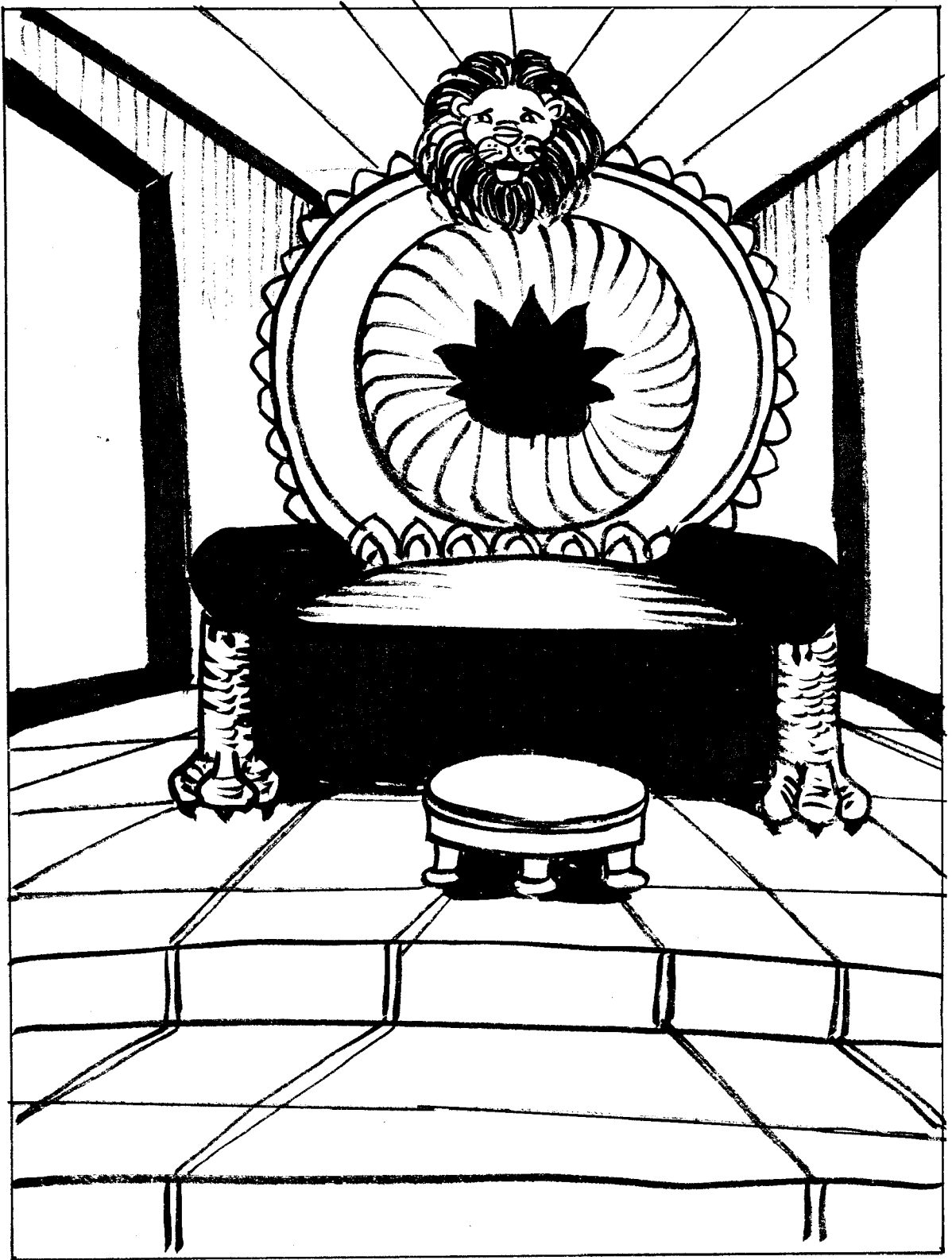


## 16. क्षीर-सागर

ऊँची उठी हुई लहरों (तरंगों) से युक्त देवताओं का प्रेम-भाजन क्षीर समुद्र ।

## 16 THE OCEAN OF MILK

The next vision that the queen saw was that of the Ocean of Milk so dear to the Gods. The waves of the ocean were rising high.



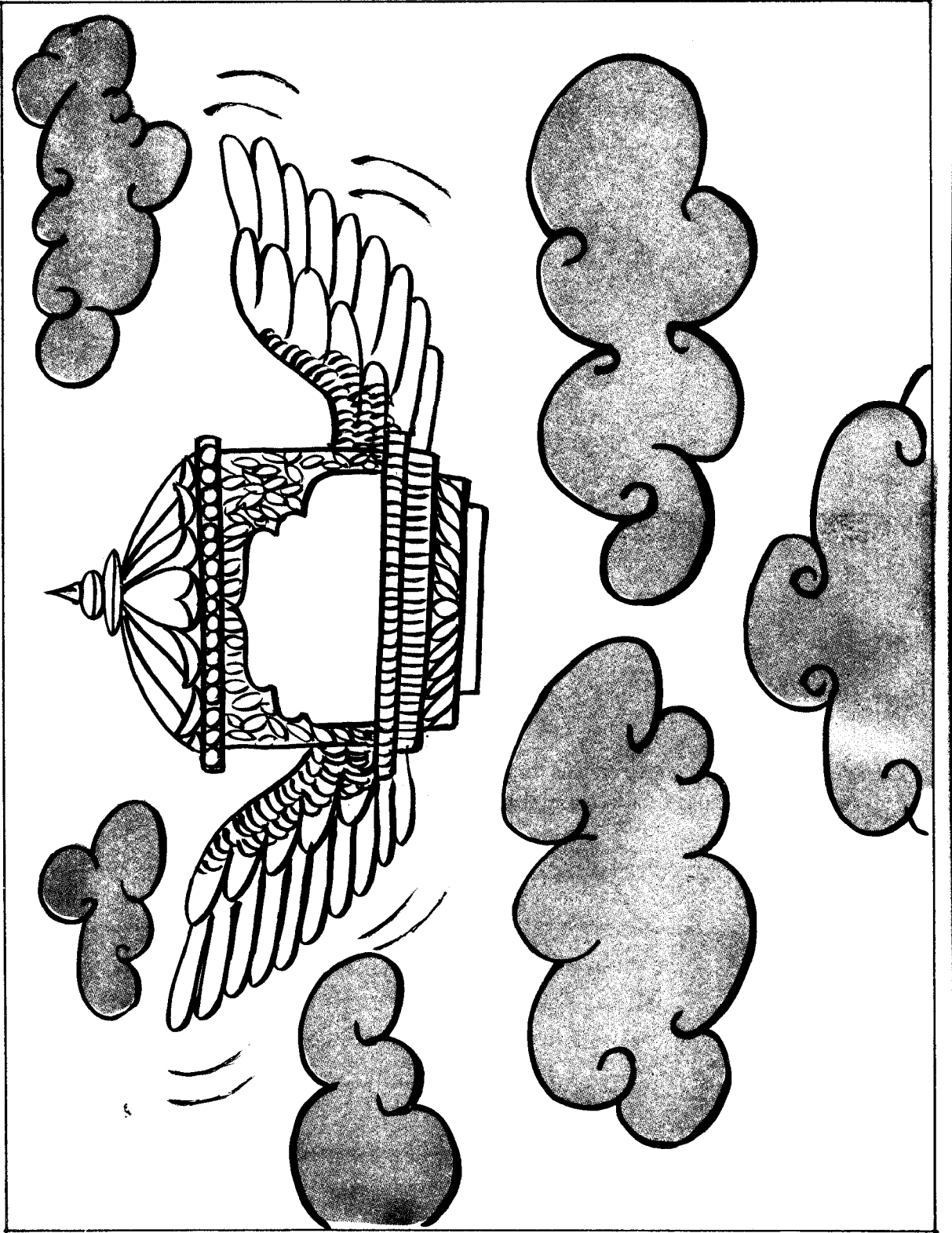
## 17. सिंहासन

ऊँचा, बहुत बड़ा और विस्तृत तथा सब तरह के अलंकारों से सुसज्जित सिंह की छाप वाला सिंहासन देखने में आया ।

## 17 THE THRONE

The next dream of the Queen was that of a lofty, broad and fully decorated Throne with the legs simulating those of a lion and the top the head of the same majestic lion.



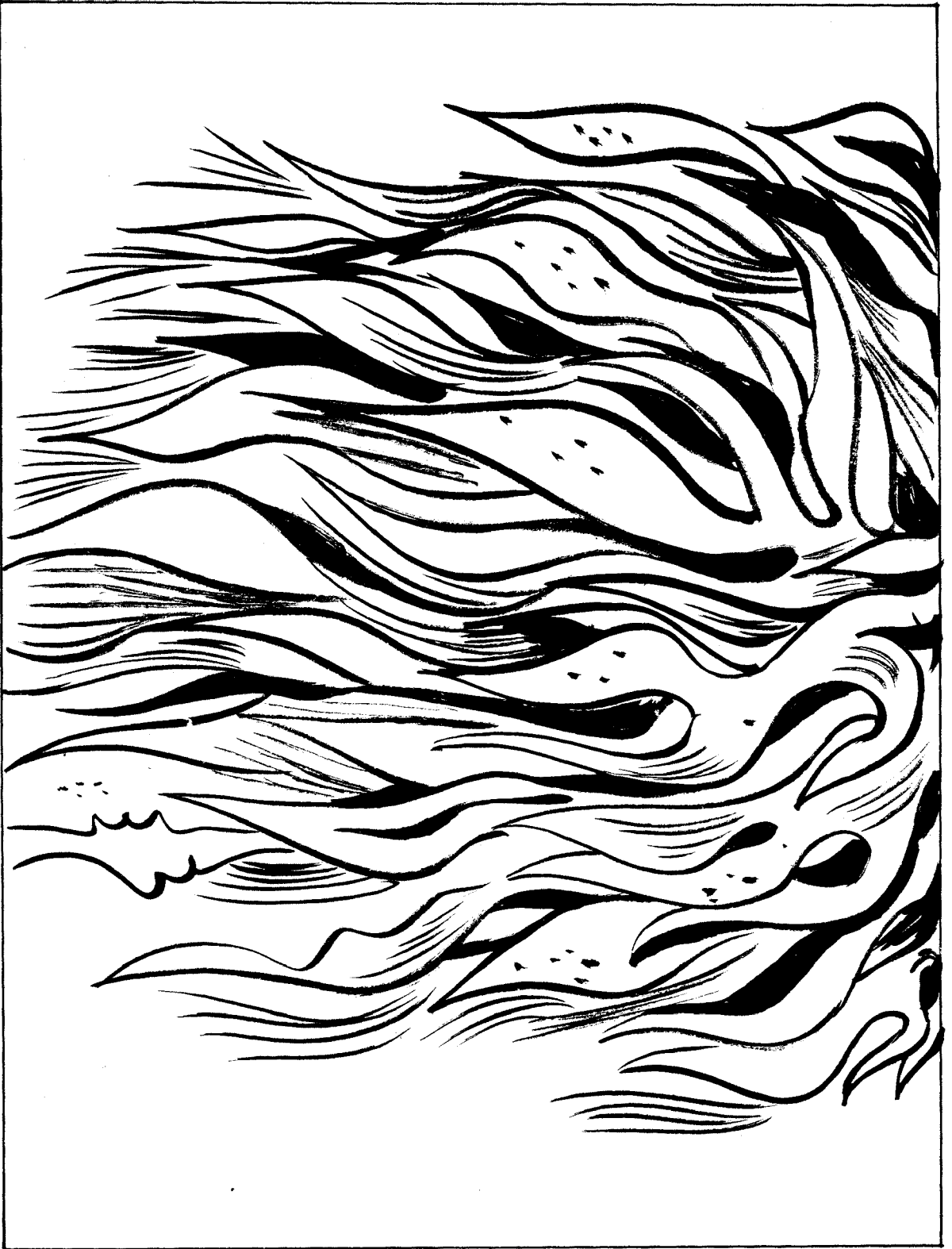


## 18. पुष्पक विमान

अपरिमित सुविधाओं से सम्पन्न दिव्य-पुष्पक विमान

## 18 THE CELESTIAL PLANE

In her next dream Queen Trishala saw a beautiful celestial plane.

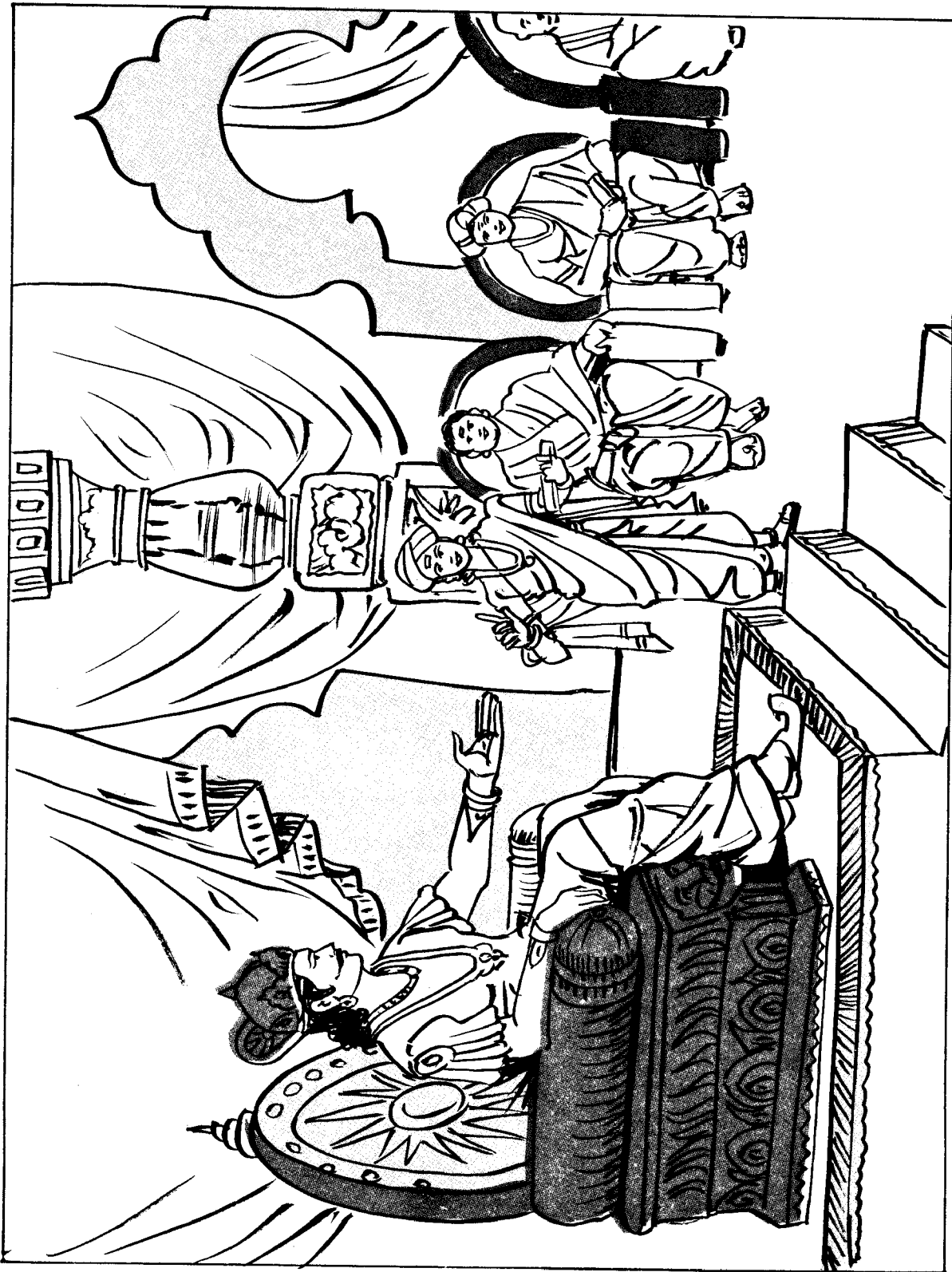


## 19. अग्नि

अत्यन्त प्रकाश-पूर्ण सुनहरे रंग की धूमरहित ज्वाला ।

## 19 THE FLAME

The next dream showed a very bright and smokeless golden flame of fire.



## 20. स्वप्न प्रस्तावना की शुभ सूचना ।

राणी त्रिशाला ने जो स्वप्न देखा था उसके बारे में राजा सिद्धार्थ ने अपने दरबारी ज्योतिषियों को बताया । उन ज्योतिषियों ने ज्योतिष ग्रंथों की छान-बीन करके स्वप्न के फलों का यह विवरण बताया कि राजा को शुभ होनेवाला है, उन्हें बहुत उत्कृष्ट पुत्र पैदा होने वाला है, वह बालक दिन-दिन प्रवर्द्धित होकर आध्यात्मिक जीवन में ऊँचे शिखरों पर पहुँचेगा ।

### 20 THE OMEN OF DREAMS :- AUSPICIOUS

When Queen Trishala narrated the news of her dreams to King Siddhartha, he had his court dream-readers summoned and related to them the fact of his queen's dream. The astrologers studied the signification and informed the king that he was going to be blessed with a son destined to be a very great individual. The dreams were indicative of a holy and auspicious future. They also foretold that the boy would grow up steadily and would gradually scale peaks of nobility in the realm of the spirit (spirituality).



## 21. श्रमण भगवान महावीर का जन्म

ज्योतिषियों के पूर्वानुमान के अनुसार, राजा सिद्धार्थ को क्षत्रियाणीकी पत्नी त्रिशाला देवी का उत्तर फल्गुणि नक्षत्र में चैत्रशुद्ध त्रयोदशी में भगवान का जन्म हुआ। जिस दिन से क्षत्रियाणी त्रिशाला ने गर्भ धारण किया उस दिन से वह राज्य और भी समृद्ध होकर सुशोभित होने लगा, दिन-प्रति दिन सुख तथा शान्ति और अमन चैन के स्थिर रहने की वजह से तथा राज्य में किसी भी तरह का अकाल न पड़ने के कारण उस बालक का नाम श्री वर्द्धमान रखा गया। स्वर्ग में देवताओं की दुन्दुभियाँ बज उठीं। देवताओं ने फूलों की वर्षा बरसाई।

## 21 THE BIRTH OF SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA

As foretold by the astrologers, Bhagawan Mahavira was born to the royal parents - King Siddhartha and Queen Trishala in the month of Chaitra (the first one in the calendar) with the auspicious Uttara Phalguni for the birth star. When the holy baby was born the Kingdom was enjoying the height of prosperity, since, from the moment of the queen's conceiving (by the transfer of the holy fetus Mahavira) things began to turn more and more auspicious and prosperous in the kingdom of Videha. The fact of the growing prosperity of the kingdom led to the naming of the holy child as "Vardhamana" :- on this occasion the whole universe was flushed with joy and the Gods not only rained down flowers on the earth but also beat their drums of joy.



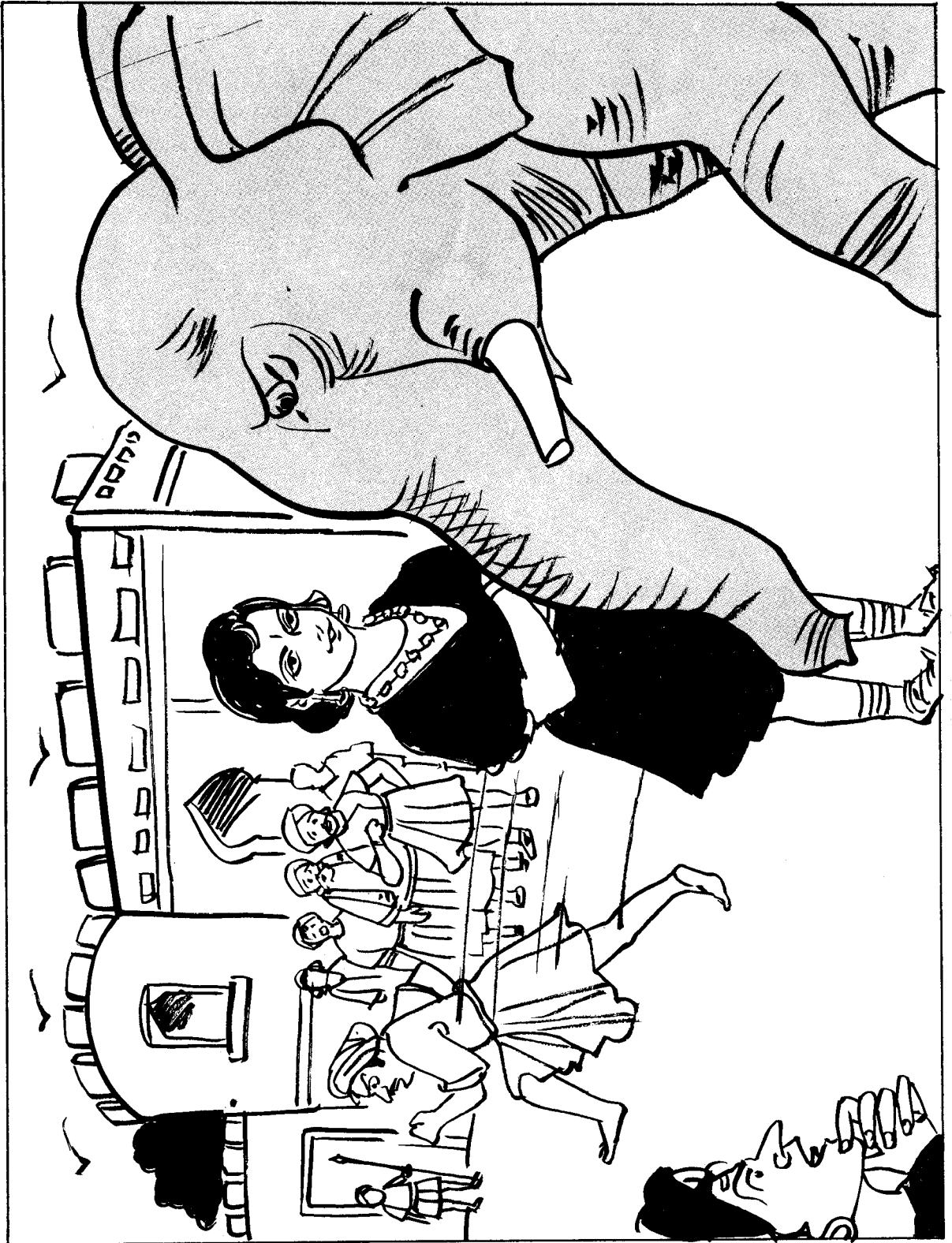


## 22. आँवले (आमलक) के पेड़ पर खेल ।

श्री वर्द्धमान सब का प्रेम-भाजन होकर लाड़-प्यार से बढ़ रहा था । वह अपनी आठवीं साल की उम्र में अपने मित्रों के साथ आँवले के पेड़ पर चढ़कर खेल रहा था । उस समय एक डरावना साँप उस पेड़ पर लिपट गया । शेष बालक डर के मारे काँप गये पर वर्द्धमान ने विचलित हुए बिना उस साँप को अनायास पकड़ कर एक तरफ फेंक दिया । शेष बालकों को अचरज हुआ । यह उनकी हिम्मत का प्रतीक है ।

## 22 PLAYING ON THE AMALAKA TREE

From the moment he was born, Shri Vardhamana was the apple of the eye not only of the parents but also of all those around. Once, in his eighth year, Vardhamana was playing on an Amalaka tree along with his friends, when a terrible serpent coiled itself around the trunk. When the rest of the children were quaking with fear, Vardhamana caught hold of the serpent effortlessly and threw it away to a great distance. The other children were filled with surprise at this act of bravery on the part of Mahavira, who was only a small boy then.

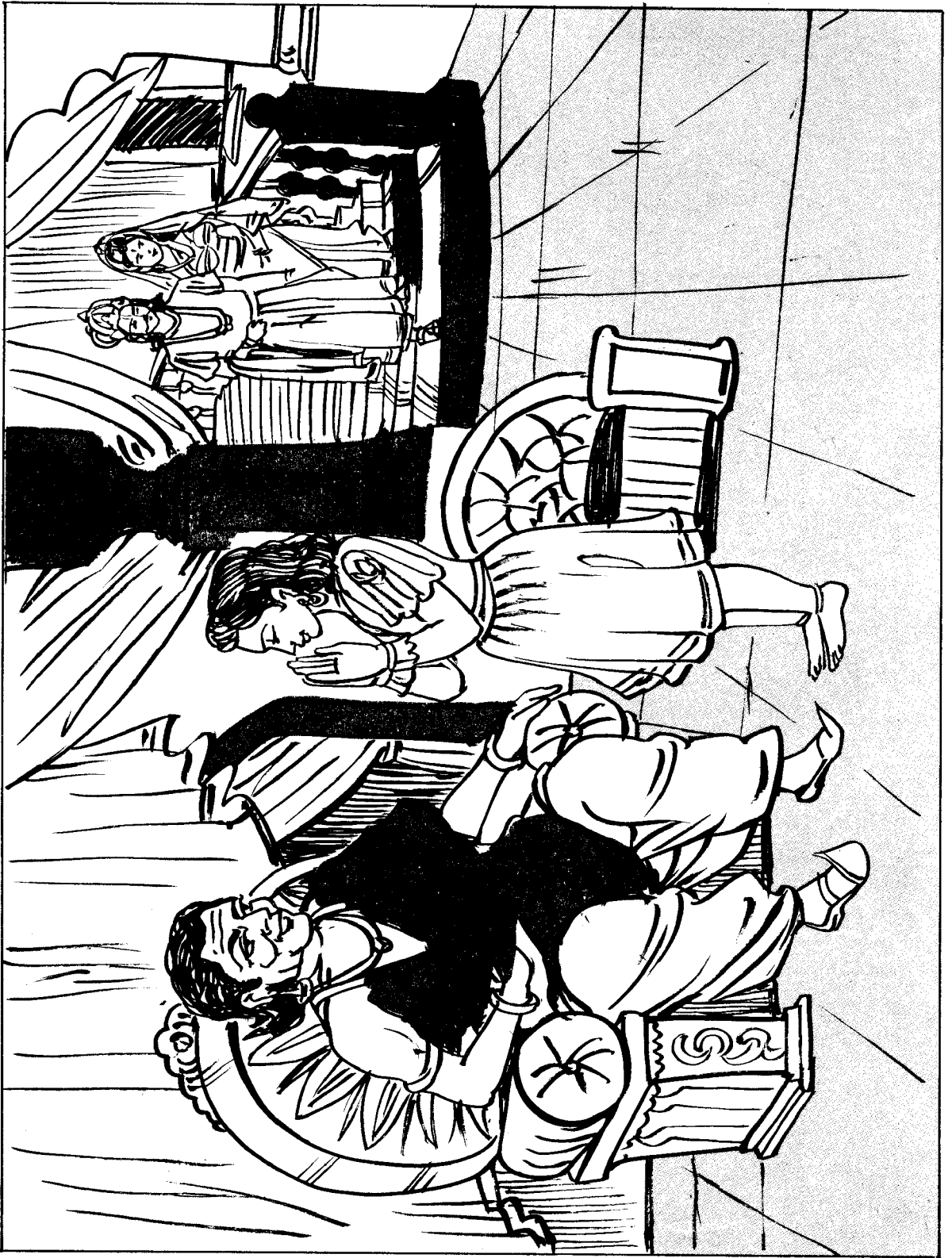


## 23. मदमत्त-मातंग का गर्व भंग ।

एक और अवसर पर जब कि श्री वर्द्धमान राज-पथ पर चल रहे थे, एक मदगज जंजीर तोड़कर यथेच्छ रास्ते पर चल पड़ा । इधर-उधर लोग भाग खड़े होने लगे । तब श्री वर्द्धमान गंभीर रूप से हाथ बाँधकर उस हाथी के सामने खड़े । उनकी आँखों में निर्भीकता और प्रशान्तता को देखकर उस हाथी ने उनके चरणों पर अपना मस्तक झुकाया । भविष्य में यथेच्छाचारी मद-मत्त-मातंग से भी अधिक भयावनी मानसिक दुर्बलताओं को भी वशा दर्बलताओं को भी वश में लाने की गंभीरता उनमें बचपन से ही दिखाई पड़ी ।

## 23 A MIGHTY ELEPHANT HUMBLLED

On another occasion while, Vardhamana was walking along the Boulevard, an elephant in rut ran in his direction after breaking its chains. At this sight all the wayfarers ran helter skelter, while Shri Vardhamana stood his ground folding his arms around his chest and fearlessly facing the on rushing mad elephant. The elephant which was thus running amok saw the determination, fearlessness and the reprimanding look in the eyes of Mahavira and then knelt before him in submission. This incident was indicative of the deftness with which Mahavira was going to conquer various infirmities of man which are more uncontrollable than the wild behaviour of an elephant running amok; thus the seeds of future greatness were cast early in the life of Mahavira.

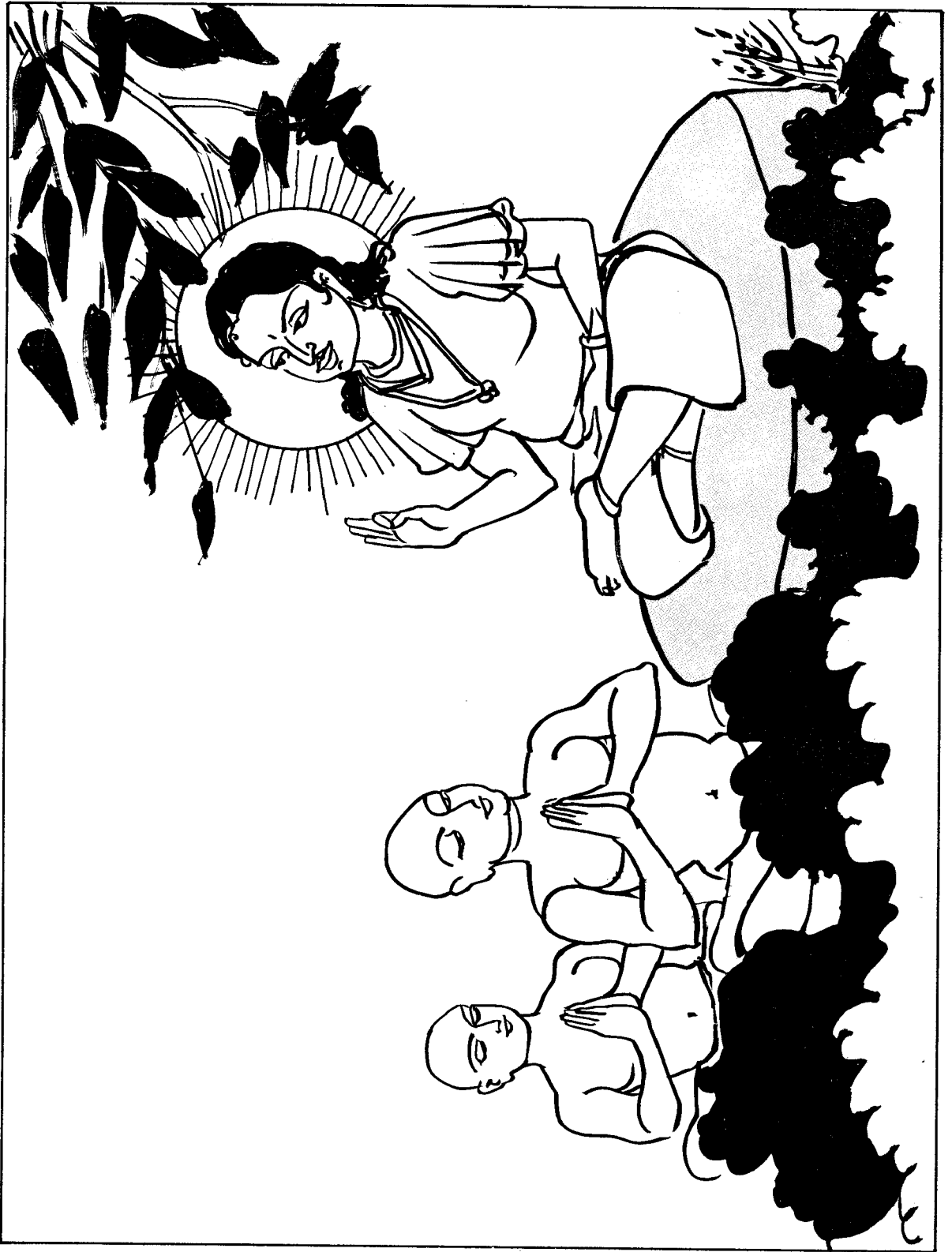


## 24. विद्याभ्यास - आत्म-विद्या

वर्द्धमान जन्म से ही लेकर बहुत बड़े ज्ञानि हैं। उनका, ज्ञान साधारण लौकिक के पार हो गया और उनको विद्याओं का सार समझ लेने की क्षमता नव वर्ष की आयु ले ही प्राप्त हो चुकी। इस बात से अनभिज्ञ होने के कारण उनके माता-पिता उन्हें एक ब्राह्मण के पास विद्या ग्रहण करने के लिये भेजा। उन गुरु जी ने वर्द्धमान की आत्म-विद्या-सम्बन्धी प्रतिभा को समझ लिया और आश्चर्य चकित हो गये। कितने ही जन्मों की परम्परा से प्राप्त उनकी ज्ञान-सम्पत्ति को गुरुजी ने अपनी दिव्य-दृष्टि से देखा और उन्हें मन में प्रणाम किया; फिर माता-पिता का विवरण-पूर्वक बताया कि श्री वर्द्धमान को इन सामान्य विद्याओं की आवश्यकता नहीं है।

## 24 EDUCATION – SELF-KNOWLEDGE

From his very birth Vardhamana was endowed with great wisdom. His wisdom transcended the mere knowledge of the ordinary worldly facts. Already by his 9<sup>th</sup> year Vardhamana was able to learn and master the most intricate points in his studies. The parents of Mahavira who were unaware of their son's greatness sent him to a Brahmin for the gathering of knowledge. The teacher was able to realise that Vardhamana was no ordinary child and that he was endowed with Atma (Jiva) Vidya or the Knowledge of the Self. The teacher was sure that Vardhamana's attainments were the result of a succession of previous births. The teacher understood the wealth of wisdom of Vardhamana after looking at it with his divine eyes. The teacher was so surprised that he bowed to Vardhamana in his mind and explained to his parents that Vardhamana did not need to be taught the items of material learning.



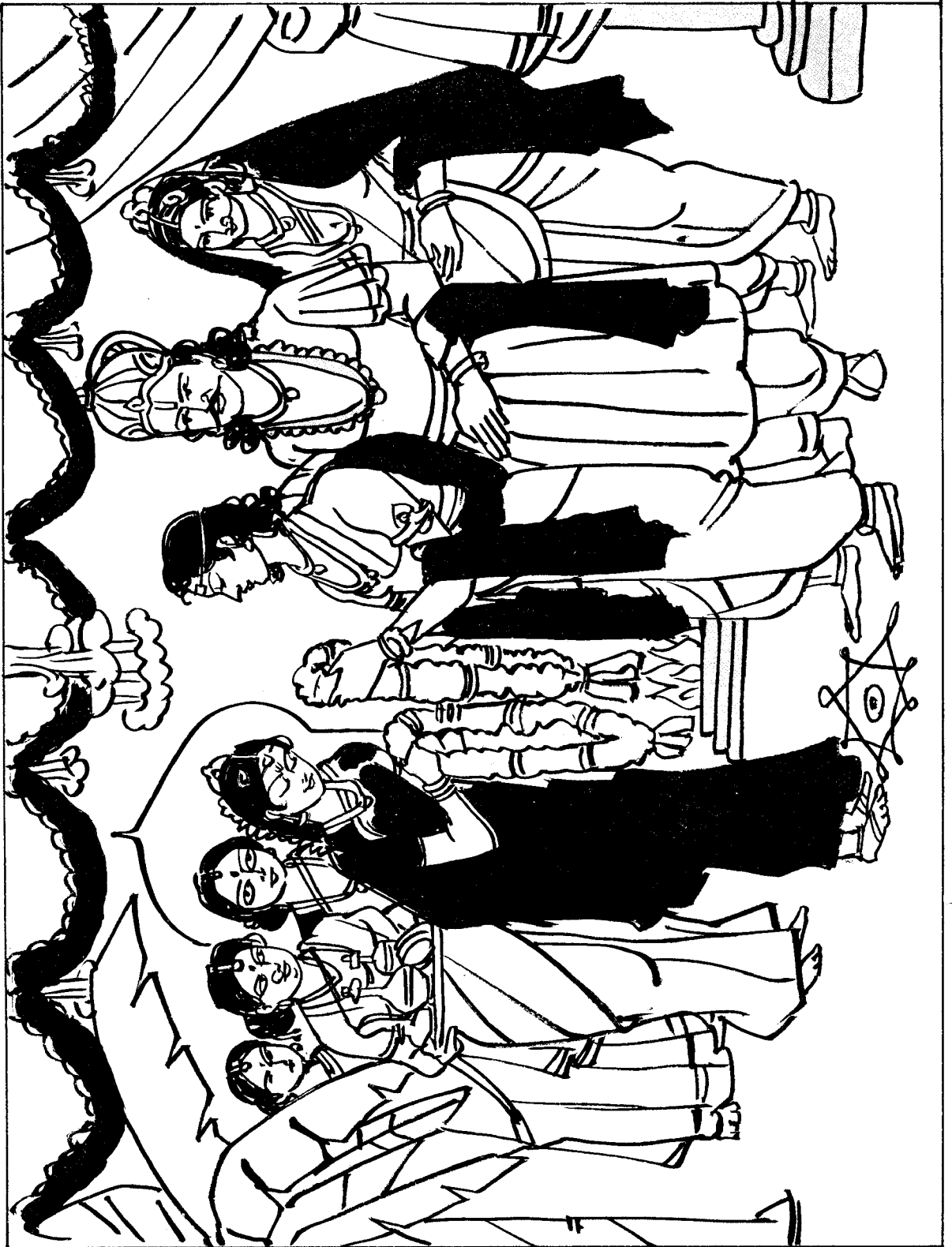
## 25. सन्मति

वह तीर्थंकर पार्श्वनाथ का युग था । ध्यानावस्था में रहते समय उनके शिष्य-संजय और विजय को क्षत्रिय कुण्ड में बढ़ते हुए वर्द्धमान का रूप दिखाई देता है । तुरन्त उन्होंने वायु-मार्ग से प्रस्थान करके वर्द्धमान के दर्शन किये । वर्द्धमान ने अपनी एकमात्र दृष्टि से ही उनकी आध्यात्मिक शंकाओं का निवारण कर दिया । उन्होंने अचानक “सन्मति” कहकर उनकी (वर्द्धमान की) स्तुति की ।

### 25 SANMATI (ONE ENDOWED WITH TRUTHFUL MIND)

That was the age of Parshvanatha, the 23<sup>rd</sup> Tirthankara. His disciples Sanjaya and Vijaya were in deep meditation, when they were blessed with a vision of Shri Vardhamana growing up in Kshatriyakund. They immediately set forth on their journey and visited Vardhamana at the end. At the time of their visiting Vardhamana Sanjaya and Vijaya had certain doubts galling their minds. With a single look at them Shri Vardhamana was able to resolve the doubts in the minds of the visitors. Then quite spontaneously the word “Sanmati” escaped their lips in praise of Vardhamana’s prescient capability. From then on Sanmati has been one of his titles.



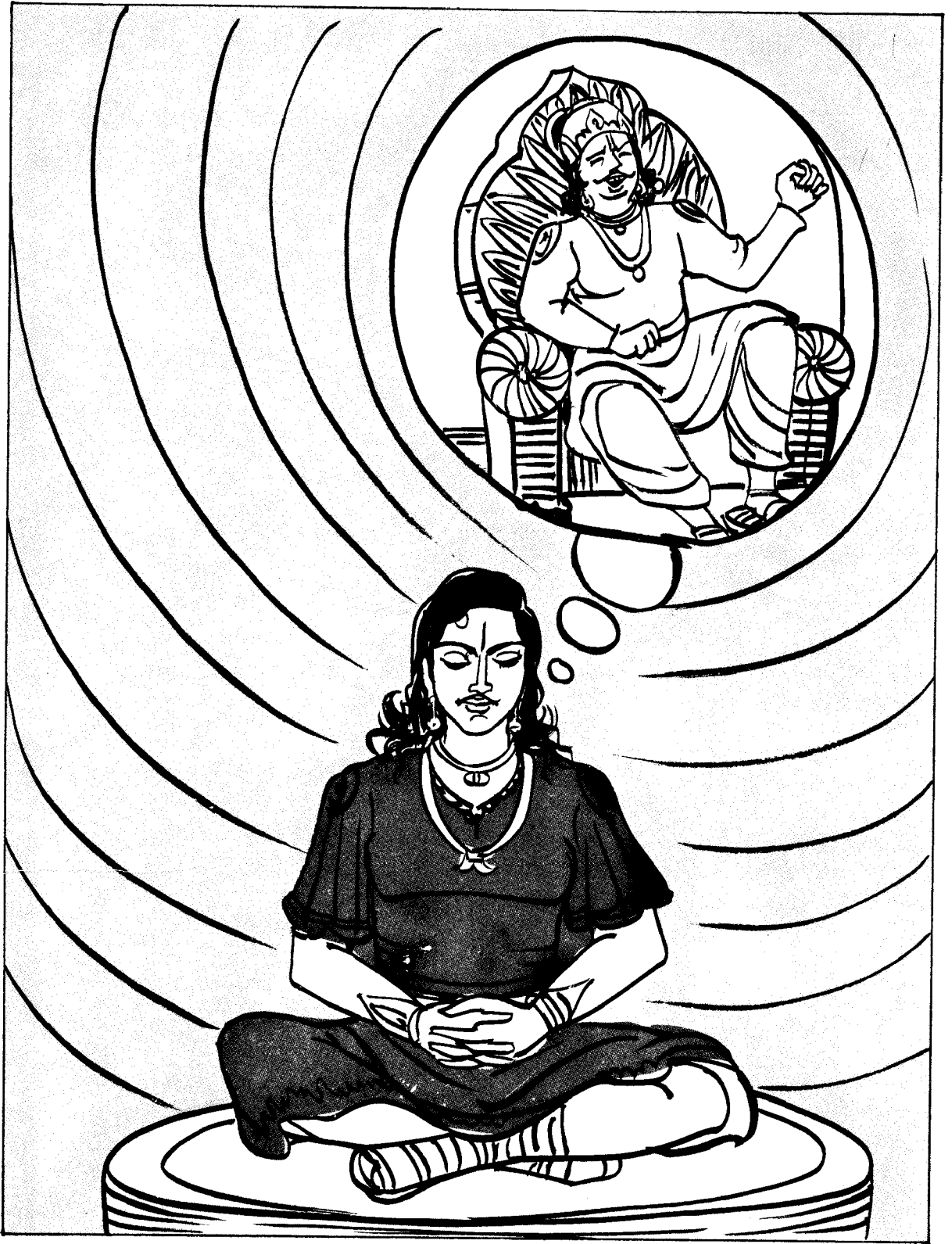


## 26. विवाह

बचपन से श्री वर्द्धमान वैराग्य जीवन के प्रति उन्मुख रहे थे; अतः उनको वैवाहिक जीवन पर प्रीति नहीं थी। फिर भी यवनकाल के प्राप्त होने पर, माता-पिता की बात मान कर उन्होंने कलिंग राज्य के राजा जित-शत्रु की पुत्री यशोदा से विवाह किया। इन्हे प्रियदर्शना नाम की पुत्रिका हुई।

## 26 MARRIAGE

From his early childhood Vardhamana was reluctant to enjoy material pleasures; so, he never wanted to lead a married life. However, he would not say no to the earnest desire of his parents and bowed to their aspirations. As a result of this act of filial obedience, Vardhamana had to marry Yashoda the daughter of Jitashatru the king of Kalinga. In due course, the couple were blessed with a daughter, Priyadarshana.



## 27. ध्यान का प्रथम सोपान पिछली जन्म परम्परा का ज्ञान ।

वैवाहिक जीवन के प्रति मोहग्रस्त न होनेवाले श्री वर्द्धमान अपने समय का दुरु-पयोग न कर, अन्तर्मुखी होकर ध्यान मुद्रा में अपनी पिछली जन्म परम्परा और कर्म-फल को देखने लगे ।

### 27 THE ACCUMULATED KNOWLEDGE OF A SERIES OF PASTBIRTHS THE FIRST STEP TO RENUNCIATION.

Married life had no attraction for, Bhagawan Vardhamana. He never wasted his time and turned his mind inwards and was always immersed in Dhyana (concentration of the mind) wherein he was able to see not only the series of his past births but also the various results of past Karma (the three kinds of actions, namely, mental, verbal and manual).

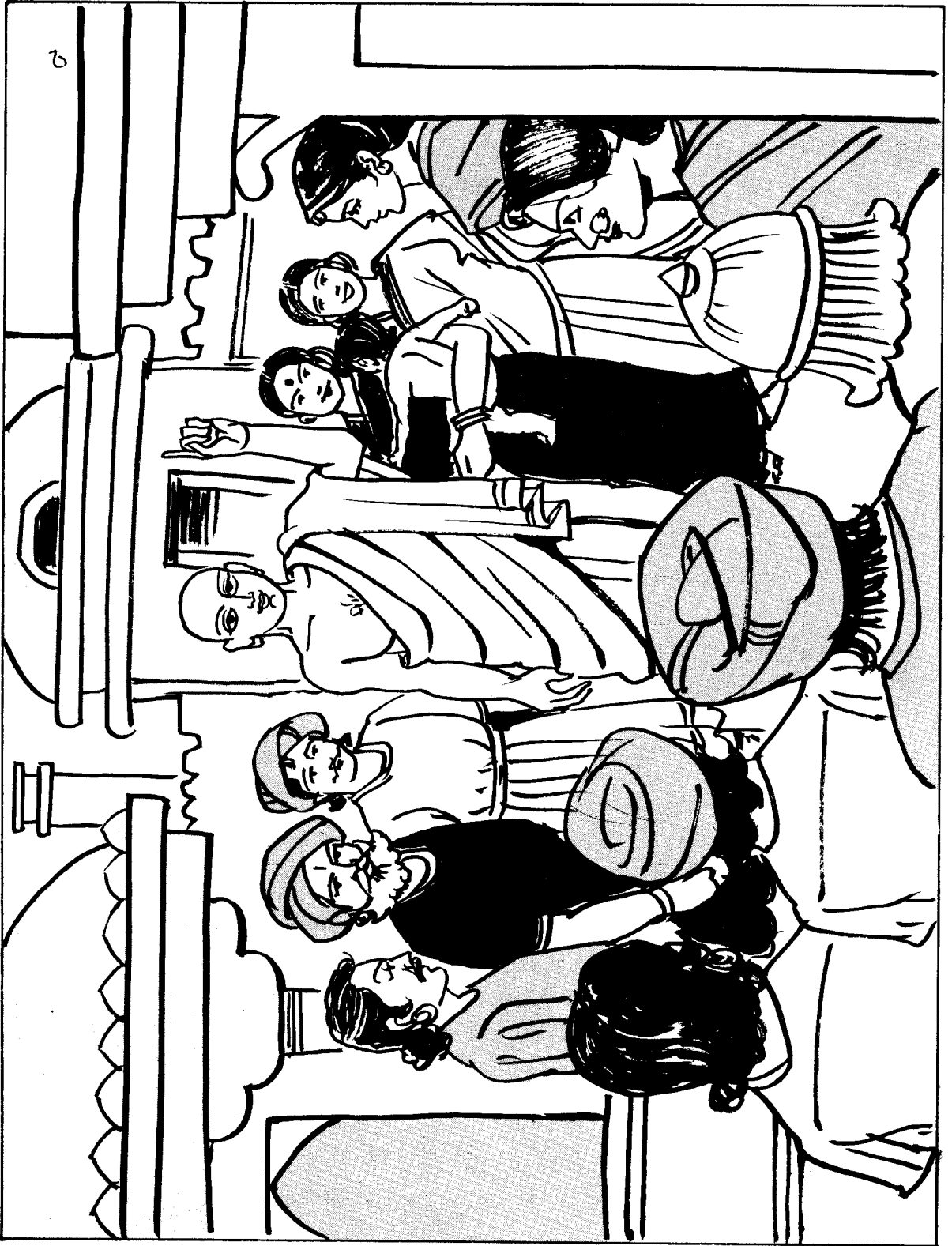


## 28. नयसार-भैतिक एवं देवत्व

जम्बू-द्वीप के पश्चिम में महाप्रवर राज्य में शत्रुमर्धन नामक राजा के यहाँ नयसार नामक अंगरक्षक रहता था । उसने एक बार राजा की आज्ञा के अनुसार जंगल में जाकर राज्य की जरूरतों के वास्ते लकड़ी राज्य में भेजते हुए अपने काम-काज को यथा रीति से निभाते हुए, उस जंगल में ही अपने को अतिथि के रूप में दर्शन देने वाले समुद्र सेन नामक जैन-मुनि और उनके शिष्यों को देखा । उन्हें बड़े भक्ति भाव से आतिथ्य किया । उनकी कृपा का पात्र बना । वह देहान्त होने पर सौधर्मकल्प नामक स्वर्ग में एक “पाल्योपाम” समय-पर्यन्त देवताओं का अतिथि बन कर रहा । फिर एक और जन्म लेने के लिये उतर कर आया ।

### 28 NAYASARA - PHYSICAL LIFE AND ASCENT TO HEAVEN (FIRST OF THE PREVIOUS LIVES)

In the Kingdom of Mahaprabhara lying to the west of Jambudvīpa, there served in the court of King Shatrumardana, a body guard by name Nayasara. Once, in obedience to the king's command, Nayasara went into the forest to bring timber for governmental purposes. While he was bringing the timber to the kingdom he was accosted on the way by a Jaina Monk by name Samudrasena. Then and there, Nayasara played host to the unexpected guest and his disciples with devotion and reverence. The Jaina muni was so pleased with the services of Nayasara that he gave him the boon of staying for a Pāloypāma Kāla in the Swarga named Saudharmakalpa after giving up the physical body. Here, Nayasara enjoyed the company of the Gods as their guest. After the effect of the boon had been spent, the soul of Bhagavan Mahavira returned to the earth to take birth again.



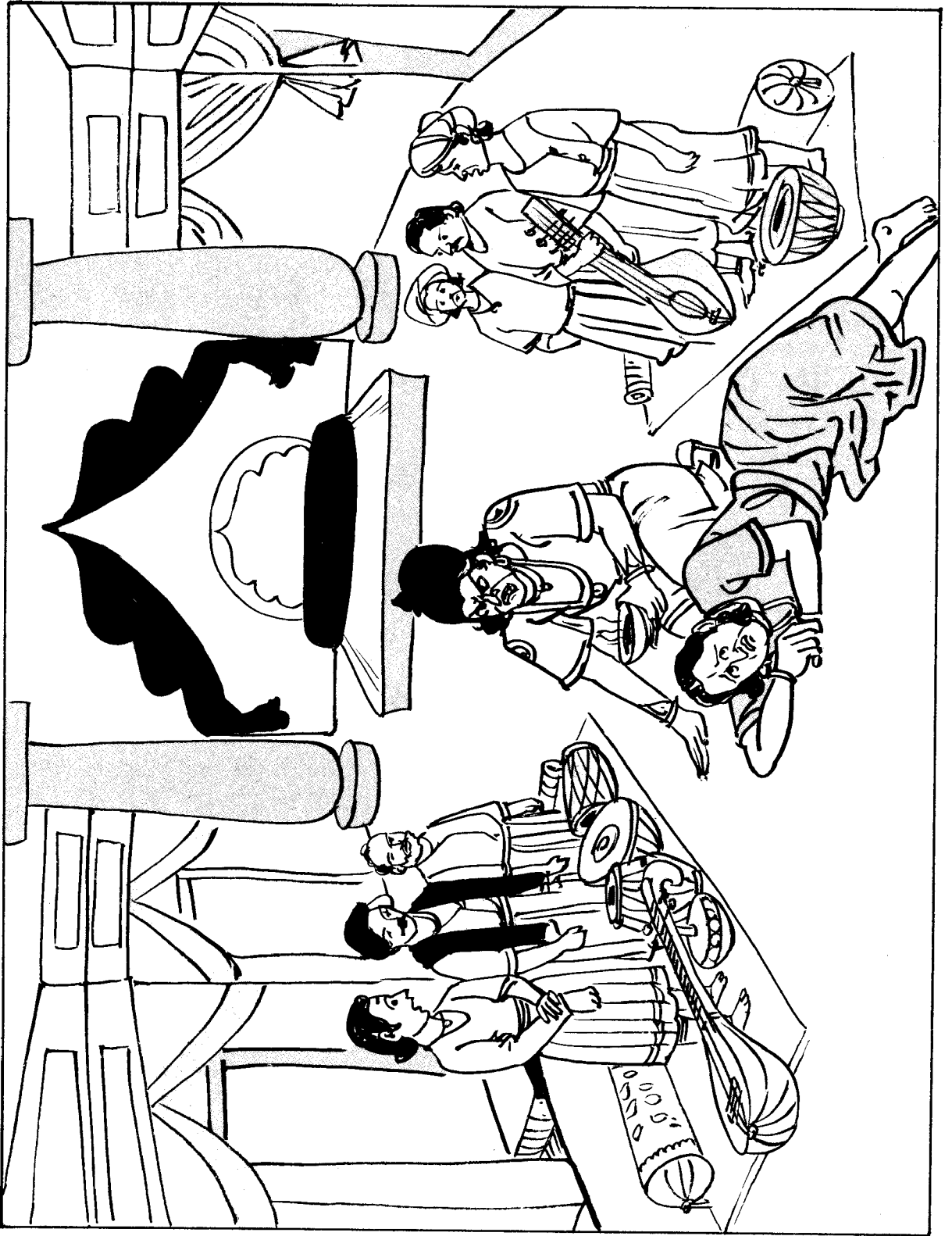
## 29. मरीचि - भौतिक एवं देवत्व

भारतक्षेत्र का शासन करने वाले सम्राट भरत के पिता श्री वृषभनाथ स्वामि सर्वप्रथम तीर्थङ्कर थे। उन्होंने 'समवशरण' में अपने भक्तों को दृष्टि में रख कर बहुत ही सुन्दर रीति से उपदेश दिया। सम्राट भरत के पुत्र मरीचि ने एकाग्रता पूर्ण दीक्षा से श्री वृषभनाथ के उपदेश सुने और विरागी होकर सांसारिक जीवन का त्याग करके परिव्राजक के रूप में उनके पीछे सारे देश भर में भ्रमण कर लोगों में जैन-सिद्धान्तों का अच्छी तरह प्रगाढ़ प्रचार किया। मरीचि की कार्य दीक्षा और दक्षता पर सन्तुष्ट होकर वृषभनाथ जी ने आशीर्वाद दिया कि चौबीसवें तीर्थङ्कर के रूप में मरीचि जन्म-साधना और आध्यात्मिक जीवन को अपने ढंग से एक मार्ग बनायेगा। उस प्रकार का आशीर्वाद प्राप्त कर मरीचि ने देहान्तर में 'ब्रह्मदेव लोक' में 'सप्तसागर' समय पर्यन्त रहकर फिर से कोल्लुक नामवाले ग्राम में एक ब्राह्मण के घर में जन्म लिया। पिछले जन्म की संस्कारों के कारण त्रिदण्डि होकर 'ईशान' स्वर्ग में कुछ समय बिताने के पश्चात उन्होंने मनुष्य जन्म लिया।

## 29 MARICHI

Shri Vrishabhanatha Swami, the father of Bharata, the first emperor of Bhaaratha (the land of Bharata) was the first Tirthankara. He used to sit in "Samavasharana" (a holy enclosure) and address his devotees in an enchanting manner. Marichi, the grandson of Shri Vrishabhanathaji and son of Bharatha was so affected by the preaching of Shri Vrishabhanathaji that he took to a life of renunciation, left his family and as a wandering monk, toured all the country, preached the principles of Jainism to the people in an effective way. Shri Vrishabhanathaji was so impressed with the sense of purpose and devotion to duty of Marichi that he gave him the title of "Vira" and foretold that Marichi would be re-born as the 24<sup>th</sup> Tirthankara and would show to the people the spiritual way in a manner all his own. Having been blessed thus Marichi ascended to Brahmadevaloka after giving up his physical body, where he dwelt for a period of "Saptha Sagara" after which his soul returned to the earth to take birth in a Brahmin family in the village of Kollaka. Thus with the strength of the Samskara of previous births Shri Mahavira became a monk of the order of Tridandi. After giving up his physical body his soul resided in Eesāna Swarga for some time. After that this was once again on its way to take birth on earth.





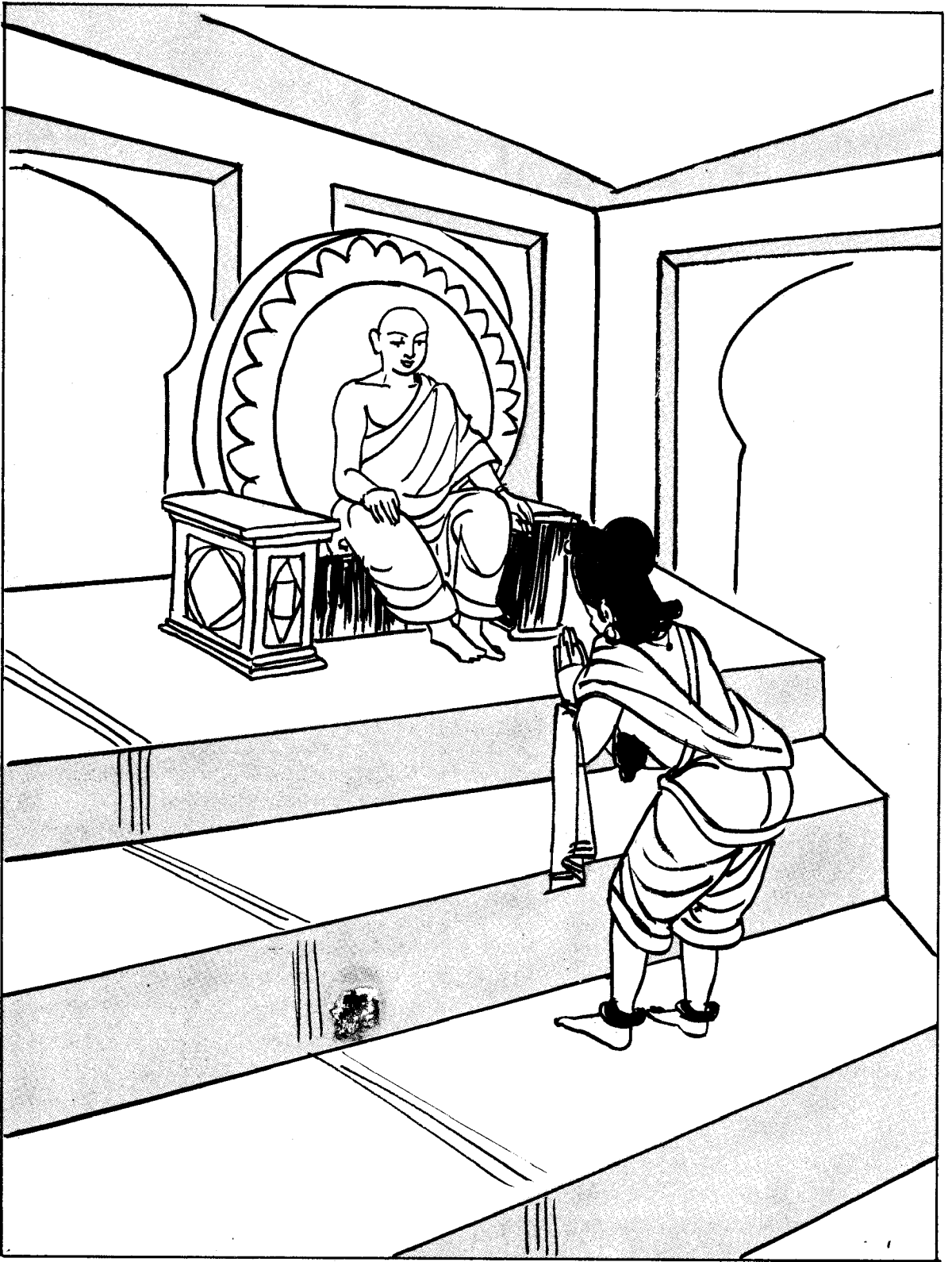
## 30. त्रिप्रिष्ठ वासुदेव

इसके पश्चात महावीर की आत्मा ने त्रिप्रिष्ठ वासुदेव नामक यक्ष के रूप में रिपुप्रतिशत्रु नाम धारी राजा के पुत्र बनकर जन्म लिया। तब तक जन्म-जन्मों से कमाया हुआ समस्त तपोबल महावीर ने त्रिप्रिष्ठ वासुदेव के रूप में खो लिया। समस्त राजोपचारों को भोगनेवाले त्रिप्रिष्ठ वासुदेव एक दिन अपने शयनागार में श्रवण-सुखद संगीत सुनने में तन्मय रहे। अगर वे नींद में डूब जायें तो, उन्होंने अपने सेवकों को आदेश दिया कि संगीत की सभा समाप्त कर, गायकों को अपने अपने घर भेज दिया जाय। इस तरह वे अपने परिचारक को आदेश देकर उस मधुर संगीत को सुनते-सुनते वे निद्रा में लीन गये। दुर्भाग्य से वह परिचारक राजाज्ञा भूल गया। गवैये रातभर गाते ही रहे। प्रभात हो गया। निद्रा से जाग उठे हुए वासुदेव को अपनी आज्ञा को अनसुना किये हुए सेवक पर अधिक क्रोध हुआ। उन्होंने उस सेवक के कानों में पिघला सीस निर्दय होकर डाल दिया। इस कर्म का फल महावीर अपने तीर्थंकर अवतार में भोग लेते हैं। इसके बाद त्रिप्रिष्ठ वासुदेव पश्चात्ताप में धुलकर ग्यारहवें तीर्थंकर श्री श्रेयांस नाथ की शरण पाकर, बंधन से मुक्त हुए। देहान्तर में सातवें नरक में अष्टवेदनीय कर्मभोगकर एक और जन्म में पोटिल सम्राट के रूप में जन्म लेने के लिये चल पड़े।

### 30 TRIPRISHTA VASUDEVA

The soul of Shri Mahavira then took birth as a “Yaksha” named Triprishta Vasudeva as the son of King Ripupratishatru, the ruler of Potanpura. This birth shows us how even a well led spiritual life became fuel to the fire of Krodha (anger). During the period of existence as Triprishta Vasudeva, Shri Mahavira had to forego all the power of his previous ascetic lives. It happened thus:

One day, Triprishta Vasudeva, in his bed chamber, was deeply immersed in the musical concert held there. He ordered his servant to stop the concert and send away all the singers home in case he (Triprishta) slipped into the lap of sleep. As anticipated, the Prince slipped into sleep while the concert was going on. Unfortunately, the servant to whom the prince gave direction forgot about it and allowed the concert to go on till the morning. The prince was so angry with the dereliction of duty of the servant that he had lead melted and poured into the ears of the servant (since nobody can escape the result of Karma, good or bad, Mahavira had to pay the penalty in his incarnation as Tirthankara). Later, Prince Triprishta Vasudeva was so smitten with remorse at his own anger that he went to Shri Shreyanshiji, the 11<sup>th</sup> Tirthankara and sought his grace. After death, he expended the result of his sin in the Seventh hell in the form of Ashtavedaniya and travelled on to take birth as Emperor Pottila.



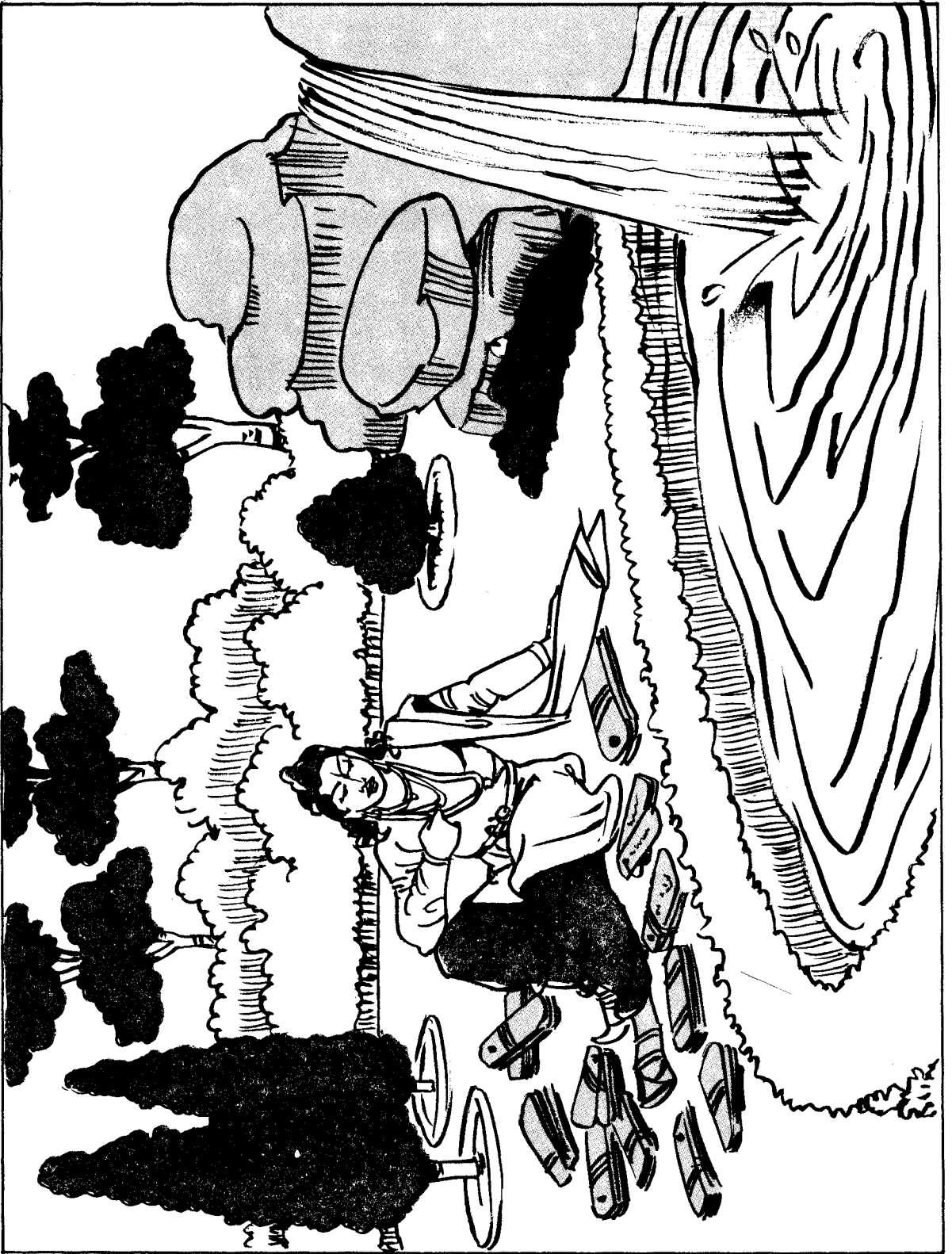
## 31. सम्राट पोटिल

अपर विदेह देश के मूक नामक राज्य का पालक धनंजय था । उसकी पत्नी धारणी देवी के गर्भ से पोटिल नामक पुरुष-सन्तान के रूप में महावीर की जीवात्मा का जन्म लेने का अवसर मिला ।

राज-दम्पतियों ने वानप्रस्थ स्वीकार किया । तब युवराज पोटिल चौदह राजकीय रत्नों और नौ राज-विधानों में परिणत होकर सम्राट बनकर प्रसिद्ध हुआ । उसके राज्य में सर्वत्र सर्वदा शान्ति और चैन रही । भाग्यवश उसके राज्य में धर्मघोष नामक जैनाचार्य का आना हुआ । सम्राट पोटिल ने उनके चरणों की वन्दना की और उनके धर्मोपदेश सुने । मानवजन्म की आवश्यकता के गुण और सम्पदाओं के अल्पत्व को उनके उपदेशों के द्वारा समझ लिया । पोटिल ने तुरन्त सन्यासी बनकर मरण के अन्त तक योगी के रूप में जीवन बिताया । अन्त में महा शुक्र कल्प नामक स्वर्ग में कुछ समय व्यतीत करके पीछे वर्द्धमान का जन्म लेने के लिये श्री महावीर की जीवात्मा उहात रही ।

### 31 EMPEROR POTTILA

Mahavira next took birth as the son of Emperor Dhananjaya and his queen Dharani Devi the rulers of Mooka in the realm of Aparavideha. When the emperor and his consort retired to the woods after relinquishing their kingly and queenly duties (and entering that stage of life called Vanaprastha) Prince Pottila became adept in the 14 Rajarathnas and 9 Rajanidhanas and won fame as a King of Kings. Happiness and prosperity reigned supreme in his empire. By a stroke of good luck a Jaina Acharya by name Dharmaghosha happened to visit the kingdom of Mooka. King Pottila prostrated at the monk's feet and heard his preaching with rapt attention. As a result of that preaching, the transitoriness of human life and the trumpery nature of human wealth were borne in upon the mind of Pottila. No sooner was he thus transformed, than he renounced everything including his kingdom and led the life of a monk until his death. After that the soul of Mahavira ascended to the heaven called Mahasukrakalpa where it dwelt for some time and then travelled back to the earth to take rebirth as Vardhamana.

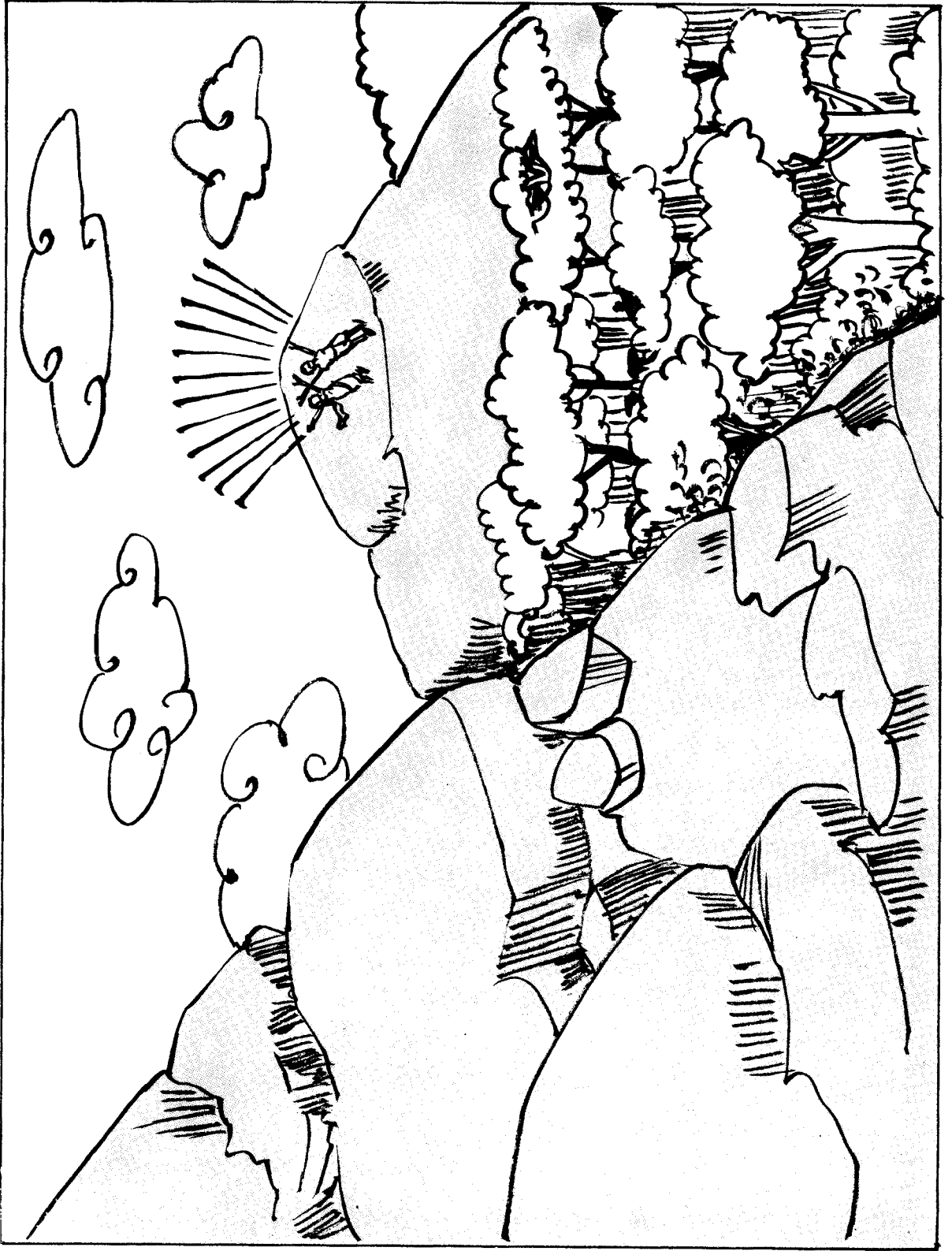


## 32. केवल ज्ञान की ओर दृष्टि

अपने पिछले जन्म की बातों को अच्छी तरह देखे हुए श्री वर्द्धमान सिर्फ ज्ञान-प्राप्ति के लिये परितप्त रहे। उन्होंने अपनी पहुँच में रहे समस्त वेदों, वेदादि ग्रंथों, पुराणेतिहासों को पढ़ डाला। यद्यपि उन्होंने बहुत पढ़ा और सुना, फिर भी उनकी ज्ञान की पिपासा नहीं बुझी। उनकी समझ में आया कि केवल ज्ञान के समुपार्जन के लिये ग्रन्थों के ज्ञान के अतिरिक्त वीतराग होना उसका सही रास्ता है, और जीवैकचता का सम्पादन ही परमार्थ है। इसके लिये वे अपने आत्मबल से उन्हें प्राप्त करने के लिये उद्युक्त हुए। इस दिशा में उन्हें सन्यास-ग्रहण और राज्य-परित्याग ही पहली सीढ़ी जान पड़ी।

## 32 MIND BENT UPON THE ATTAINMENT OF SPIRITUAL KNOWLEDGE

Shri Vardhamana who was enabled a vision of all his previous lives now developed a burning desire for the attainment of the ultimate knowledge. He digested the Vedas, Vedangas, Legends and Ithihasas, within his reach but his quest for the knowledge of the ultimate did not find fulfilment. He realised that renunciation - not book learning - is the proper path to attain knowledge of the ultimate. The ultimate goal he now realised was the attainment of the unbonded state of the Self. So he was determined to attain this with the inner strength of the soul. He considered the renunciation of material life and the giving up of the kingdom to be the first step in this direction.



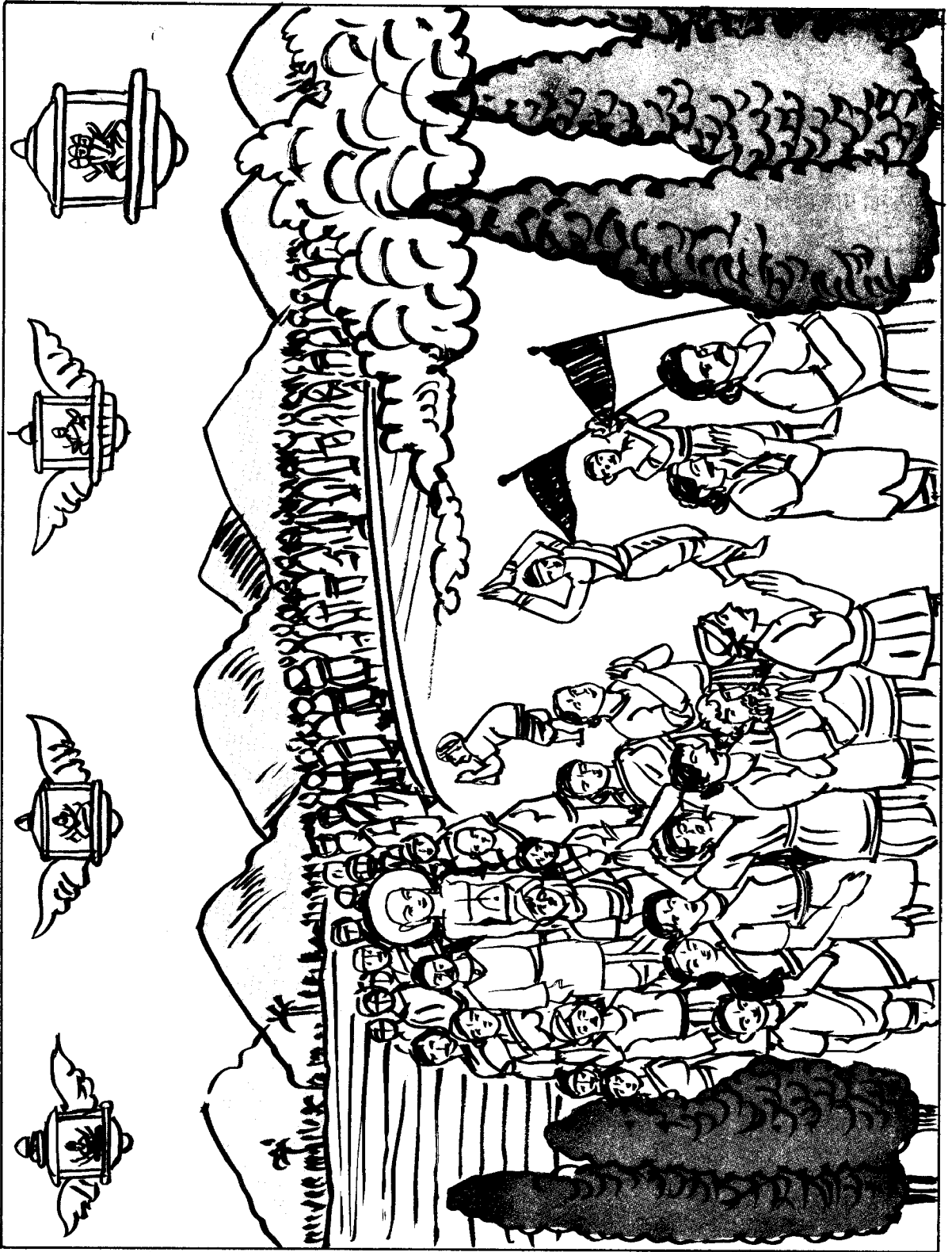
### 33. सल्लेखन

इसके पश्चात श्री वर्द्धमान के माता-पिता अर्थात् राजा सिद्धार्थ और राणी त्रिशाला ने जैन-सिद्धान्त के आधार पर “सल्लेखन” किया; अर्थात् राज्य-त्याग, भोग-परित्याग, आहार-त्याग के साथ-साथ साधना के द्वारा समाधि-स्थिति को प्राप्त होना ।

### 33 SALLEKHANA: THE COMPLETE RENUNCIATION

In due course, King Siddhartha and Queen Trishila the parents of the Shri Vardhamana Mahavira wanted to travel in the direction of Sallekhana the complete renunciation, which is the basis of Jaina preachings, and which involves the giving up of the kingdom, the relinquishment of worldly pleasures, and the gradual giving up of food and training the soul to give up the body through determined practice to attain the state of Samadhi or complete liberation.



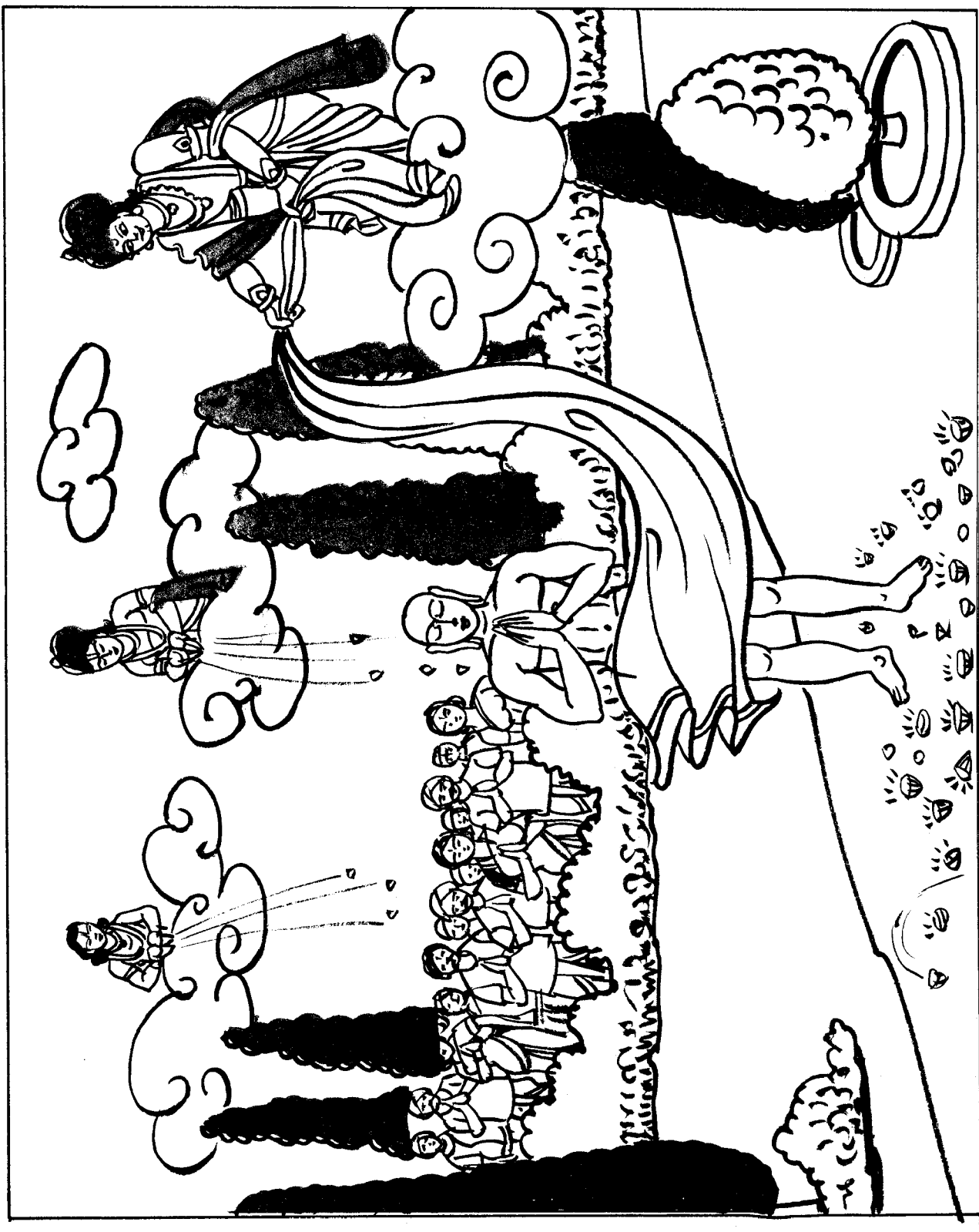


### 34. सन्यास-ग्रहण - श्री वर्द्धमान की जय-जय

चाचा सुपाश्व और बड़े भाई नन्दिवर्द्धन ने बहुत ही अनुनय किया, फिर भी राज्य-भार संभालने से श्रीवर्द्धमान ने इनकार किया। भोग-लालसा और सांसारिक जीवन की ओर विमुखत्व (वैमनस्य) प्रदर्शित किया। समय आसन्न हुआ कि श्रीवर्द्धमान तीर्थङ्कर के रूप में अवतार लें। इन्द्र लोक में दुन्दुभियाँ बज उठीं। देवताओं ने फूल बरसाये। श्री वर्द्धमान अपने राज दरबार से राज-लांछनों के साथ चल पड़े। उन्होंने रह चलती हुई प्रजा को सम्पत्तियों का वितरण अपनी समस्त प्रेम पूर्वक कर दिया। उस समय प्रजा-समूह ने उनकी दानशीलता का अभिवादन किया।

### 34 SHRI VARDHAMANA HAS HIS WAY, THE ACCEPTANCE OF SANYASA

Shri Vardhamana refused to accept the responsibilities of ruling the country in spite of the earnest entreaties of his uncle Suparshva and brother Nandivardhana. He was completely reluctant to lead a life of material and sexual pleasures. Now was the time for Vardhamana to incarnate as the Tirthankara. The event was celebrated in Indraloka with the beating of divine drums and the Gods sent down a floral rain to the earth. Shri Vardhamana set out from his Royal Palace in all his splendour as ruler and distributed every item of wealth and pomp that he had to the people who lined up on both sides of the exit route. He thus exulted in charity and people paid obeisance to Shri Mahavira's spirit of renunciation and charity.

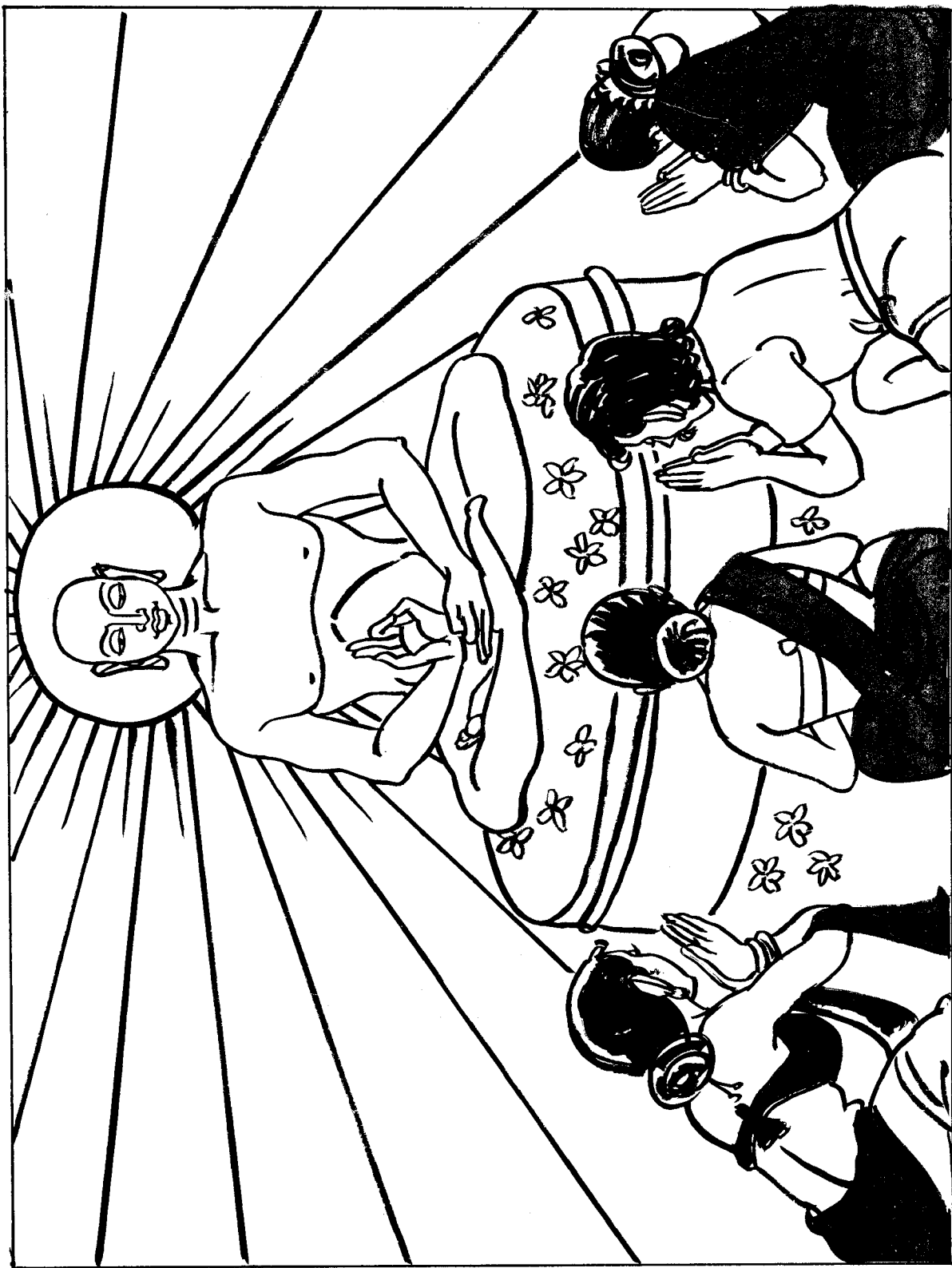


### 35. उत्तर फल्गुनि नक्षत्र में श्री सिद्ध भगवान को श्री महावीर के प्रणाम

सन्यास की दीक्षा के लिये निकले हुए श्री श्रमण भगवान महावीर, राज परिवार के साथ “ज्ञातिसन्द” नाम के राजवन में पधारे। ऊपर से देवगण फूलों की वर्षा कर रहे थे। तब श्री महावीर ने अपना मुकुट और वस्त्र निकाल दिये। तथा अपने ही हाथों से अपने सर के बालों को खींच निकाल लिये। पहले श्री सिद्धमुनि को प्रणाम किया। उसी क्षण से उन्होंने मन में शपथ ले ली कि मैं सर्वसंग परित्यागी हो चुका। तब श्री महावीर को “मनहपर्याय” ज्ञान हुआ।

### 35 UNDER THE SIGN OF UTTARA PHALGUNI THE AUSPICIOUS STAR SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA BOWS TO SHRI SIDDHA BHAGAWAN

Shramana Bhagawan Mahavira, on his final journey towards renunciation, arrived at the royal garden “Gnati Sanda” accompanied by his retinue while the heavens rained flowers, Shramana Bhagawan Mahavira removed his crown and took off his royal robes; he tore off his own hair with his own hands as a sign of renunciation (It was not the shaving of hair in the usual sense). The first thing he did after that was to bow to Shri Siddha Bhagawan. He vowed in his mind to renounce everything from that very moment. At once, Shramana Bhagawan Mahavira was blessed with the attainment of the spiritual wisdom of “Manah Paryaya”. Indra the King of Gods who was witnessing the whole ceremony of renunciation robed Shri Mahavira’s body with a heavenly vestment; immediately the whole place was filled with a profusion of all the precious stones.



## 36. वीतरागी श्रमण भगवान महावीर को साष्टांग प्रणाम ।

- (i) हाथियों में ऐरावत,  
जन्तुजाल में सिंह,  
नदियों में गंगा,  
पक्षियों में वासुदेव गरुड़,  
सन्यासियों में महावीर,  
उन्हें प्रणाम ।
- (ii) शब्दों में अशनि,  
तारों में चन्द्रमा,  
परिमलों में चन्दन गन्ध  
सन्यासियों में महावीर,  
उन्हें प्रणाम ।
- (iii) स्वामी ! आपके दर्शन महा भाग्य है !  
आपको न देखनेवाली आँखें क्या आँखें हैं ?  
आपकी पूजना न करनेवाले हाथ क्या हाथ हैं ?  
आपके चरणों में नतमस्तक न होनेवाला मस्तक क्या मस्तक है ?  
श्रमण भगवान महावीर स्वामी ! आप को प्रणाम !

## 36 OBEISANCE AND PROSTRATIONS TO SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA, THE KING OF RENUNCIATION

### (i) Thou art Airavata among tuskars

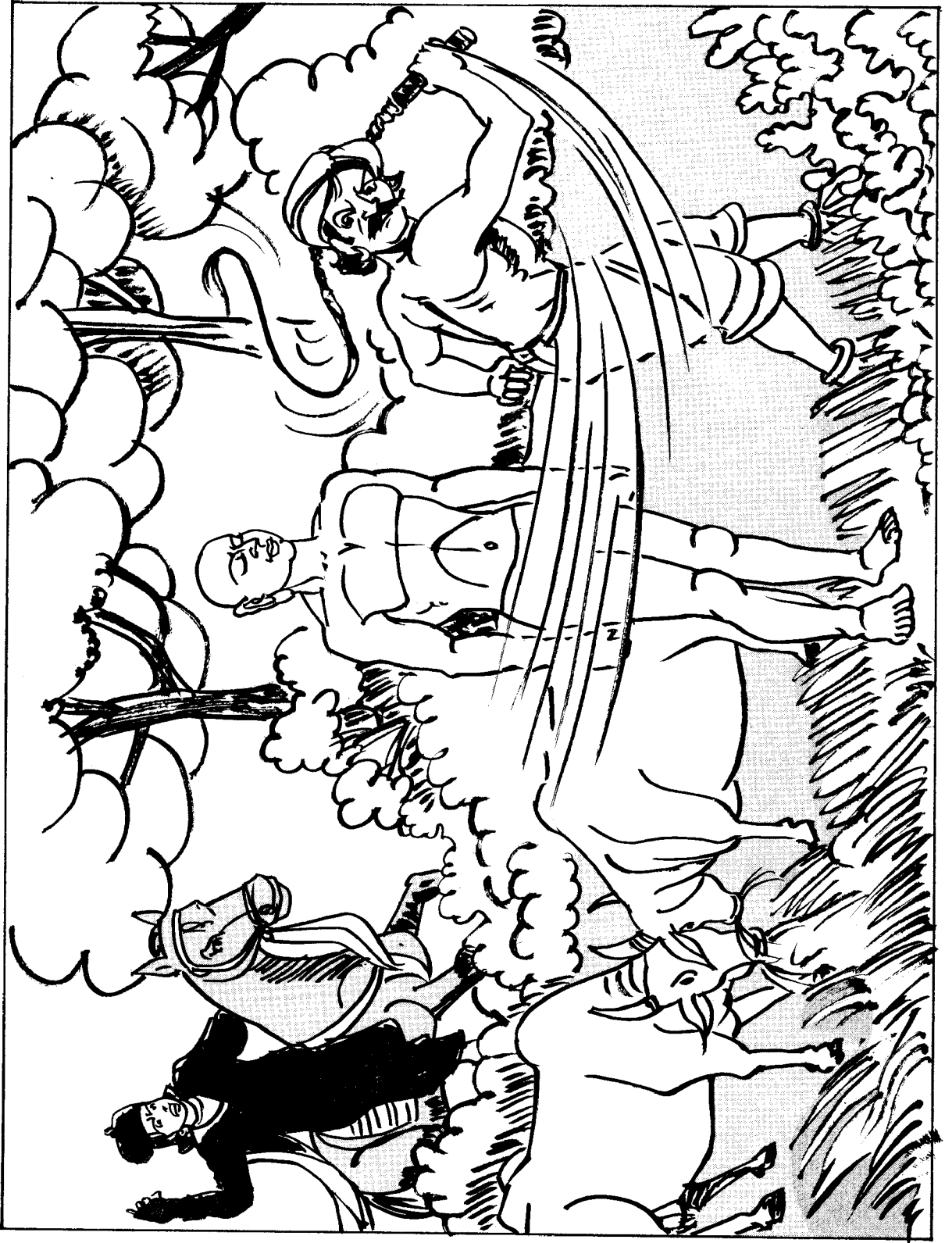
The Lion among beasts,  
The Ganges among rivers,  
And Garuda among Birds,  
Mahavira among monks,  
And to thee we bow !

### (ii) Thou art the thunder among sounds,

The Full Moon among the stars,  
The Sandalwood among fragrances,  
And Mahavira among Monks,  
And to thee we bow !

### (iii) Oh, Bhagawan, thy vision is our greatest wealth,

Thy sight is a feast for the eyes,  
Thy worship is the real joy for our hands,  
To bow to thee is our greatest pleasure,  
Shramana Bhagawan Mahavira, our prostrations to thee !



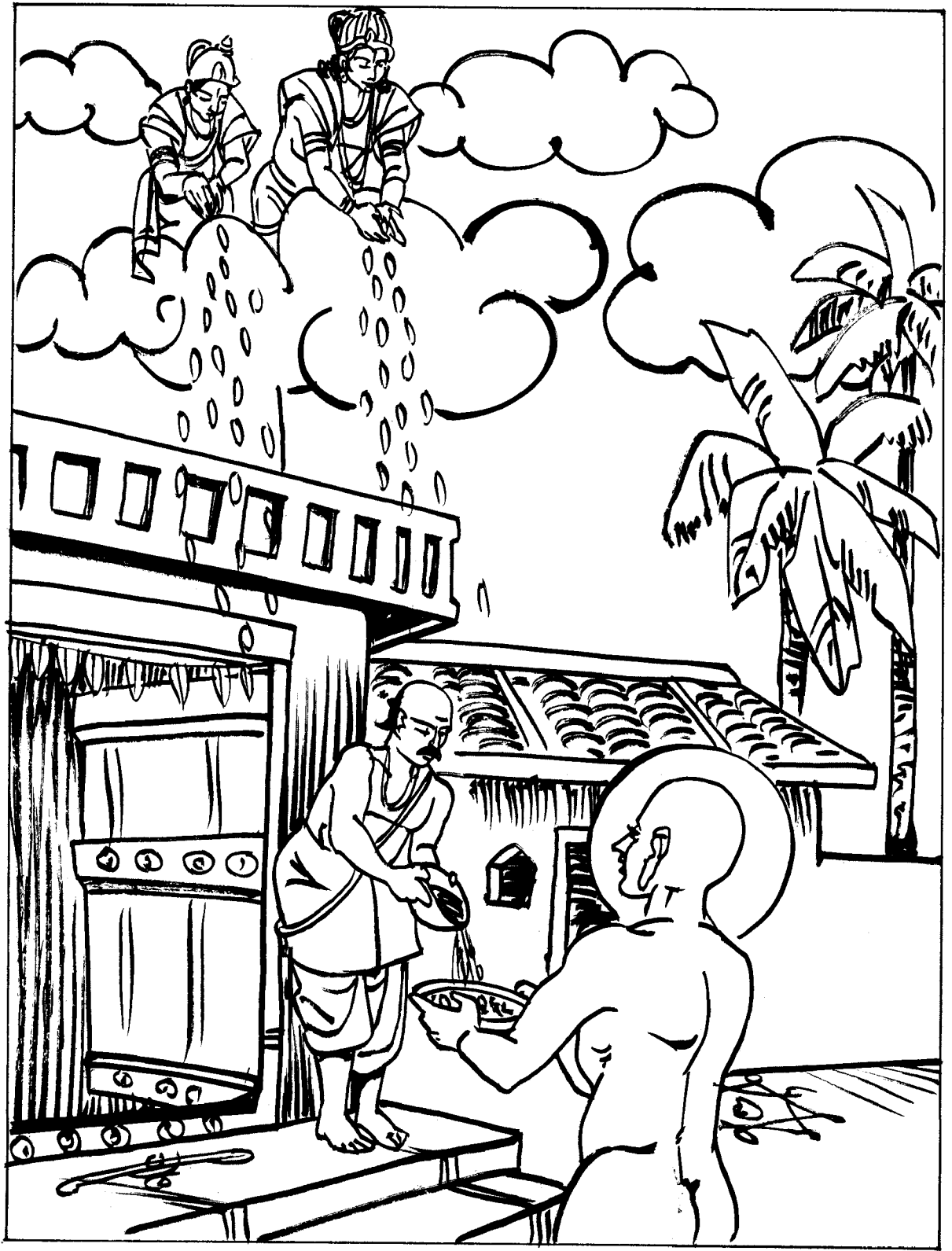
## 37. पशुपालक का दृर्व्यवहार

सन्यास-ग्रहण (स्वीकार) के पश्चात महावीर ने ध्यान करने हेतु प्रथम चरण के रूप में करमार गाँव के बाहर के जंगल को चुना। वहाँ खड़े होकर नासिकाग्र पर दृष्टि केन्द्रित कर, एकाग्र चिन्त से ध्यान में मग्न हो गये। एक पशुपालक इनके आने से पहले छूट गये, अपने पशुओं की खोज में वहाँ आया। वहाँ चारों ओर बहुत खोजने पर भी पशुओं का पता जब न लगा तो वहीं ध्यान मग्न होकर खड़े हुए महावीर से उसने अपने पशुओं का पता पूछा। कोई उत्तर न मिलने पर उसे सन्देह हुआ कि महावीर ने ही उसके पशुओं को चुराया। वह महावीर को अपनी चाबुक से मारने ही वाला था कि इतने में दूर से महावीर के लिये आते हुए नन्दिवर्द्धन ने उसे मना किया और महावीर का वृत्तान्त उसे बताया। वह पशुपालक बहुत पश्चात्ताप से खिन्न होकर घर की तरफ लौटा। नन्दिवर्द्धन ने स्वामी का ध्यान-भंग किया बीतीबात बतायी और आपत्ति से उन्हें बचाए रखने का प्रबन्ध का प्रस्ताव किया। इसके लिये महावीर सहमत नहीं हुए। उन्होंने समझाया कि किसी पर अश्रित रहने मात्र से भय तो छूटेगा नहीं, स्वावलम्बित, ओर अकेले से ही लड़ना ही जीवात्मा का आविष्कार होता है।

## 37 THE COWHERD AND HIS AUDACITY

After selecting a life of renunciation, Bhagawan Mahavira selected, as his first stage in meditation, a spot in a jungle outside the village of Karmar. There he stood like a rock and, concentrating all his thoughts on the tip of his nose, was immersed in Dhyana (meditation). While he was thus deeply immersed in meditation, there arrived on the spot a cowherd in search of some of his animals that strayed away from the herd. He made a thorough search of that spot for the lost cows and thinking that the person (Bhagawan Mahavira) might be knowing about the whereabouts of the animals, began to prod him with questions. Finding that he was not getting any response the cowherd was convinced that that person (Bhagawan Mahavira) must have stolen his animals. Having suspected the ascetic like that he was about to beat the Bhagawan with his whip when, from a little distance, Nandivardhana who was coming for Bhagawan Mahavira saw this disconcerting sight and stopped the cowherd from proceeding with his audacious act; then he related to the cowherd the facts concerning Bhagawan Mahavira and his present pursuit. The cowherd was then struck with remorse and wended his repentant way home. Nandivardhana made a bow to wake up Bhagawan Mahavira from his Dhyana and narrated to him what had happened. Then he tried to persuade the Bhagawan to give his consent for the posting of body guards around him. Bhagawan Mahavira firmly turned down this offer and explained to his brother that dependence brings fear in its wake; the true nature of the soul can be revealed only through solitary endeavour and struggle.





## 38. कोलुंग सन्निवेश

नन्दिवर्द्धन को भेजने के बाद श्री महावीर ने वह सारी रात करमार ग्राम के जंगल में निर्भीक हो, ध्यान में बितायी। सबेरा होने पर पास के कोलुंग सन्निवेश नामक नगर में गये। सुबह के समय पैदल धूमकर दोपहर के समय बहुल नाम ब्राह्मण के घर के सामने अपने उपवास की दीक्षा छोड़ दी। उस ब्राह्मण ने बहुत बड़ी भक्ति के साथ श्री महावीर स्वामी को भिक्षा दी और प्रणाम किया। देवताओं ने उस ब्राह्मण के घर पर घन सम्पत्तियों और मणिभूषणों को बरसाया। स्वामी को भिक्षा देने वाले ब्राह्मण के भाग्य पर उस नगर के लोग विस्मित हुए। यहाँ से स्वामीजी मोराक ग्राम की ओर पैदल चल पड़े।

## 38 KOLLANGA SANNIVESA

After sending back Nandivardhana, Bhagavan Mahavira went on meditating at the same spot, undeterred, until dawn. Then he proceeded to a nearby town called Kollanga Sannivesa. He went on walking throughout the morning and by noon stood before the threshold of the house of a Brahmin by name Bhahula. Then he broke his fast with the Brahmin offering him food and drink. After treating the mendicant thus, the Brahmin prostrated before the feet of the Bhagawan and paid his respects and lo, the Gods sent down a shower of precious stones, exotic ornaments and all types of wealth upon the house of the Brahmin (perhaps, Bhagawan Mahavira must have found the Brahmin to be a virtuous person and this incident might be a pretext to reward him). From there the Swami proceeded towards the town of Moraka, once again on foot.



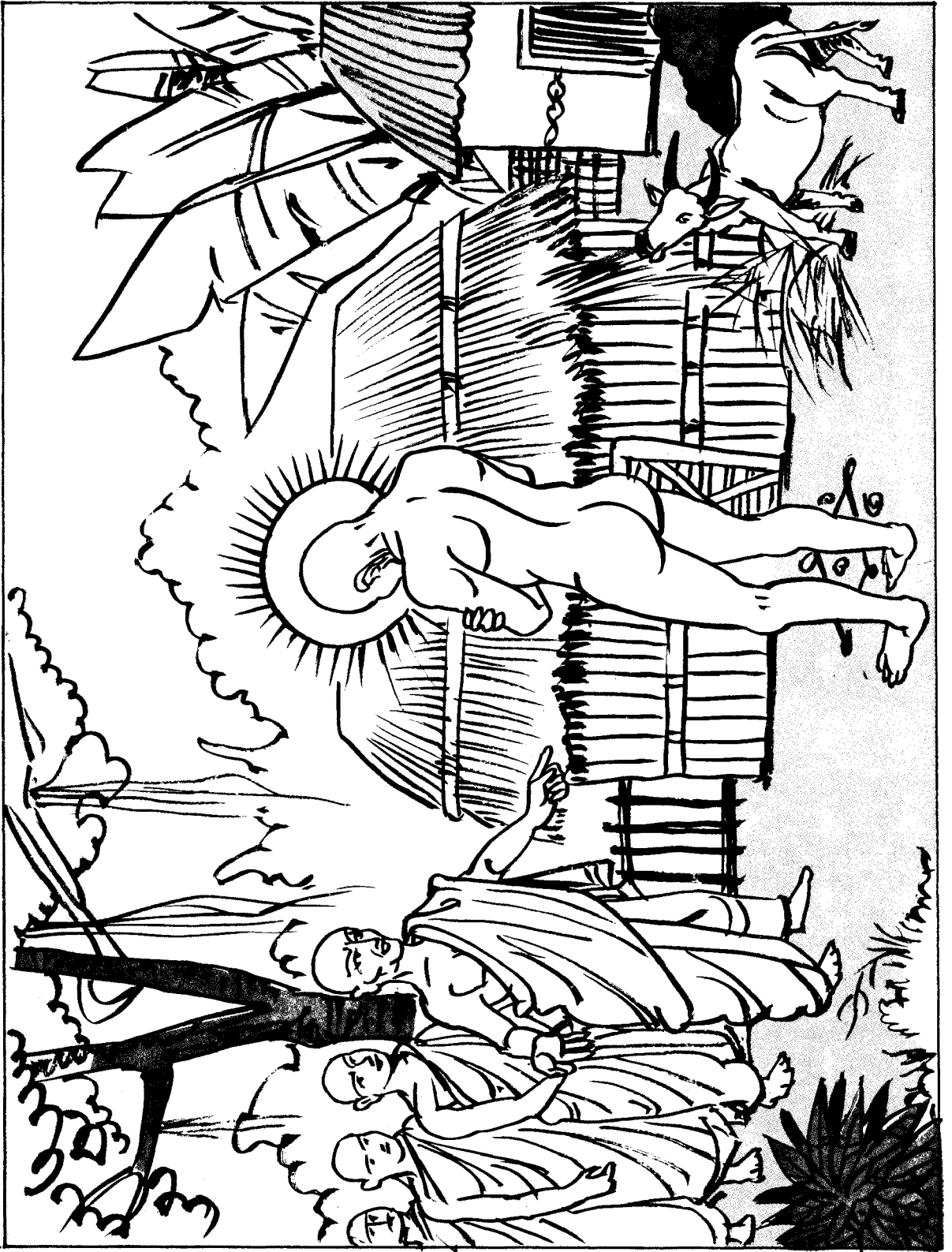
## 39. मोरक सन्निवेश

श्री महावीर स्वामी, सन्यासी दीक्षा ग्रहण करने के बाद पहला चतुर्मास, मोरक सन्निवेस में संभव हुआ। वहाँ एक आश्रम था। श्री महावीर स्वामी के पिताजी और उनके बड़े लोगों को यह आश्रम मालूम था। श्री महावीर को देखते ही उस आश्रम के मालिक, स्वामी को अपने आश्रम में रहने के लिए इच्छा प्रकट की। वास्तव में श्री महावीर को ध्यान के लिए कोई भी प्रदेश हो वह अनुकूल होगा। क्योंकि वे एक बार जंगल में, दूसरी बार मंदिर के प्रांगण में, कुछ दिनों के लिए श्मशान में भी निर्भय से, ध्यान में डूब कर समय को बिताये थे।

श्री महावीर स्वामी आश्रमवासियों की बातें इनकार नहीं कर सके। अपने लिए जो आश्रम दिये उस आश्रम में ध्यान के लिए गये। आश्रम में प्रवेश होते ही श्री महावीर स्वामी ध्यान में डूब गये। उसी समय कुछ गायें घाँस चरने हेतु आश्रम में आकर घास खाने लगीं। उस ओर की जमीन पर घाँस ज्यादा नहीं होने के कारण आश्रम के ऊपर होनेवाले बेल और लताओं को खाने लगीं। आश्रम के बाहर रहने वाले यह देखकर गायों को हटाते हुए, चिल्लाने लगे। आश्रम के अन्दर बैठे हुए स्वामीजी अचंचल दीक्षा में, ध्यान सागर में डूबे हुए, आत्मदर्शनानुभूति प्राप्त कर रहे थे। आश्रम के बाहर लोगों की चिल्लाह स्वामी जी के कानों में सुनाई पड़ी। महावीर स्वामी को ध्यान में विघ्न आ गया।

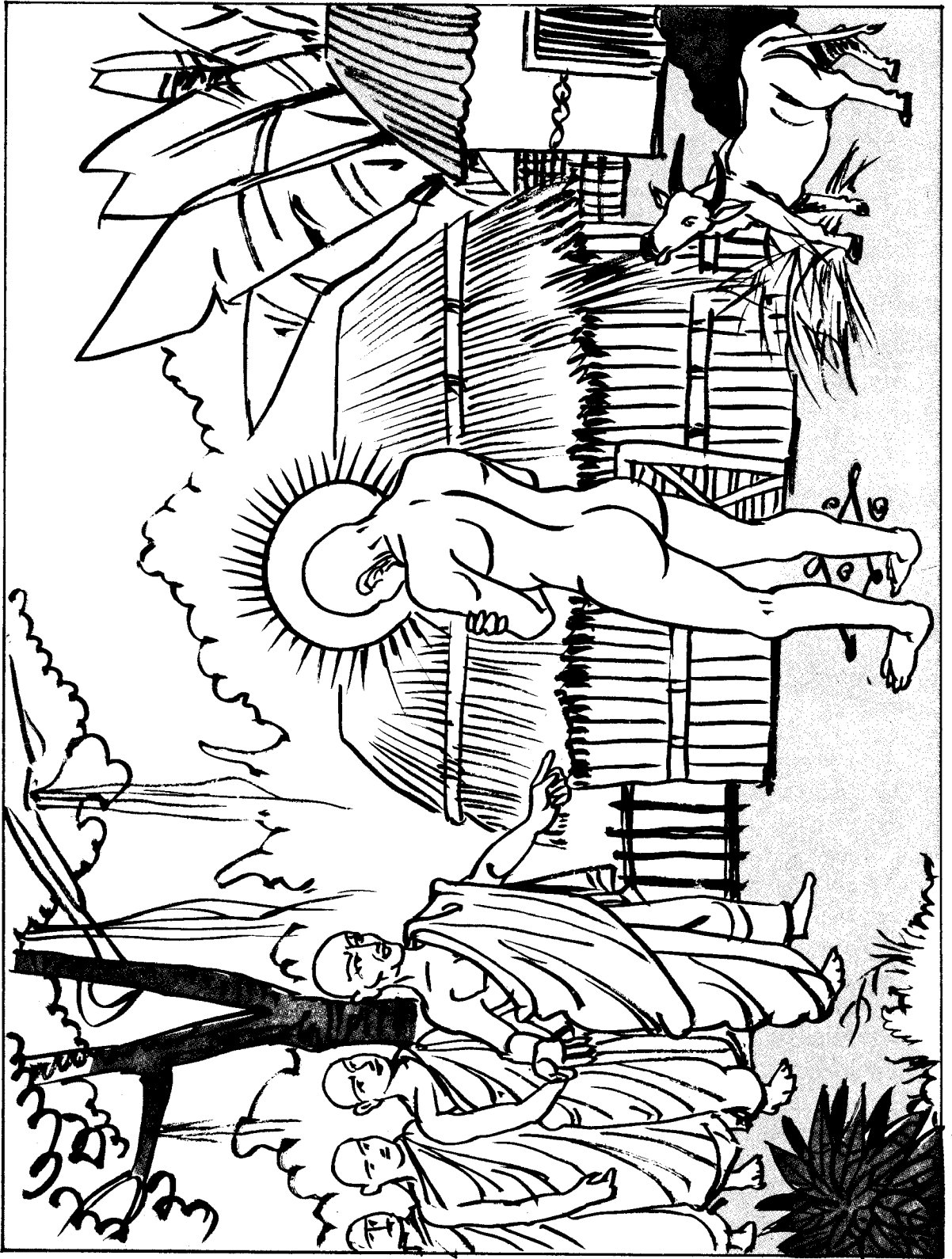
### 39 MORAKA SANNIVESA

After making the vow of renunciation, Bhagawan Mahavira had to observe the penance of Chaturmasya while he was in Moraka Sannivesa. Here, in this place, there was a certain ancient hermitage, whose dweller knew Bhagawan Mahavira's father, so he requested the Bhagawan to stay in his Ashram. Now for the Bhagawan any place of stay is one and the same. Now he would dwell in a forest, now at the threshold of a temple, now in a necropolis - absorbed in deep meditation without a shade of fear. Nevertheless, he wanted to oblige his father's friend and entered the hermitage to observe Dhyana. The moment he entered the hermitage he entered into deep Dhyana. Presently some cows came to the area for the purpose of grazing and finding that the soil was devoid of even a blade of grass, stretched their necks and began to eat the creepers ascending towards the roof of the hermitage. But Bhagawan Mahavira was undisturbed in his meditation even while the roof above his head was being eaten up. The others, lesser mortals, were filled with consternation and were trying to drive away the animals with yells and shouts. Thus the meditation of the Bhagawan was disturbed. As though this were not enough the head of the hermitage called out Mahavira with a loud voice. Mahavira came out and wanted to know what had happened. Then the Head of the hermitage informed the Bhagawan that some cows had entered the Ashram and were eating up the foliage of plants and creepers. He reprimanded the Bhagawan for being



बाहर से आश्रम के मालिक ने महावीर स्वामी को बुलाया। महावीर स्वामी ने बाहर आकर कारण पूछा। आश्रम के मालिक ने बताया कि गायें आकर इधर चर रही हैं तो अपने देखा नहीं। आपको सावधानी से यहाँ रहना आवश्यक है। महावीर स्वामी के मन में यह बात आयी कि मेरे कारण दूसरों को नुकसान पहुँच रहा है। यह सोचकर उन्होंने तुरन्त उस प्रदेश को छोड़ा, और निकट के जंगल की ओर चल पड़े। बाद में मन में प्रतिज्ञा कल ली कि भविष्य में मैं जहाँ रहूँगा वहाँ के लोगों पर भार नहीं बनूँगा। जितना समय हो उतने समय में अपने ध्यान में निमग्न हो जाऊँगा। ध्यान में ही पूरा समय बिताऊँगा। मेरे दो हाथ ही भिक्षापात्र हैं। गृहस्ताश्रम और अन्य लोगों को छोड़कर मैं दूर रहूँगा।

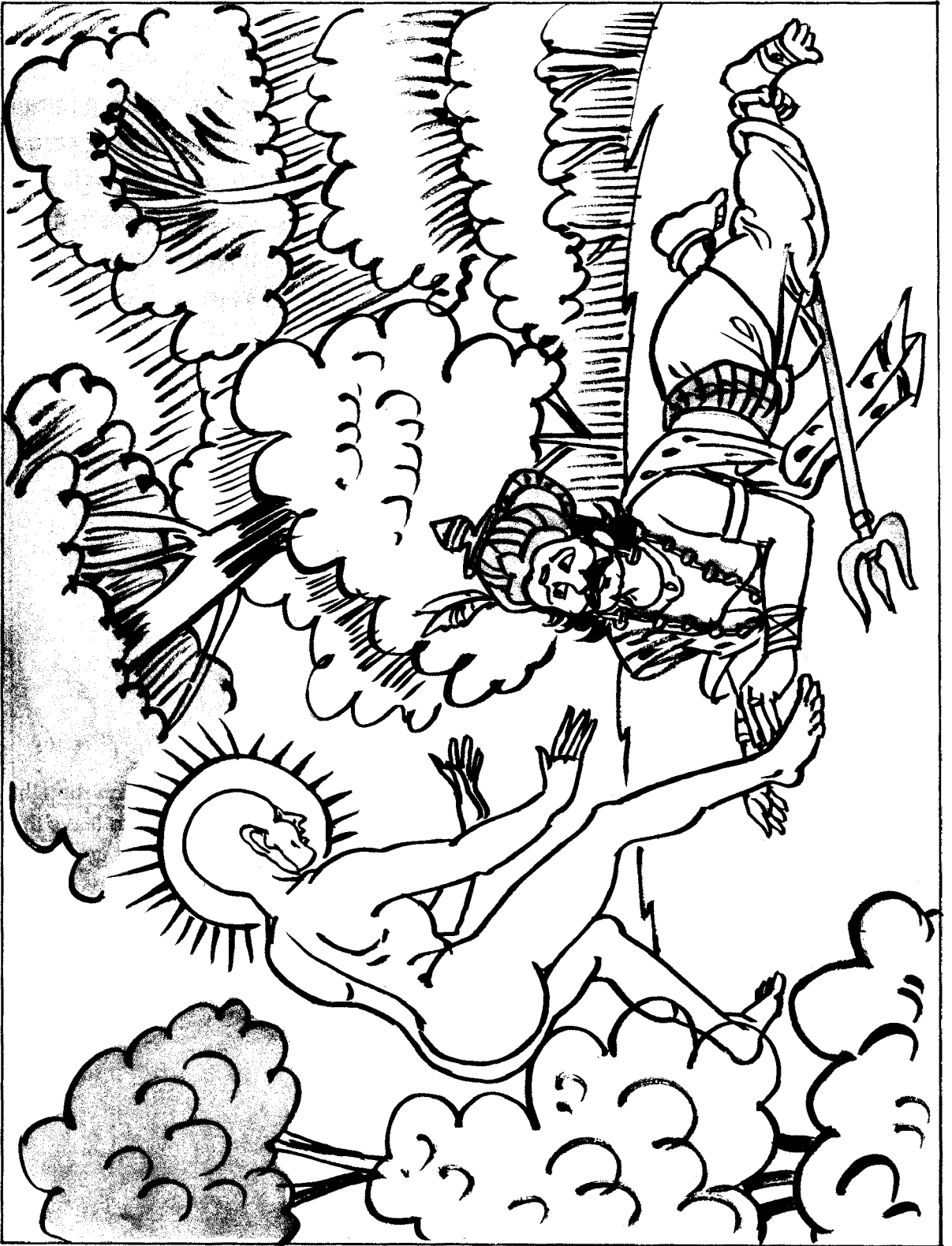
oblivious of the necessity of protecting the hermitage. Now Bhagawan Mahavira thought that the feelings of others were hurt on account of himself and at once decided to leave the place. Then he proceeded to a nearby forest. Now he vowed that he would not go to any place where he would be a burden upon others. He further vowed that all his time would be spent in meditation and if, there were to be any moments of consciousness, they would be spent in silence. He said to himself that his own palms would serve as a cup for alms and that he would be away from Janapadas (places where people live).



बाहर से आश्रम के मालिक ने महावीर स्वामी को बुलाया। महावीर स्वामी ने बाहर आकर कारण पूछा। आश्रम के मालिक ने बताया कि गायें आकर इधर चर रही हैं तो अपने देखा नहीं। आपको सावधानी से यहाँ रहना आवश्यक है। महावीर स्वामी के मन में यह बात आयी कि मेरे कारण दूसरों को नुकसान पहुँच रहा है। यह सोचकर उन्होंने तुरन्त उस प्रदेश को छोड़ा, और निकट के जंगल की ओर चल पड़े। बाद में मन में प्रतिज्ञा कल ली कि भविष्य में मैं जहाँ रहूँगा वहाँ के लोगों पर भार नहीं बनूँगा। जितना समय हो उतने समय में अपने ध्यान में निमग्न हो जाऊँगा। ध्यान में ही पूरा समय बिताऊँगा। मेरे दो हाथ ही भिक्षापात्र हैं। गृहस्ताश्रम और अन्य लोगों को छोड़कर मैं दूर रहूँगा।

oblivious of the necessity of protecting the hermitage. Now Bhagawan Mahavira thought that the feelings of others were hurt on account of himself and at once decided to leave the place. Then he proceeded to a nearby forest. Now he vowed that he would not go to any place where he would be a burden upon others. He further vowed that all his time would be spent in meditation and if, there were to be any moments of consciousness, they would be spent in silence. He said to himself that his own palms would serve as a cup for alms and that he would be away from Janapadas (places where people live).





## 40. यक्ष के ऊपर विजय

बाद में श्री महावीर स्वामी उसी गाँव में शूलपाणियक्ष के मंदिर को, अपनी ध्यान के लिए अच्छी जगह समझकर चुन लिये। वहाँ के गाँववासी वहाँ ध्यान करने के लिए मना किये थे। कारण पूछने पर गाँव वासियों ने कहा - यहाँ शूलपाणी यक्ष नामक एक राक्षस हैं। वह नरभक्षक राक्षस रात में घूमता रहता है। अगर भूल से कोई मानव उस मंदिर के प्रांगण में रात में जाते हुए देखा तो सुबह होते ही उस मानव का केवल कंकाल ही बचा रहता है। उस राक्षस के कारण ही इस गाँव का नाम अस्तिग्राम रखा गया। धैर्यशाली श्रीमहावीर स्वामी ने इन गाँव वालों की बातें नहीं मानी। उस मंदिर के प्रांगण में पद्मासन युक्त, अंतर मुक होकर ध्यान में निमग्न हुए थे। आधी रात को एक बड़ी चीख सुनाई पड़ी। महावीर स्वामी निडर होकर अपने ध्यान में डूबकर, अचंचल दीक्षा में एकाग्रचित्त मन से आत्म दर्शन कर रहे थे। तभी शूलपाणि यक्ष कई प्रकार से विघ्न डाले। लेकिन महावीर की तपोबल के सामने उस यक्ष के सारे प्रयत्न विफल हो गये। अन्त में वह यक्ष महावीर के पैरों में गिर कर स्वामी को प्रणाम करके वह खुद उस जगह को छोड़कर चला गया। विजय पानेवाले महावीर वहाँ के लोगों को आशीर्वाद देकर उत्तराचल की ओर चल पड़े।

## 40 VICTORY OVER THE YAKSHA

Next on the outskirts of Asthigrama, Bhagawan Mahavira selected a temple called Shulapaniyaksha to continue his meditation. Then the villagers tried to restrain him from carrying out his plan. The Bhagawan was surprised and wanted to know the reason for this strange request. Then people informed him that certain anthropophagous Yaksha by name Shulapani was stalking persons moving in that area. If any unsuspecting mortal should stray into the area in the night, only his skeleton would remain in the morning. It was for this reason that the village came to be called "Asthi". As is to be expected, Mahavira must have smiled at this account and he sat in the temple in the posture of Padmasana and turning his mind inwards, fell into deep meditation. The unearthly hour arrived and the Yaksha, waxing in strength, soon reached the temple and yelled in a heart-rending manner. Shri Mahavira heard it in his Dhyana but was not disturbed at all and continued with his meditation. The Yaksha now tried his best to distract the Swami from his meditation, as his efforts to swallow him and eat him up came to nought. Thus the fiendish strength of the Yaksha was no match for the ascetic power of Bhagawan Mahavira. The Yaksha was now divested of his pride and fell at the feet of the Swami to forgive him for his ignorance. Now a strange thing happened - Bhagawan Mahavira did not want to displace the Yaksha from his natural habitat and so he the Bhagawan himself left the place and proceeded to another spot in the direction of the North, but not before blessing the local people.

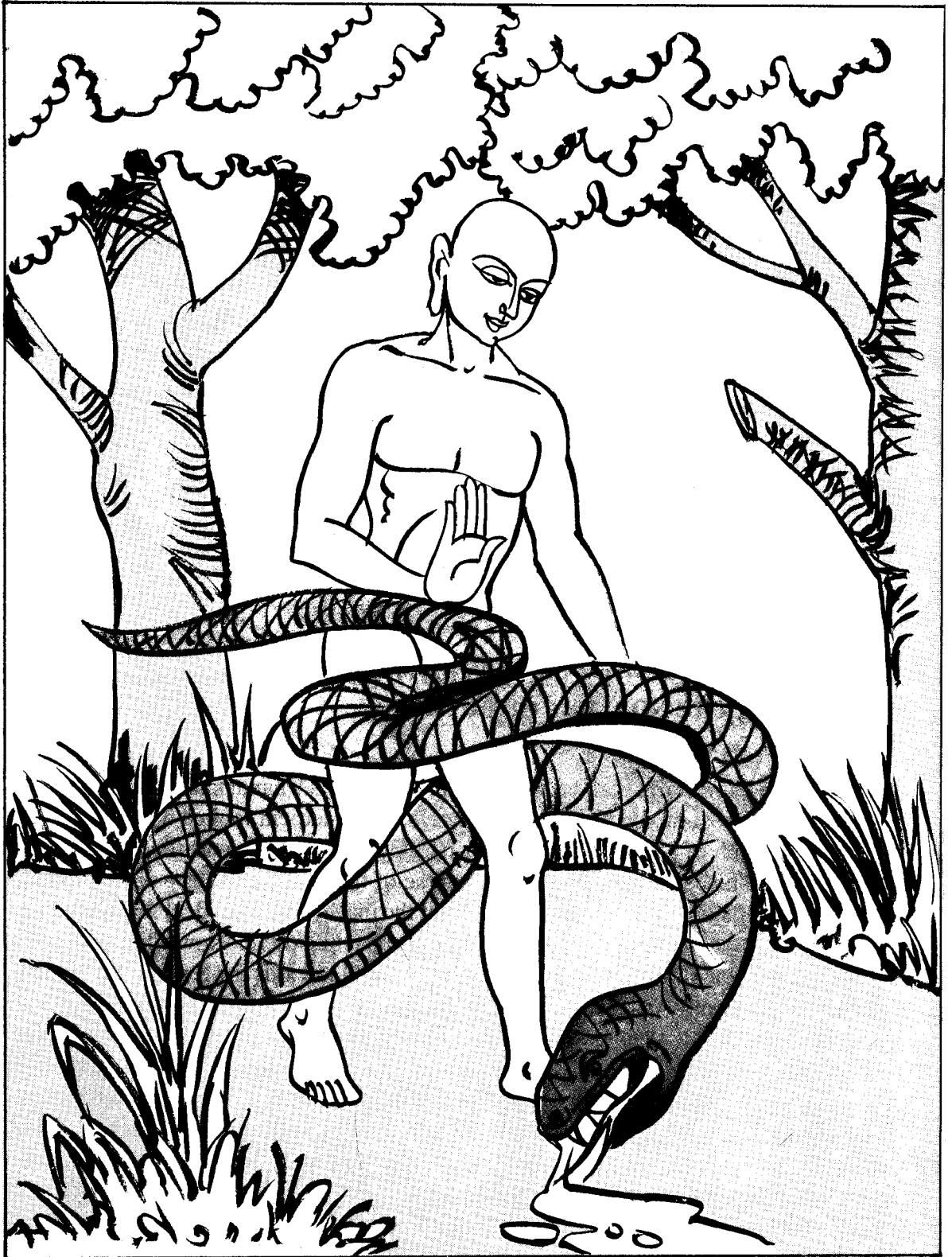


## 41. अहिंसा परमोधर्म :

चण्डकौशिक नामक एक बहुत ही भयानक साँप उत्तराचल के जंगल में रहता था। वह बहुत जहरीला साँप था। क्योंकि पेड़ की डाल पर बैठी हुई चिड़ियों पर उस साँप की नज़र पड़ी तो वे नीचे गिर कर मर जाया करती थीं। इसीलिये वह साँप जहाँ रहता था वहाँ के आसपास का प्रदेश सुनसान (निर्जन) पड़ा था। उसी प्रदेश को महावीर स्वामी ने अपने ध्यान के लिये अनुकूल समझा। वे तुरंत उस प्रदेश को जाकर ध्यान में निमग्न हो गये। दूर से स्वामी जी को देखकर चण्डकौशिक सरसर रेंगता हुआ आया और स्वामी के सामने फन फैलाकर खड़ा हो गया। स्वामी के चहरे पर शांति, निर्भीकता और पूर्णिमा का सा प्रकाश देखकर चण्डकौशिक को क्षण भर के लिए अचरज हुआ और उसने एक दम स्वामी जी के सामने फन झुका दिया। तुरंत अपने को सँभाल कर वह यथारूप गुस्से में आया और उसने स्वामी जी के मुँह पर जहर फूँक डाला। स्वामी के मुख पर डर, क्रोध, पीड़ा या भय न पाकर चण्डकौशिक हकबका कर रह गया। चण्डकौशिक ने क्रोधावेश में आकर स्वामी जी के पाँव की अँगूठी पर जोर से ढँस लिया। स्वामी जी ओर से किसी प्रकार का बदला न हुआ तो चण्डकौशिक अचरज में पड़ा। वह तुरंत स्वामीजी के आगे अपना शरीर लपेट कर उन्हे देखता रहा। ध्यान से उठे हुए स्वामीजी ने कृपापूर्ण दृष्टि से चण्डकौशिक की आँखों में देखा। अब तक दूसरों

### 41 AHIMSA - RESPECT FOR LIFE AND COMPASSION TOWARDS ALL CREATURES, THE NOBLEST OF DUTIES

There lived in a forest of Uttaravachala a serpent by name Chandakausika. He was the embodiment of the most fatal poison. It was enough if the serpent looked at the birds that perched on the branch of a tree, to make them fall down dead; such was the power of his poison. The whole place became deserted in course of time. For this very reason silence reigned there and Bhagawan Mahavira thought that the place would be ideal for meditation and so immediately went into a state of meditation on reaching there. Now Chandakausika saw the Swami approaching the place and crawling briskly towards the Swami, the serpent presently faced the Swami and reared itself spreading its hood. It began to look daggers at the face of the Swami, but what a surprise, all the cruelty and natural enmity of the serpent for the would-be prey were gone in a fraction of a second ! The serpent was greatly baffled to see the holy aura around the face of the Swami, the calmness of the face itself and the utter lack of fear. The serpent was dazed only for a fraction of a second and slipping into his own vicious nature, ejected poison on the body of the Swami. Now the serpent was convinced tht the strange person was overcome by the effect of its poison. But lo, the face of the Swami was as calm as ever. There was not any trace of fear or pain. The serpent became perplexed and, not willing to accept defeat, bent down and bit the big toe of the



को मलिन करने वाले और जहर से भर देने वाले चण्डकौशिक का मन अब स्वामी जी की दृष्टि से घुले मोती की भाँति स्वच्छ (निर्मल) हो गया। स्वामी जी को देखते ही उसका मन बदल गया। इस प्रकार आकस्मिक रूप से लज्जित होकर वह अपने पापों का प्रायश्चित्त करने के लिये स्वामी जी के चरणों पर पड़ा और शरण की भिक्षा माँगने लगा। स्वामी जी ने अहिंसा का प्रभाव मौन रूप से चण्ड कौशिक को बताया। उसके बाद गंगा के किनारे से सुरभिपूर की तरफ स्वामी जी चले गये।

Swami's left foot. Even after this, Bhagawan Mahavira was unperturbed in perfect calmness. The serpent was now filled with the wonder of its life and, coiling himself in front of the Swami began to gaze at himself fixedly. The Swami who now woke up from his Dhyana began to eye the serpent with compassion. One look into those kindly eyes, the black mind of the serpent was now divested of all impurities and shone like a pearl (a symbol of cleanliness and purity). Chandakausika was now smitten with remorse and feeling ashamed of himself fell upon the feet of the Swami and begged his forgiveness. And wonder of wonders, with one silent look the Swami conveyed to Chandakausika the value of respect for life and kindness towards all creatures which in normal parlance is called Ahimsa, non-violence. Having transformed Chandakausika thus, the Swami now travelled towards Surabhipura on the banks of the Ganges.



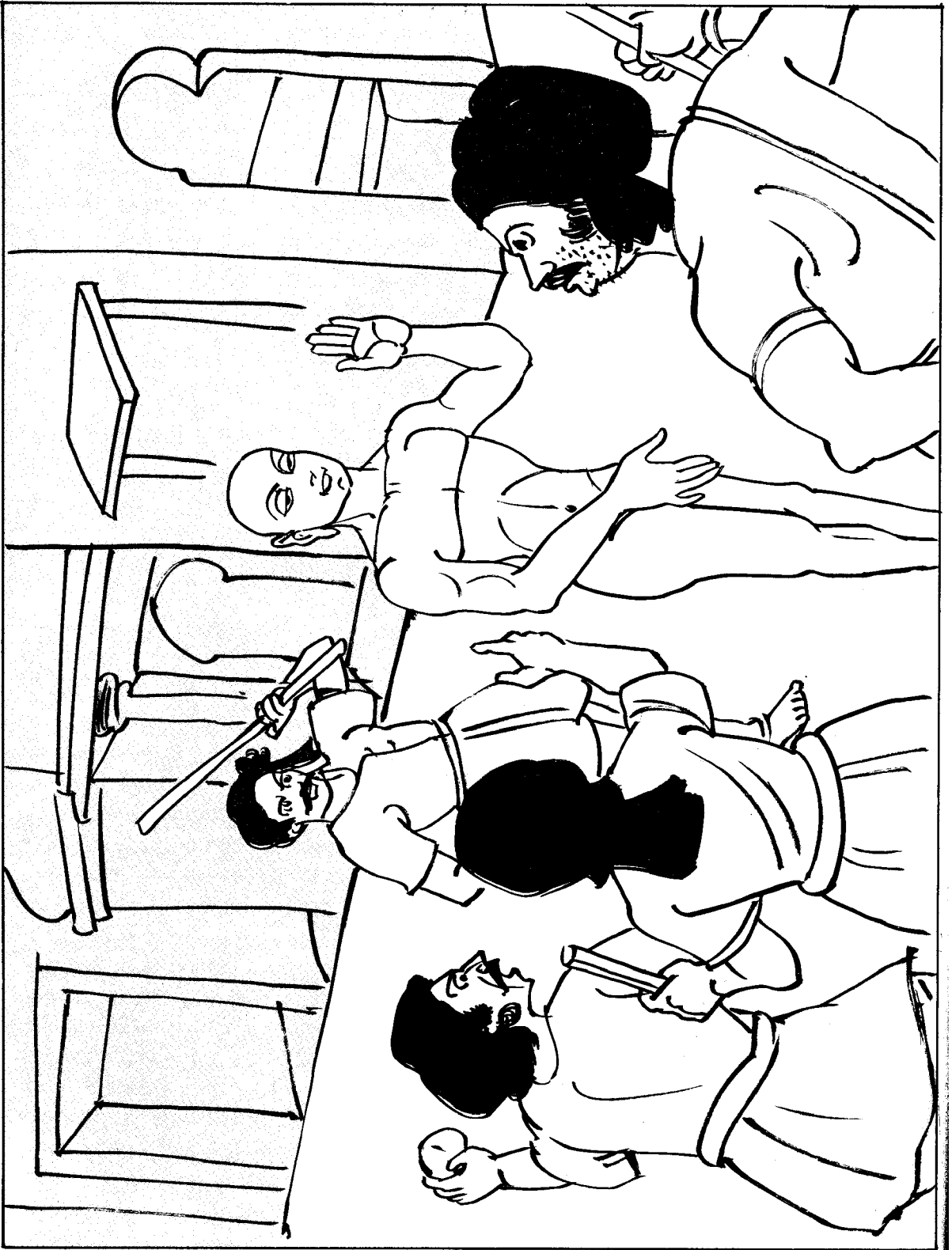
## 42. गंगा नदी की ओर प्रयाण

विशाल और गंभीर गंगा के तट पर स्वामी बैठे हुए थे। वे गंगा के प्रवाह और उसमें उठती हुई तरंगों को देख रहे थे। उस समय उनके मन में भी लहरों की भान्ति उमंगें उठ रही थीं। वे अपने अन्तर्मुखी मन में उठते हुए भावों को बड़ी निपुणता के साथ दबा रहे थे। सुरभि-ग्रामवासी वहाँ से गंगा को पार करने के लिये सिद्धदत्त की नाव का उपयोग किया करते थे। कुछ लोग गंगा पार करने के लिये आकर नाव पर बैठ गये थे। सिद्ध दत्त ने नाव में आकर बैठने के लिये किनारे पर बैठे हुए स्वामी का आह्वान किया। नाव में स्वामी के बैठने के बाद नाव का चलना शुरू हो गया। कुछ दूर जाने के बाद मौसम (वातावरण) बदल गया। आसमान में काले काले बादल छा गये। बादल गरजने लगे और बिजली कौंधने लगी। नदी में ऊपर उठती हुई लहरों के कारण नाव डौंवा डोल होने लगी। नाव में बैठे हुए लोग अपनी जानों को हथेली में रख कर भय भीत होकर जोर जोर से चीखने - चिल्लाने लगे। केवल महावीर स्वामी ही अविचल मन से, ध्यान मग्न हो कर, आसपास चारों ओर की परिस्थिति को भूलकर आत्मदर्शन कर रहे थे। ऐसी स्थिति में देखने पर नाव में यात्रा करने वालों को अचरज हुआ। स्वामी को देखते ही उनके मन में धैर्य आया। सब लोग स्वामी को प्रणाम करते रहे और अन्त में नाव सुरक्षित रूप से किनारे पर पहुँची।

## 42 JOURNEY ON THE GANGES

On the way to Surabhipura, the Swami stood on the banks of the Ganga, the broad and majestic perennial river, observing the waves rising high into the air. He was deftly suppressing the feelings of his own mind trying to rise in consonance with the rising waves. But, they became calm in the mind of the Swami who was a picture of completely subdued passions. Now it was customary for the people of Surabhipura to use the boat of Siddhadatta to ferry them across the river. Finding the Swami standing on the banks, Siddhadatta invited Mahavira also to step into the boat. After the Swami was seated, the boat began to move. But after the boat had forded a part of the river there was a sudden change in the weather and black clouds filled the sky threatening to generate a gale and a heavy down-pour. The lofty waves of the agitated river were intent on upsetting the boat. While all the other passengers were shouting and crying for help for fear that the boat would overturn and capsize, Bhagawan Mahavira sat undisturbed, absorbed in calm meditation. Now the other passengers were filled with wonderment at the unperturbed state of the Swami and were themselves reassured by it. They saluted the Swami in silent reverence and were greatly rewarded for this transformation in their minds, when the boat safely reached the other bank. Then the passengers alighted from the boat, bowed to the Swami and expressed their gratitude for saving their lives. The Swami gave them Abhaya (reassurance and blessings) and continued his journey in the direction of Vajrabhoomi.



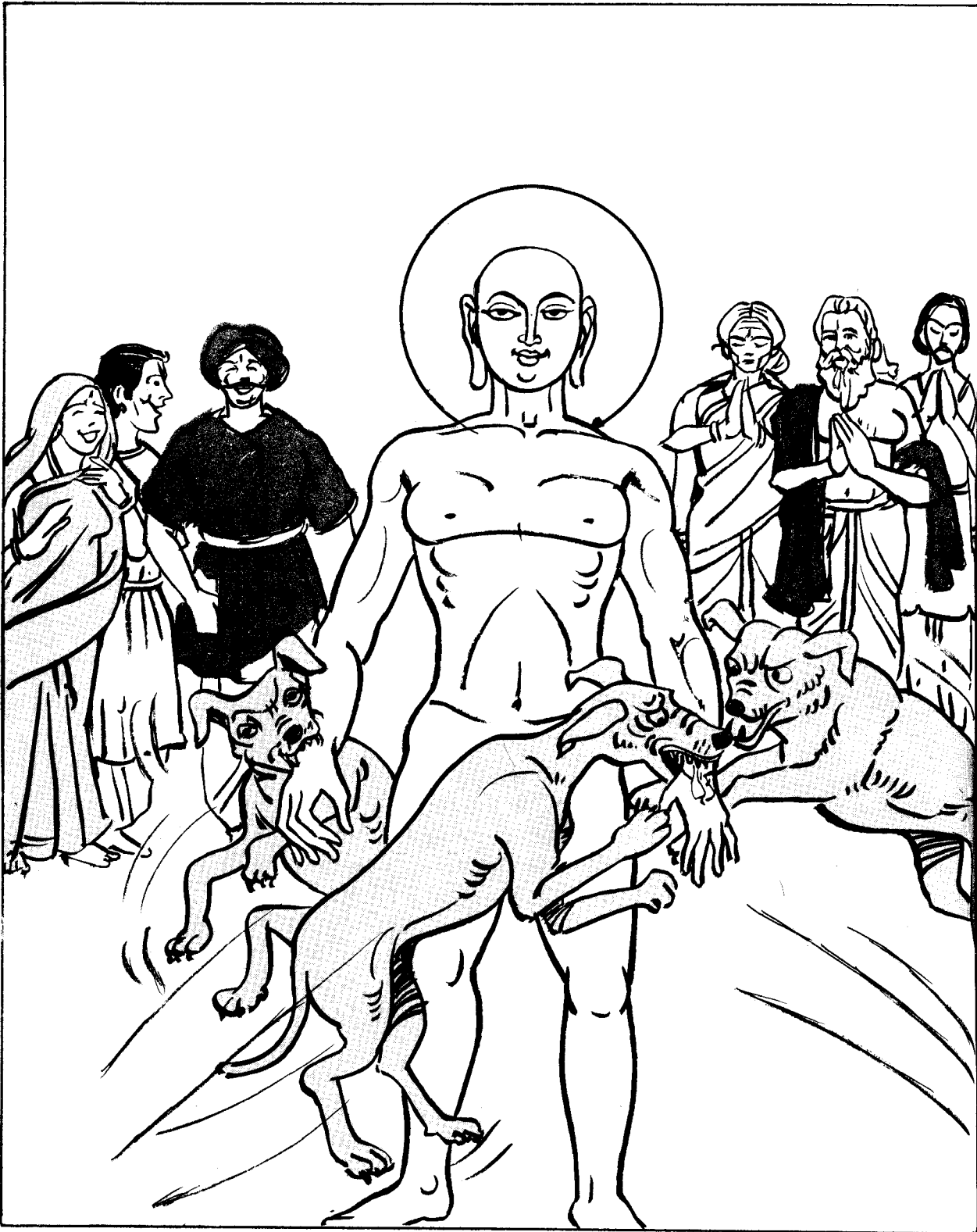


## 43. प्रशांति में विघ्न (अडचन)

वज्रभूमि में पहुँचते ही वहाँ के लोगों ने महावीर स्वामी को तंग किया। उनको अनेक कष्ट झेलने पड़े। उनके हाथ भिक्षा-पात्र की भान्ति जुड़े और वे नंगे बनाये गये। वहाँ के लोगों ने स्वामी जी को भिक्षा नहीं दी। भिक्षा के लिये गये स्वामी को वहाँ के अज्ञानी लोगों ने पत्थरों से मारा और कई तरह के हथियारों से स्वामी के शरीर को घायल किया। वे कष्टों को अनुभव कर रहे थे। वे उन सब कष्टों को प्राकृतन (पूर्व) जन्म के फल समझ रहे थे और मुस्कुराकर रह गये।

## 43 THE OBSTACLES TO COMPOSURE

After having reached Vajrabhoomi Bhagawan Mahavira underwent many physical travails on account of the cruelty of the local people. Here we must remember that the Swami cupped his own hands in the likeness of a begging bowl and that he was utterly naked, having discarded all robes. These physical characteristics struck the foolish local people as odd and in their ignorance, the locals not only refused to give alms to the Swami but also pelted stones at him and injured his body with various weapons as well. The Swami bore all these indiscretions and physical hardships caused to him as he knew that pain and pleasure are the result of past actions (actions in the previous lives). The Swami blessed his tormentors with a smile playing upon his lips and continued to proceed on his way. This lack of angry reaction further infuriated the sinful mob, who followed the Swami wherever he went and began to torment him. In the face of all these cruel acts the Swami was a picture of calmness and composure and he forgave all the wicked actions of his tormentors, even as a father would forgive the wayward actions of his son. Now the local people were overcome with remorse and shame at their own actions. They realised the divinity in the Swami and fell at his feet and begged his forgiveness. The Swami blessed them with affection and, leaving Vajrabhoomi, proceeded towards Samhabhoomi in the Kingdom of Laata.



## 44. कुत्तों से कष्ट

लाट प्रान्त में सिंहभूमि हिंसा प्रवृत्ति के लिए लुटेरों का अड्डा (निलय) है। पहाड़ों से भरी हुए वह जगह अपने ध्यान के लिये अनुकूल समझकर श्री महावीर स्वामी ध्यान-योग्य प्रदेश की खोज में चले जा रहे थे। वे सिंहभूमि के राज मार्ग पर जा रहे थे। नंगे पाँव और हाथ में हथियार लिये बिना चलते हुए श्री महावीर स्वामी वहाँ (सिंहभूमि) के लोगों को विचित्र (विलक्षण) से जान पड़े। वहाँ के लोगों ने अपने पालतू कुत्तों और सड़क पर रहने वाले कुत्तों को स्वामी की ओर उकसा कर भेजा था। जब वे कुत्ते स्वामी को काट रहे थे तब वहाँ के लोग पैशाचिक प्रवृत्ति से आनन्द विभोर होकर देखते रहे। बाकी साधु लोग कुछ कुछ हथियार हाथ में लिये हुए बचाते रहे। लेकिन स्वामीजी का दृढ़ संकल्प ही उनका हाथियार था। उसी हाथियार के सिवा और किसीप्रकार का हथियार उनके पास नहीं था। स्वामी जी ने समझा कि मैं जितने कष्ट भोग रहा हूँ वे सब कष्ट मेरे प्रात्कन (पूर्व) जन्म के पाप कर्मों के फल हैं। ये पाप गंगा के पवित्रजल से धुल कर मिट रहे हैं। कुत्तों के बहुत काटने पर स्वामी विचलित नहीं हुए। वे घायल होकर भी खून से लथपथ हुए शरीर को लेकर ऐसे समय में भी मेरूपर्वत की सी अचंचल दीक्षा से पुष्पक विमान की तरह अपनी लक्ष्य की ओर जा रहे थे। उस प्रान्त के कुछ बुद्धिमान लोगों ने इस विरपीत (वैपरीत्य) को देखकर लज्जित हो दूर से ही स्वामी को प्रणाम करके अपनी भूलों को क्षमा करने के लिए विनती की थी।

### 44 OVERCOMING CANINE FURY:

Samhabhoomi in the Kingdom of Laati, was infested with wicked people given to cruel tendencies. The whole area was mountainous, however, and Bhagawan Mahavira thought that that place would be ideal for his Dhyana. So, the Bhagawan was searching for a suitable spot in this area where he could sit in meditation. With this object in mind the Bhagawan was walking along the thoroughfares of Samhabhoomi. This naked Swami without a trident and without wearing the usual wooden sandals of the mendicants struck the local people to be odd so they set their domestic dogs upon the Swami. As the dogs were biting the Swami men and women of the place were dancing and clapping their hands with malicious and fiendish glee. It is customary for travelling mendicants to ward off biting animals by shaking and pointing their tridents at them. But this Swami seemed to be completely different from them and his iron will seemed to be the only instrument of defence. Once again the Bhagawan felt that these happenings were the result of deeds in the past life and bore them with supreme patience. He never tried to fight off the dogs and, with his body filled with dog bites and dripping blood all over, proceeded towards his goal. He resembled Mount Meru in the inflexibility of his purpose and the divine plane Pushpaka in his sense of direction. Having seen all this, some of the more discriminating residents of Samhabhoomi were ashamed of themselves and the actions of their fellow villagers and saluted the Swami from a distance as he was moving away from them. In their minds, they requested the Swami to grant them forgiveness for their cruel indiscretions.



## 45. निजमनोराज्य के लिए वही राजा

स्तूनक नामक एक गाँव में पुष्य नाम धारी एक ज्योतिषी (भविष्यद्वक्ता) रहता था। वह एक दिन गंगा में स्नान करने के लिये नदी की ओर जा रहा था। गंगा के किनारे (तट) पर रेत में उसको पाँव के निशाने (चरण-चिह्न) दिखाई पड़े। उन निशानों की जाँच करने पर पुष्य समझ गया कि ये निशान मामूली (सामान्य) आदमी के नहीं हो सकते। पाँवों के ये चिह्न किसी सम्राट के ही होंगे। वह जरूर सम्राट होगा। स्वामी को खोजते हुए वह आगे बढ़ा। वहाँ से नजदीक के एक विहार में ध्यान-मग्न स्वामी को देखकर उसने उनको प्रणाम किया। स्वामी से बातचीत करने के लिये वहीं प्रतीक्षा में बैठा था। स्वामी ने ध्यान समाप्त कर के आँखें खोली और सामने पुष्य को देख कर मुस्कराते हुए बातचीत की। स्वामी को पुष्य का मुख देखते ही मालूम हो गया कि उसके मन में क्या है। परन्तु पुष्य के मुँह खोलने के पहले ही स्वामी ने उसको सम्बोधित करते हुए कहा कि एक समय मैं राजा ही था। राज्य का शासन करते करते मैं अपने बन्धुओं के साथ सुख से रहा था। पर सन्यास की दीक्षा जब से मैंने ग्रहण की तब से मैंने अहिंसा को ही अपनी माता, एक निष्ठा से ध्यान में रहने को ही अपना पिता, वैराग्य को ही अपना चोटा भाई, शान्ति को ही पत्नी, दया को ही अपनी बेटी, दिव्यानुभूति को ही अपना घर, सत्य को ही अपना मित्र समझा। स्वामी की इन बातों को सुनने के बाद पुष्य ने समझ लिया कि स्वामी राज्य-शासन करने वाला राजा नहीं है बल्कि निजमनोराज्य का शासन करनेवाला राजा है। मन में ऐसा समझ कर पुष्य अपने गाँव की ओर चला गया।

## 45 THE RULER OF THE REALM OF THE MIND

In a certain Village called Sthunak, there dwelt a Soothsayer called Pushya. One day he proceeded to the Ganga to have his ablutions. There he saw on the sandy bank the foot prints of Bhagawan Mahavira. Being a seer and soothsayer Pushya looked at the foot-prints intently and came to the conclusion that the owner of the foot-prints was no ordinary mortal. His special knowledge told him that the person must be a King of Kings and so he looked in all directions and ultimately proceeded to a Vihara (a garden meant for Ascetics) which was nearby. Then to his great delight Pushya saw the Swami seated there in deep meditation. Pushya patiently waited for the Swami to conclude his Dhyana, and was rewarded when the Swami at last opened his eyes and greeted Pushya with a smile. The moment he saw the face of Pushya the Swami understood what in the mind of Pushya was. Then even before Pushya could air his suspicions, Bhagawan Mahavira informed him that he was a King once upon a time and that he rolled in wealth and luxury at that time. But after accepting Sanyasa Deeksha (vow of renunciation) he has come to regard Non-Violence (as) his Mother, Meditation (as) his Father, the Spirit of Renunciation (as) his Brother, Quiescence (as) his Consort, Kindness (as) Daughter, Spiritual Experience (as) his Home and Truth (as) his Companion. Thus spake the Swami. Pushya now realised that he was a King who ruled not a territory nor a people but one who obtained complete control over his mind and over its realm. With this knowledge Pushya retraced his steps towards his native village.



## 46. उत्पाल से बातचीत

स्वामी जी लगातार अपना अधिक से अधिक समय ध्यान में लगाते हुए निद्रा और आहार छोड़कर धीरे धीरे अपने लक्ष्य की ओर जा रहे थे। एक दिन अस्ति गाँव में एक निष्ठा से स्वामी जी ध्यान में मग्न हो गये थे। उसी वक्त उस जगह पर उत्पाल नामक एक जैन मुनि आये। वे पार्श्वनाथ जी की धर्म परम्परा के अनुयायी थे। उन्होंने स्वामी जी की अनन्य दीक्षा देख कर अपनी दिव्य दृष्टि से उनकी पूर्वपरम्परा को देख ॥ ये तो वही हैं जो शूलपाणिचैत्य में स्वामी जी के अनुभव देखकर उन से बातचीत करने के लिए वहीं पर बैठ गये। स्वामी जी जब ध्यान से बाहर आये तब उन्होंने भक्ति भाव युक्त हो कर एक निष्ठयोगेश्वर के रूप में स्वामी को जान लिया और समझ गये कि स्वामी जी को थोड़े ही दिनों में केवल ज्ञान की प्राप्ति हो जायेगी। ज्योतिषी ने यह सब बताया। इसके बाद शूल पाणिचैत्य में स्वामीजी को जो अनुभव हुए उन सबका का व्यख्यान किया। स्वामीजी का भयंकर राक्षस से लड़ना स्वामीजी के पिछले जन्म की वासनाओं (संस्कारों) को मिटाने के प्रयत्नों का प्रतिनिधित्व करता है। अन्दर बसी हुई आत्मा के राक्षात्कार अर्थात् स्वामीजी के चित्त का अन्तर्मुखी होने का प्रतिनिधित्व करता है। कण्ड के दो आभरण भविष्य द्वाणी करते हैं कि मानव

## 46 CONVERSATION WITH UTPALA

As days went by Bhagawan Mahavira came to devote more and more of his time to Dhyana (Meditation) only, even neglecting to take timely food or sleep. He was proceeding steadily towards his goal. One day, when Bhagawan Mahavira was deeply immersed in meditation, in a Chaitya ( a place for mendicants) in the village of Asthi, there came a monk by name Utpala to the Swami. Utpala belonged to the philosophical school and tradition of Tirthankar Parshvanathaji. Now this mendicant, being gifted with ability to see into the past (present and future) was able to see in a flash back the experiences of the Swami in the temple of Shulapaniyaksha as also the facts relating to the life of the Swami. So he wanted to converse with the Swami. When the Swami came out of his meditation, Utpala bowed to him and, after looking at him fixedly in reverential awe, praised him as the Lord of the Yogis (Prince of Realised Souls). He also foretold that the Swami would soon realise Kevalajnana (the ultimate wisdom); then he interpreted the experiences that the Swami underwent in the Chaitya of Shulapaniyaksha as follows:

The fight with the horrible monster (Shulapaniyaksha) represents the efforts to overcome the pulls of the past lives; the white Cuckoo represents the Swami's mind turning inwards (to realise the indwelling soul). The Cuckoo with Multicoloured feathers represents the perfection attained in Anekantavada. – multi-pronged probing of Truth. The two

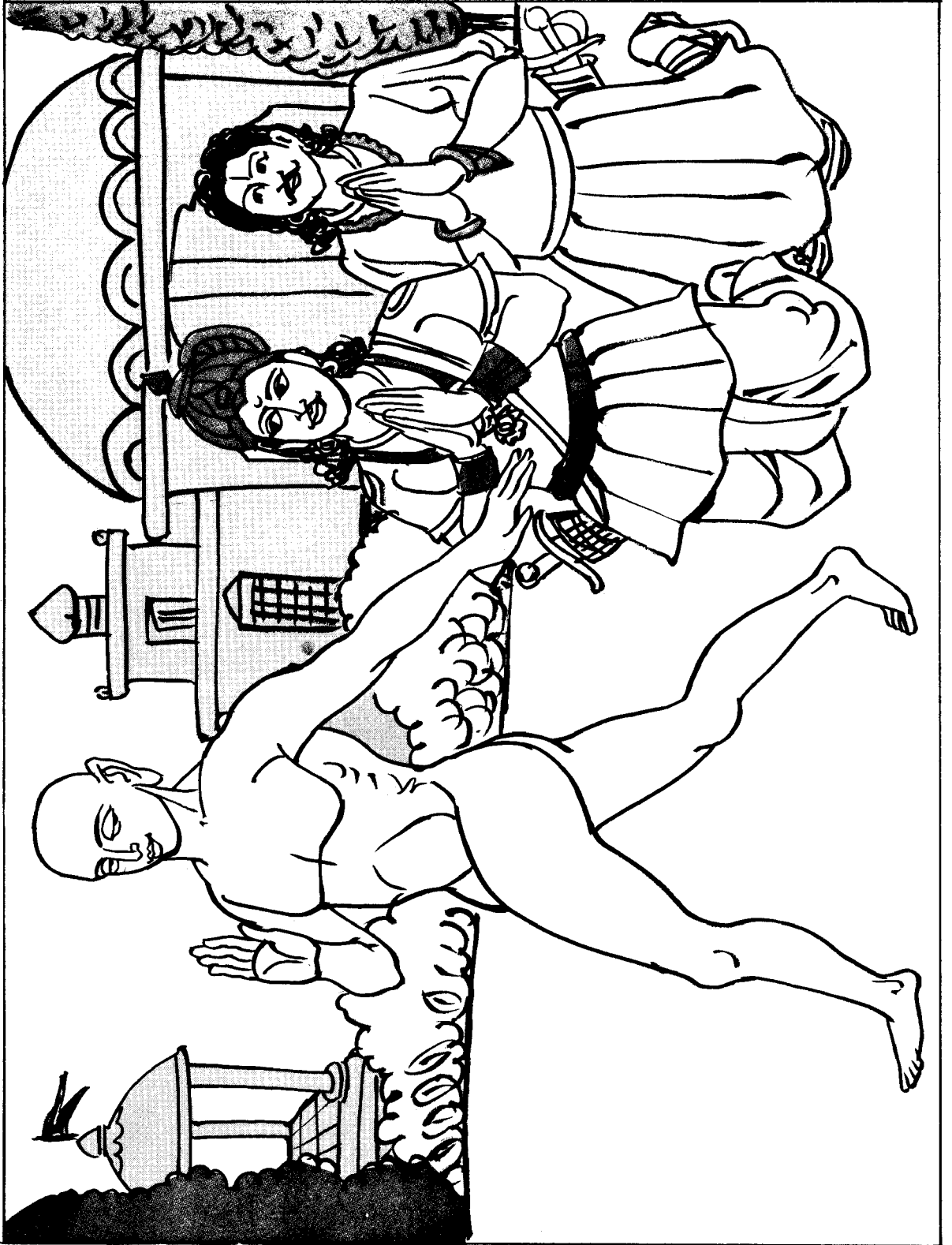




जाति के गृहस्थ और सन्यासी (भिक्षु) के लिये भगवान के बताये हुए विधि-नियम क्या क्या है जब कि गायों की झुण्ड स्वामी के धर्म-प्रचार का संकेत करती है। कमलों का सरोवर स्वामीजी को प्राप्त मानवातीत अथवा अलौकिक शक्तियों को इंगित करता है और समुद्र को पार करना भव सागर अर्थात् जीवन-सागर को पार करने या लौघने की बात की सूचना देता है। आँखों को चका चौंध करने वाले सूरज का प्रकाश, केवल अथवा अन्तिमज्ञान का द्योतक है। अन्त में उत्पल ने प्रकट किया कि स्वामीजी दृष्टि मेरुके पर्वत पर उनका सिंहासनासीन होना संकेत करता है कि स्वामी जी का अन्तिम ध्येय अथवा गम्य धर्म की स्थापना है। भगवान महावीर ने उत्पल को आशीशों दीं और गण्डकी नदी की तरफ बढ़े।



Ornaments of the Neck foretell the Bhagawan's teaching of the duties of the Householder and the Mendicant, while the Herd of Cows stands for the propagation of Dharma by the Swami. The Lotus Pond signifies the Supernatural powers possessed by the Swami while the Crossing of the Sea signifies the fording of the sea of life. The blinding Sun stands for Kevalajnana (the Ultimate Wisdom). Finally Utpala revealed that the vision of the Swami adorning the Throne on Mount Meru signifies the founding of Dharma (the establishment of the Rule of Duty) as the ultimate goal of the Swami. Bhagawan Mahavira blessed Utpala and then proceeded towards the river Gandaki.

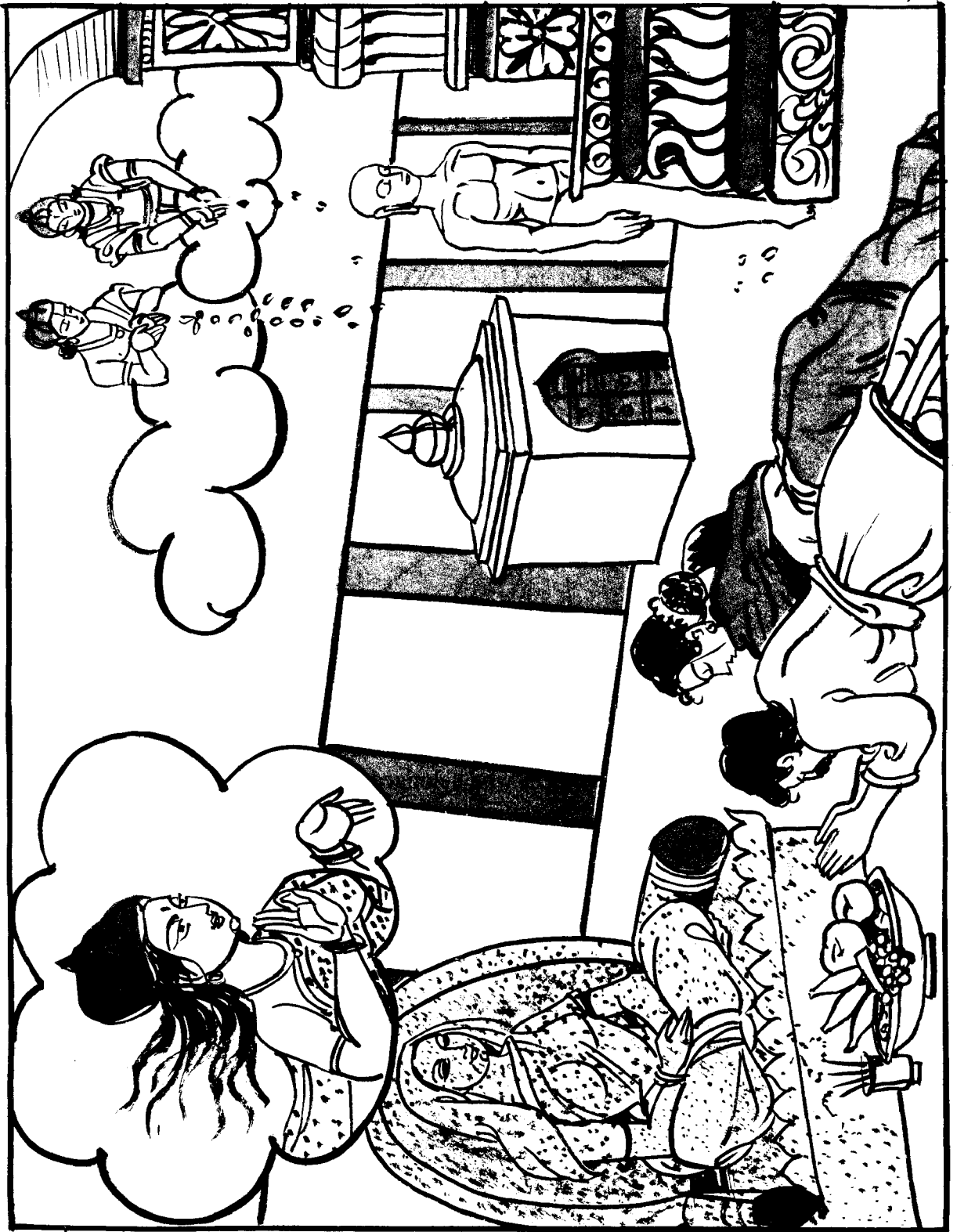


## 47. मर्यादा से अतीत

स्वामी जी श्वेतव्य नगर से होते हुए पुरिंटाल नगर की तरफ बढ़े चले जा रहे थे। स्थानीय शासक प्रादेश था। उस युवराज ने, जो स्थानीय शासक का वंशज था स्वामी से अपना आतिथ्य स्वीकार करने की प्रार्थना की। लेकिन स्वामी ने राज्य और राज-भागों को छोड़ देने के समय से आतिथ्य और सेवा लेना इनकार कर दिया। तो भी स्वामी ने युवराज (शासक) को आशीर्वाद दिया और अपने अगले आध्यात्मिक चिन्तन वा अभ्यास जारी रखने के लिये उत्तर की ओर तुरंत चल पड़े।

## 47 THE SWAMI: BEYOND TEMPTATIONS AND HONOURS

The Bhagawan was proceeding through the city of Svetavya towards the town of Purimtal. The local ruler was Pradesh. The princes who belonged to the dynasty of the ruler begged the Swami to be their guest but the Swami was reluctant to receive their services since he had given up his Kingdom as well as his royal pleasures. Nevertheless, the Swami blessed the princes and was soon on his way, in the direction of the North, of his further spiritual exercises.

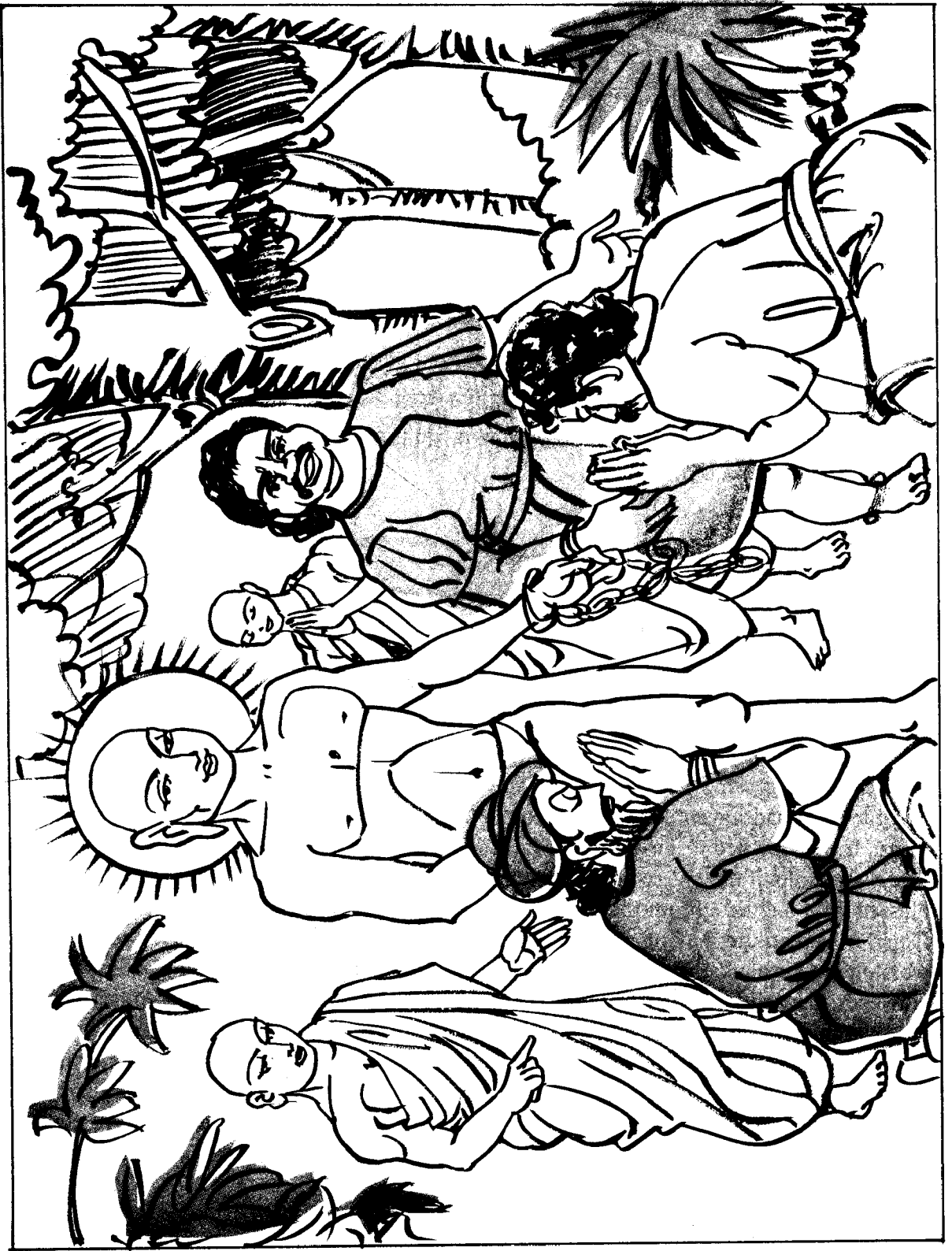


## 48. प्रत्यक्ष देवता

स्वामी पुरिमटाल पहुँचे। वहाँ वगूरू नामक एक व्यापारी था। उनकी पत्नी का नाम भद्र था। उन्हें बच्चे नहीं थे। वे दोनों एक बार सैर करने के लिए वहाँ के राज बगीचा की ओर गये थे। वहाँ खण्डहरों में 'अर्हतमल्लि' का मंदिर था। वहाँ के मन्दिर की स्थिति देखकर, मंदिर के अन्दर अर्हत मल्लि को प्रणाम करके दोनों ने हाथा जोड़कर शपथ ली कि - अगर हमको सन्तान हुई तो इस मंदिर को पुनर्निर्माण करेंगे। कुछ ही दिनों में उनको सन्तान हुई। तभी से पति-पत्नी उस मंदिर को पुनर्निर्माण करने लगे। वे दोनों वह मंदिर के तीर्थन्कर को सेवा कर रहे थे। जिस दिन देवी की पूजा करने के वास्ते आये उस दिन महावीर स्वामी मंदिर के द्वार पर अंतरमुखी होकर एकाग्र ध्यान में खड़े हुए थे। वे दोनों मंदिर के द्वार पर खड़े हुए स्वामी की ओर ध्यान न देकर मंदिर के भगवान की पूजा करने लगे। तब दिव्यवाणी ने कहा - यह कितना अचरज का दृश्य है! आँखों के सामने सजीव खड़े हुए स्वामी को छोड़कर, मंदिर में निर्जीव पत्थर की पूजा मानव कर रहे हैं। दिव्यवाणी की बातों को सुनकर पति-पत्नी ने अपनी भूल को पहचानकर स्वामी को प्रणाम किया। अपने मन के संतुष्ट होने तक स्वामी को सेवा करके अपने घर चल गये।

## 48 DIVINITY IN HUMAN FORM

After a long journey Bhagawan Mahavira reached Purimtal. There lived in the town a businessman by name Vaggur. His wife was Bhadra. The couple was childless. Once Vaggur and Bhadra went for a walk through the royal gardens. There they saw a temple in ruins. It was devoted to Tirthankara Malli. Then the couple vowed that they would renovate the temple, if they were blessed with an issue. Soon after this incident the couple was blessed with a child. From that time onwards Vaggur and his wife devoutly worshipped their Tirthankar after having rebuilt the temple. One day when they came to the temple to worship the Tirthankar as usual, they saw the Swami stood at the threshold in deep Dhyana. However, they did not attach much importance to the presence of the Swami and were engaged in the ritual of worship. Then they heard the celestial voice addressing them and saying thus "What a wonder that people have been worshipping a stone idol ignoring the Divinity present in human shape right in front". Along with the others this couple also heard this celestial voice and having realised that the Divinity in human shape was the Swami himself, at once went up to him, prostrated themselves at his feet and having paid their respects, went back home.



## 49. निन्दा

इसके बाद स्वामी जी चौरख नामक शहर को पहुँचे। वहाँ मक्कलि गोशाल नामक अजीवक स्वामी के साथ घूमने लगे। स्वामी जी ने निर्विकार होकर अपने साथ उसने घूमने के लिए मान लिया। वह सारा प्रदेश चोरों से भरा था। हमेशा राजा के सिपाही आने जानेवालों की जाँच करके भेजा करते थे। अपनी काम पर नियत राजा के सिपाहियों ने स्वामी जी और गोशाल को चोर समझा और उनसे कई प्रश्न पूछे। तब स्वामी मौन-व्रत में थे। किसी प्रकार प्रश्न का उत्तर नहीं मिला तो सिपाहियों ने स्वामी और गोशाल को जंजीरों से बन्दी बनाया। उन्हें सजा देते हुए राज-मार्ग पर ले जा रहे थे। उसी मार्ग से जाते हुए समा और विजय ने यह दृश्य देखा। बिना किसी कसूर के स्वामीजी को सजा का अनुभव करते देख कर वे दोनों बहुत खिन्न और दुःखी हुए। उन्होंने राजा के सिपाहियों को स्वामीजी के पहले की घटनाओं अथवा परिस्थितियों को बताया। यह सुनकर राजा के सिपाहियों ने पश्चात्ताप किया और उन्होंने स्वामीजी के चरणों पर सिर नवा कर क्षमा माँगे। दया के प्रतिरूप श्री श्रमण भगवान महावीर स्वामीजी ने मुस्कुराते हुए उन्हें आशीर्वाद दिये और चंपानगर की दिशा में चल पड़े। गोशाल भी स्वामीजी के पीछे चले।

## 49 SLANDER

Next the Swami reached a town called Chaurakh. Then an Ajivaka by name Makkali Goshala began to follow the Swami wherever he went. The Swami allowed the Ajivaka to accompany him without Himself being affected in anyway. However, the whole area was infested with thieves and the King's soldiers were given orders to check and inspect the strangers and travellers into and out of the town. As a part of this routine duty the soldiers suspected the Swami and Gaushala to be thieves and tried to interrogate them. At that time the Swami was observing the vow of silence and would not give any reply to the questions. The King's servants shackled the Swami and Gaushala as a part of their duty and were marching them through the main thoroughfares. It so happened that two persons by name Sama and Vijaya who were passing along that way were much troubled in their minds at the Swami being subjected to such an indignity for no fault of his. Then they stepped in front of the King's servants and related to them the antecedents of the Swami. Then the King's servants felt ashamed of themselves and fell at the feet of the Swami and requested him to forgive their indiscretion. The Swami, as was his wont, merely smiled at them without showing any annoyance. What was more, he heartily blessed his now repentant tormentors and turned his steps towards the city of Chamna. Gaushala trailed the Swami.





## 50. चन्दन बाला का वृत्त (चरित्र)

स्वामी जी चंपानगर में जा पहुँचे। दधिवाहन उस राज्य का पालन करते थे। उनका पत्नी का नाम था घरणी और बेटी का नाम वसुमति। स्वामीजी का उस शहर में पहुँचने के पहले से वत्स राज्य के राजा शतानीक अपने सेनाध्यक्ष काकुमुख के साथ उस नगर पर चढ़ाई कर दी। उसने उस नगर का विध्वंश करके राजा दधिवाहन और राणी घरणी को मार डाला। काकुमुख ने राजकुमारी वसुमति को बन्दी बनाया और वहाँ के आचार-व्यवहार के अनुसार दासी के रूप में बेचने के लिये हाटमें उसे ठहराया। वसुमति को खरीदने के लिये कोई नहीं आया। सब लोग खड़े होकर सिर्फ देख रहे हैं - “कौन राजकुमारी को खरी देंगे?” उसी मार्ग से जाते हुए प्रमुख व्यापारी घनवाहन उस कन्या की दयनीय (सोचनीय) स्थिति पर तरस कर, उसको अपनी बेटी के बराबर मान कर धन चुकाकर अपने घर को ले गये। अपनी पत्नी मूला को इस कन्या का चन्दनबाला के नाम से परिचय दिया। चन्दनबाला के नाम से पुकारते हुए राजकुमारी वसुमति के सौन्दर्य को देखकर घनवाहन की पत्नी मूला ईर्ष्या करने लगे। व्यापारी के घर में न होने का समय देखकर उसने नाई को बुलाया और चन्दनबाला का सिर मुड़वाया। इससे सुन्तुष्ट न होकर उसने उसे जंजीरों (साँकलों) से बँधवाया और घर के भूगर्भ की कोठरी में गुप्त रूप से बन्दी बनवा कर रख दिया।

## 50 THE STORY OF CHANDANABALA

By and by the Swami entered the city of Champa. The Kingdom was being ruled by King Dadhivahana. The queen was Dharani and the Princess was Vasumathi. Already by the time the Swami reached this city, it had been invaded by King Shatanika of the Kingdom of Vatsa along with his Commander-in-Chief Kakumukha. The city was sacked and King Dadhivahana and queen Dharani were killed. Kakumukha, the Commander-in-Chief took princess Vasumathi captive and, in accordance with the then prevailing custom, tried to sell away the princess as a slave in the local shandy. As Vasumathi was a princess nobody came forward to offer a suitable price. A certain merchant by name Dhanavahana happened to pass along the route and saw the pitiable state in which the princess was. He felt like a parent towards the princess, paid the quoted price and took her along with him to his own home. There he introduced her to his wife Moola as Chandanabala, a maiden. Now Moola was affected by jealousy at the beauty of the princess and was bent upon harming her. One day, when Dhanavahana was away from home, Moola sent for a barber and had Chandanabala tonsured. Then Moola had the princess shackled and imprisoned in an underground cell in the house.

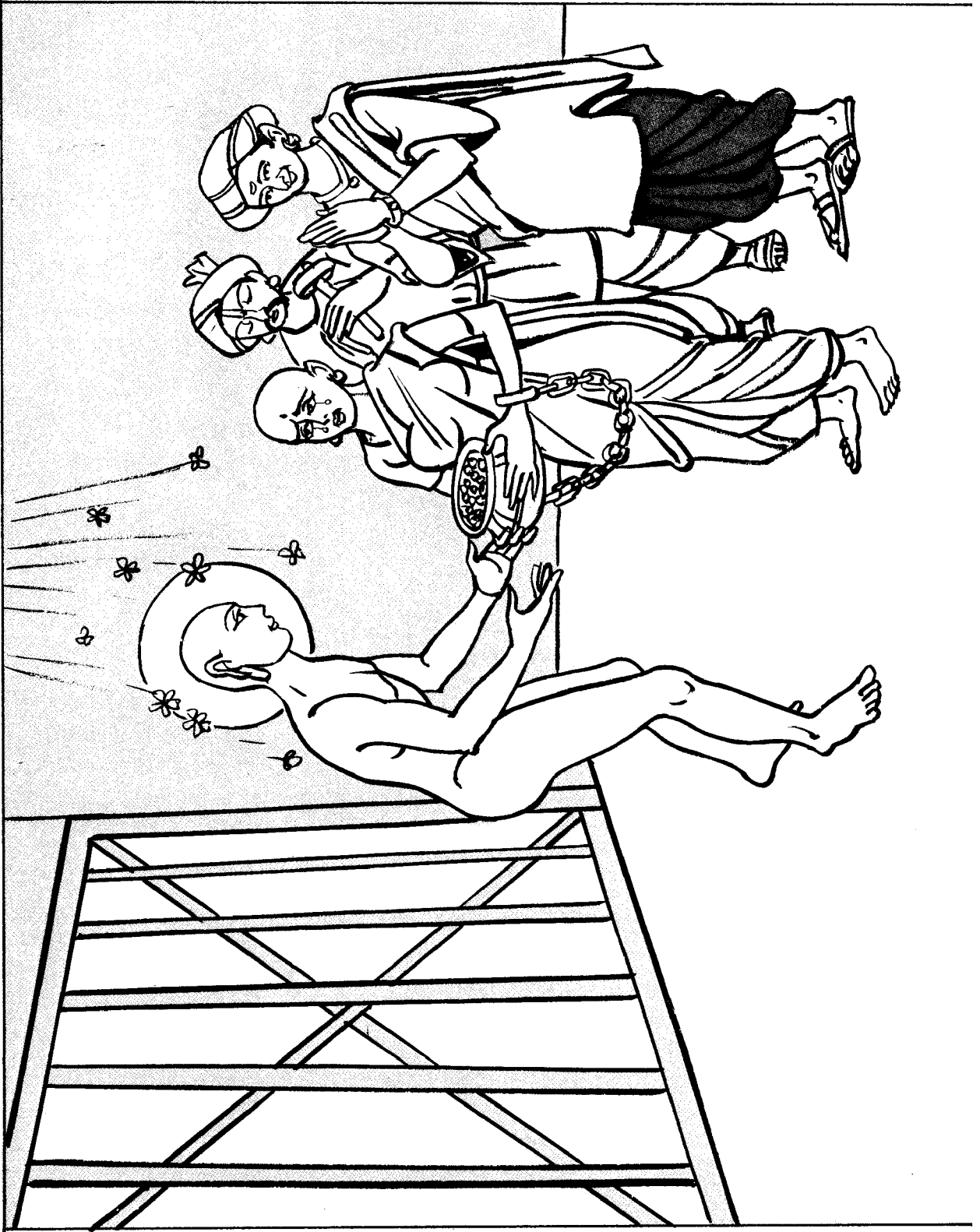


## 51. चन्दनबाला पर स्वामी की कृपा

धनवाहन को घर लौट आने पर चन्दनबाला दिखाई नहीं पड़ी। किसी ने भी उसकी दुस्थिति के बारे में नहीं बताया। सारे कमरों में खोजने के बाद धनवाहन को अन्त में भूगर्भ के कमरे में धनवाहन ने बन्दी के रूप में पड़ी हुई चन्दनबाला को देख पाया। उसने उस हालत में चन्दनबाला को देखा, उस पर तरस खाया (दर्याद्रि हुआ), वहाँ पर उबले हुए उड़द चन्दनबाला के हाथ में देकर खाने को कहा। उसकी जजीरों को तोड़ने के लिये लुहार को बुलाने को गया। इधर महावीर स्वामीजी को ध्यान निष्ठा दिन व दिन बढ़ती रही और वे केवल ज्ञान साधना की ओर जा रहे थे। उस प्रकार निष्ठा में निमग्न स्वामीजी की नजरों में चन्दनबाला के कष्टों के दृश्य एक एक करके आने लगे। एक सप्ताह से तब तक स्वामी जी ने किसी से भिक्षा नहीं ली थी। उसी क्षण स्वामीजी ने प्रण किया कि अगर मुझे किसी से भिक्षा लेनी है तो मैं उसी स्त्री के हाथ से भिक्षा लूँगा जो मूँड मुडवाकर, बन्दी बनाकर, आँखों में आँसू भरकर उबले हुए उड़द हाथ में ले भिक्षा में देती है। चन्दनबाला से मिलने के लिये स्वामीजी महादेव राजमार्ग पर जा रहे थे। समय दो पहर का था। स्वामी जी को भिक्षा देने के लिये लोग अपने अपने हाथों में पात्रों को लिये हुए पंक्ति में खड़े हुए थे। स्वामी जी ने उन लोगों के हाथ की भिक्षा न लेकर सीधे धनवाहन के घर पहुँच कर चन्दनबाला को देखा। उस समय चन्दनबाला अपने को इस स्थिति से उबारने (बचाने) के लिये भगवान से प्रार्थना कर रही थी। इस विपत्ति से मुक्त करने (छुड़ाने)

### 51 SWAMI TAKES PITY ON CHANDANABALA

When Dhanavahana came back home he could not find Chandanabala in the house. His enquiries about the whereabouts of the princess did not bear fruit. However, Dhanavahana had the house thoroughly searched and ultimately found her imprisoned in the underground cell. Dhanavahana was sorry for her and gave her some boiled blackgram to eat and himself proceeded to fetch a blacksmith to have the shackles removed. In the meantime, the meditation of Bhagawan Mahavira was becoming more and more rewarding, and was irresistibly travelling towards Kevalajnana. Then, surprisingly, on this particular day the Swami saw in his mind's eye the pictures of torture affecting Chandanabala. For many days then, the Swami had not been accepting any Bhiksha (Alms) but now he vowed to accept alms from a woman who would exactly fit the description of the suffering princess with her boiled blackgram in her possession. In pursuit of this vow the Swami was proceeding through the thoroughfares of the city. It was noon and many housewives were ready standing at the thresholds of their houses to give alms to the Swami. But the Swami would not accept Alms from anyone of them. Straightaway, he reached the cell in the house of Dhanavahana and saw Chandanabala standing there with a bent head, lamenting her fate and expecting succour from Bhagawan Mahavira only. All the time weeping bitterly, her eyes filled with tears, she was awaiting the arrival of the Swami. Suddenly she heard her name being uttered



वाला श्रमण भगवान ही है। ऐसा समझकर आँसू भरी आँखों से स्वामी के आने की राह देख रही थी। स्वामी के आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी।

“चन्दनबाला” कह कर पुकारने का दिव्य उच्चारण स्वामी के ओठों से आया। उच्चारण के शब्दों को सुनते ही चन्दनबाला सिर उठा कर स्वामी जी को देखा और तुरंत उनके चरणों में प्रणाम किया। स्वामी जी ने चन्दनबाला को देख कर कृपापूर्ण नेत्रों से उस पर अनुग्रह किया। भिक्षा के लिये स्वामी जी ने अपने हाथ बढ़ाये। इसे अपना परम भाग्य मान कर चन्दनबाला ने तुरन्त उबले हुए उड़द स्वामी के हाथ में रखे। जिस क्षण स्वामी जी ने हाथ में भिक्षा ली उस क्षण चन्दनबाला पहले की तरह राजकुमारी के रूप में बदल गई।

देव गण धनवाहन के घर पर फूल बरसाये। उसी समय लुहार को साथ लिये आये धनवाहन इस दृश्य को देख कर बहुत प्रसन्न हो गये। स्वामी जी का स्वयं अपने घर पधारना अपना परम भाग्य समझकर उसने स्वामी के चरणों पर गिर कर प्रणाम किया और उनका यश गाया।

in a tone of compassion and looking in the direction of the utterer whom should she see, on lifting her head, but Bhagawan Mahavira? At once Chandanabala bowed to his feet and begged for protection. The Swami looked at her in a compassionate way and extended his cupped hands towards her, seeking alms. Chandanabala immediately gave away the quantity of boiled blackgram with her as alms to the Swami. She thought that it was her good luck that she could give alms to such a holy person. The moment she gave alms to the Swami tresses of hair grew upon her head and Chandanabala became her former lovely self. Even the Gods were struck with wonderment at this happening and they sent down a shower of flowers upon the house of Dhanavahana. Just at that moment, Dhanavahana who came there accompanied by a blacksmith, saw the sight and was greatly filled with wonderment. He thought that it was his goodluck to be a witness to the miracle. He immediately fell at the feet of the Swami and began to praise him. The Swami then blessed both Chandanabala and Dhanavahana and immediately left the spot and travelled towards the village Jumbhaka.



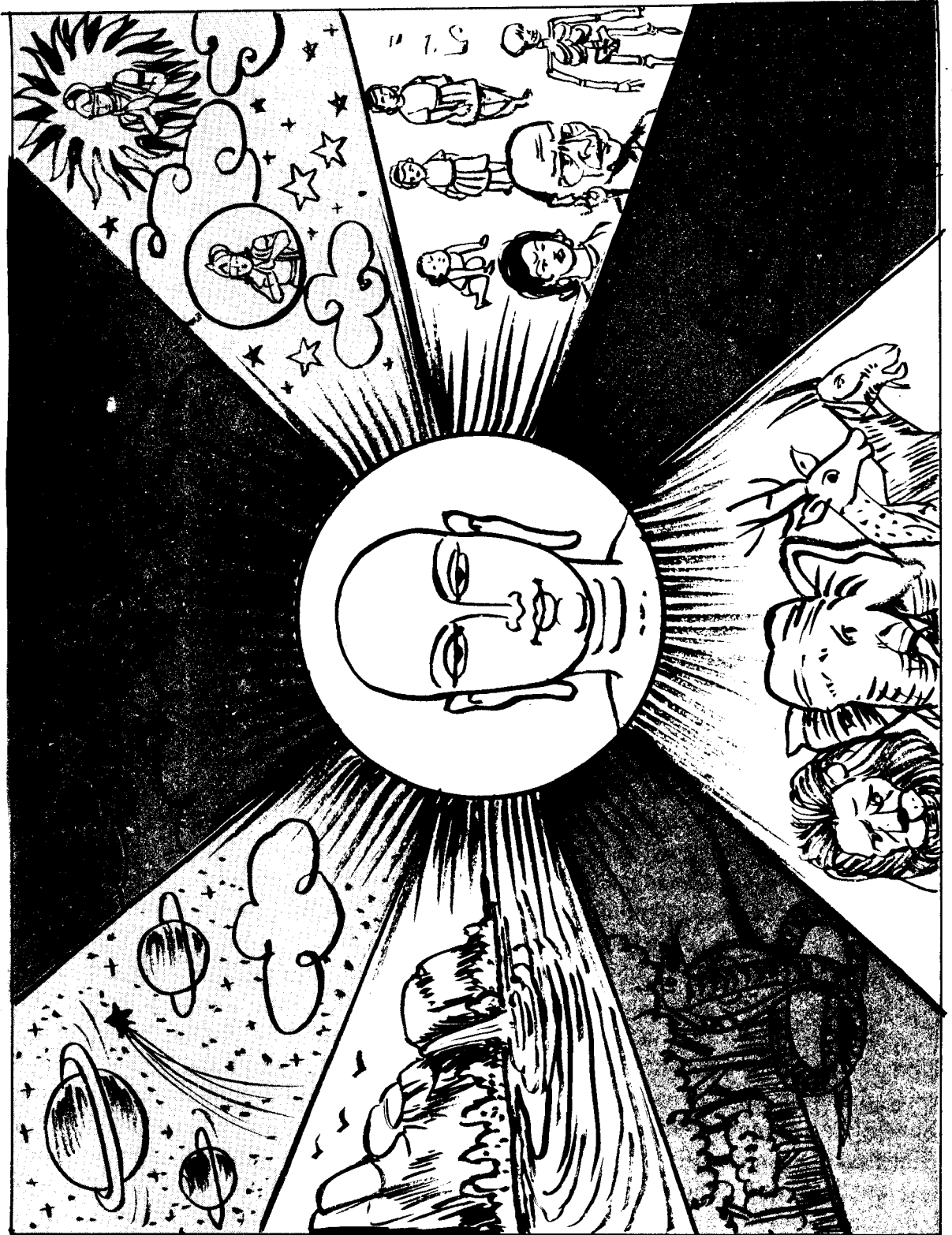
## 52. केवल ज्ञान

स्वामी जी अभी तक दो दिनों से उपवास दीक्षा में थे। स्वामी जी जृम्भहक नामक गाँव में श्यामक नामक गृहस्थ के घर में ईशान्य दिशा में शिथिलावस्था वाले एक मंदिर के पास, 'गोघोहिक' मुद्रा में बैठे हुए थे। वह रिजुपालिका नदी का प्रांत था। समय प्रातः काल का था। अभी सूर्योदय हो रहा था। उस समय स्वामी जी को जितना बल और तेज के साथ मिली थी उतनी शक्ति इस के पहले नहीं मिली थी। सचमुच ज्योतिष शास्त्र के अनुसार वह दिव्य और भव्य मुहूर्त था। चाँद उत्तर फलगुनी नक्षत्र में चल रहा था। स्वामी जी के मन को एकाएक प्राप्त हुआ था। उन्हें सम्यास की दीक्षा ग्रहण करके बारह साल छः महीने पन्द्रह दिन हुए थे। तब जो ज्ञान स्वामी जी को मिला था वह ज्ञान अनन्त, सर्वश्रेष्ठ, आटंक रहित, अनर्गल और परिपूर्ण है। इस प्रकार केवल ज्ञान को प्राप्त करके श्रमण भगवान उस ज्ञानामृत में डूब कर उसी स्थिति में ४८ (अठ्चालीस) मिनिट (निमिष) रह गये थे। उस प्रकार वीतराग महावीर अर्हन्त, जिन, तीर्थंकर, परिपूर्ण ज्ञान से प्रकाशमान हुए थे। देवगण ने स्वामी जी पर ऊपर से फूलों की वर्षा की। इन्द्र ने अपने देवगण - सहित स्वामी के दर्शन करके भक्ति पूर्वक प्रशंसा की। स्वामी जी को सब दिशाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ी। वे सब चीजों को, सब में, सब दिशाओं में स्पष्ट रूप से देख सके। वे कहाँ पैदा होते हैं और कहाँ जाते

## 52 KEVALAJNANA

In the village of Jrumbhaka, the Swami was seated in a posture known as “Godhohika” in the north-east corner of the house of Syamaka, a villager. Nearby was a temple in ruins. The Swamy had been fasting for two days by then. River Rijupalika flowed by the temple, the time was early morning and the Sun was just rising from the eastern horizon. The swamy felt a new vigour and radiance permeating his body and he felt that this was a new experience. According to astronomy, the time was the period of “Vijaya” - the period when the moon travels through the house of Uttaraphalguni, a star. All of a sudden, the Swamy was endowed with “KEVALAJNANA” the ultimate knowledge or omniscience as they call it in English. By then the Swamy had completed precisely a monkhood of 12 years, 6 months and 15 days. The asceticism the Swamy had undertaken for the reward of the ultimate knowledge thus bore fruit. The knowledge that Mahavira gained during that period was infinite, supreme, free of obstacles, unimpeded and complete in all respects. Having gained this Supreme Knowledge in this fashion, Shramana Bhagawan Mahavira was immersed in Supreme Bliss; and he remained still for 48 minutes in that state. Having thus been divested of all earthly desires Mahavira shone like an Arhantha, a Jina and a Tirthankara – who are endowed with Supreme Knowledge. The Gods rained down a shower of flowers to celebrate this moment. Indra the King of Gods, followed by his divine retinue, paid a



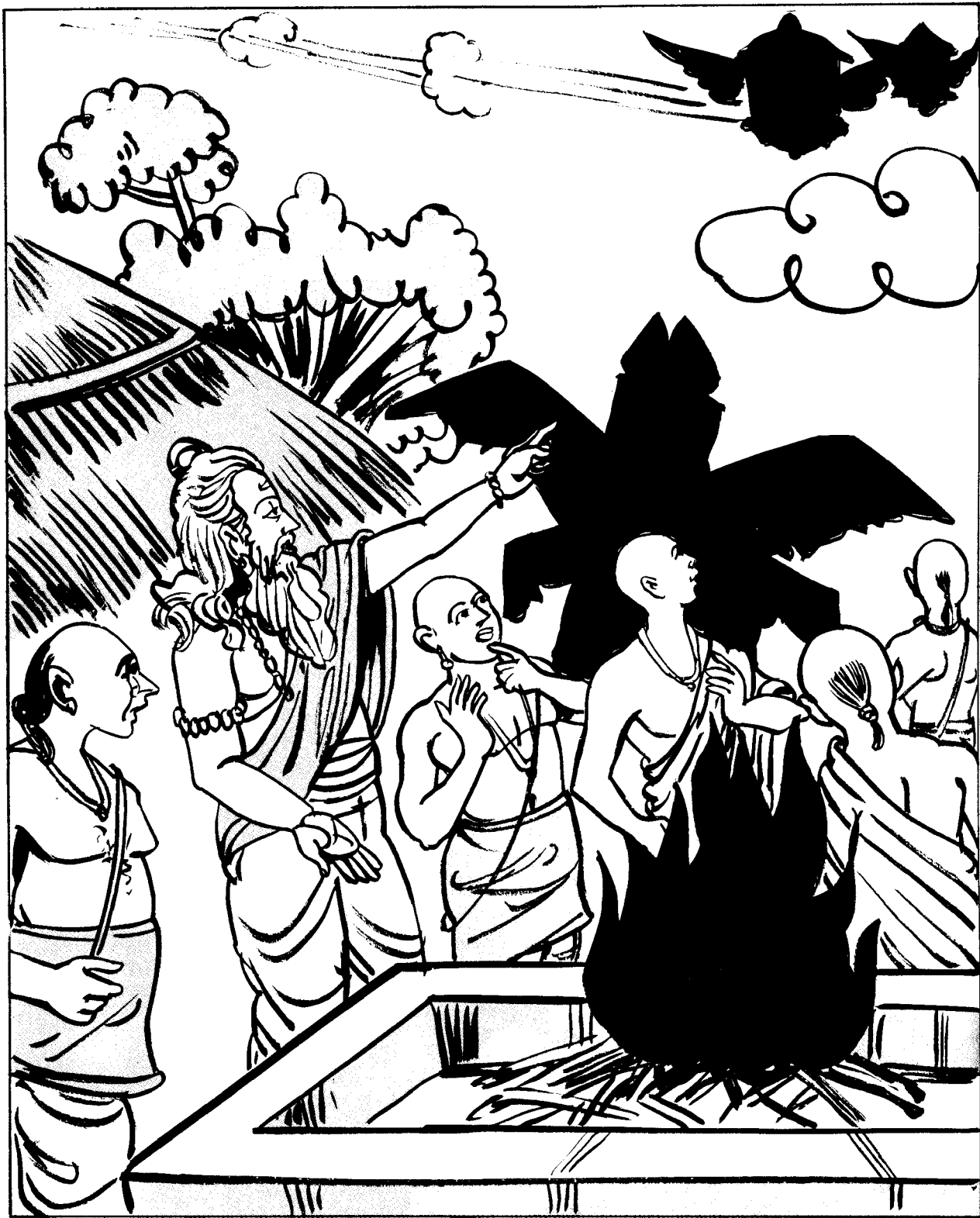


हैं - इसे भी वे देख सके। सब मानव, जन्तु-समूह कर्मफल के अनुसार निर्याण के बाद किस प्रकार पुनः पैदा होते हैं - ये सब सुस्पष्ट दिखाई पड़े थे। जगत के सारे कार्यकलाप स्वामीजी को उनके संकल्पबल से दिखाई देने लगे। स्वामी जी देव गण को आशीर्वाद देकर अर्हत के रूप में अपने हिरसे के धर्म या कर्तव्य का पालन करने के लिये स्वामीजी 'मध्यम पाव' की दिशा में यात्रा पर गये।

**परमात्मापदम प्रापत परमेष्ठि स सन्मतिही:**

visit to Shramana Bhagawan Mahavira to pay his respects. The Swamy was then able to see everything in all things and in all directions. He was able to perceive clearly the birth, and direction of movement of not only of all human beings but also all other things created. He was able to perceive clearly how rebirth is the result of the Law of Fate (the law of Karma or actions) in its various manifestations; a mere thought was enough on his part to enable him to see all types of actions and occurrences. After having blessed the Gods, Shramana Bhagawan Mahavira felt like discharging his duty as an Arhantha and so travelled in the direction of *Madhyama Pava*.

***"Paramāthmapadam Prāpath Paramesthi Sa Sanmitih"***

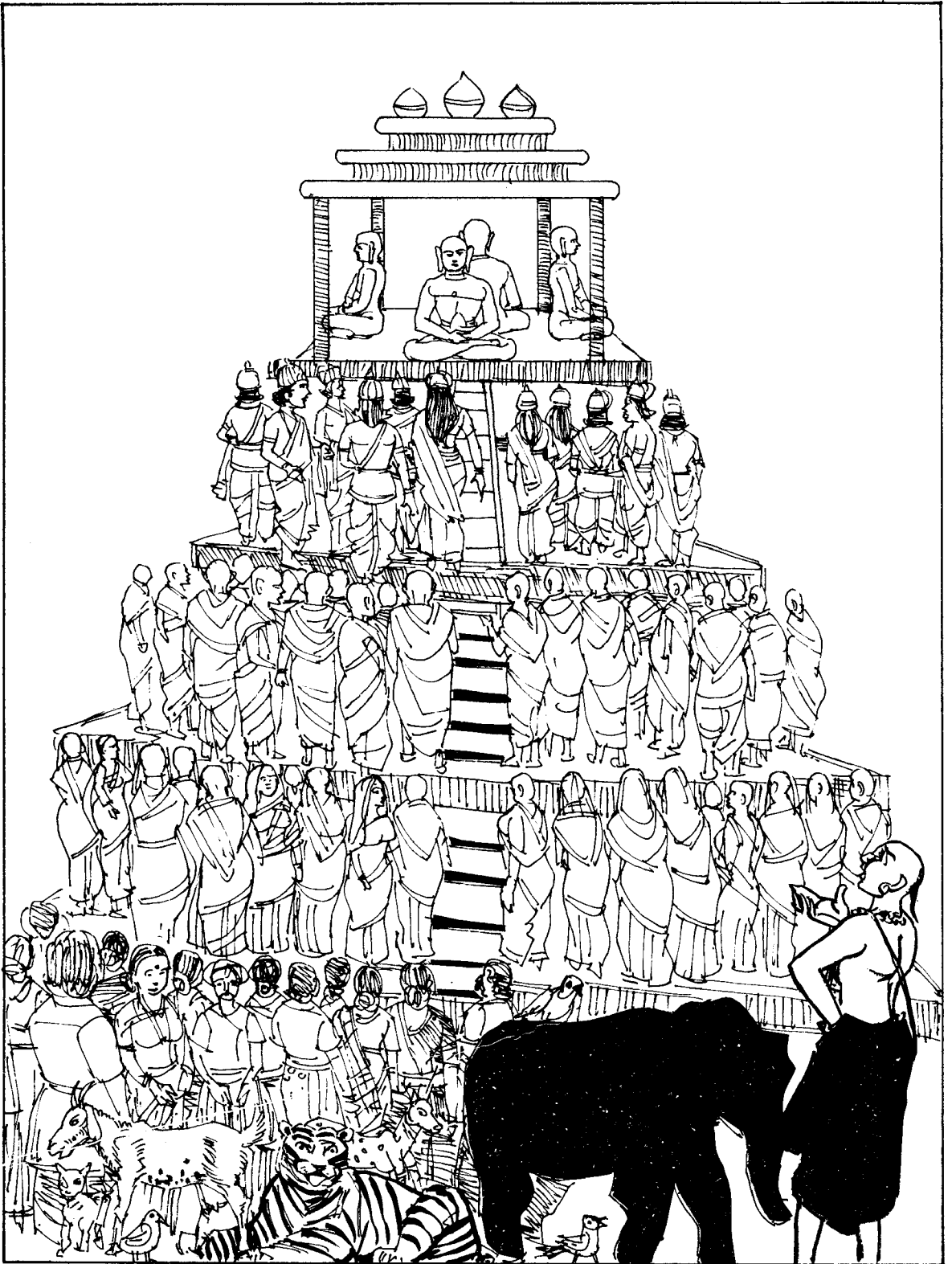


## 54. यज्ञ शाला में गोष्ठी

सौमिल यज्ञ-शाला के प्रवेश द्वार पर खड़ा रहा और ग्यारह ऋत्विजों में से एक एक को यज्ञशाला में आने के लिये आमंत्रित कर रहा था। पहले पहल उसने गोवर गाँव के निवासी वसुभूति के पुत्र गौतम गोत्र के इन्द्रभूति, वायुभूति, और अग्नि भूति का स्वागत किया। इसके बाद उसके आमंत्रण पर कोल्लाग निवासी भारद्वाजस गोत्र का 'व्यक्त अग्नि व्यौरस्यायन गोत्र का सुधर्म, मौर्य राज्य का निवासी तथा वशिष्ठ गोत्र का मंडित, कोशलवासी हरितस गोत्र का अचलभद्र, काश्यप गोत्र का मौर्य पुत्र, मिथिला निवासी गौतम गोत्र का अंकपित, तुंगराज्य वासी कौण्डिन्य गोत्र का मातर्या, राजगृह नगर वासी कौण्डिन्य गोत्र का प्रभास आये। अन्य लोग अपने शिष्यों के साथ आये। सौमिल ने उनसे यज्ञ का आरंभ करने की प्रार्थना की। उसी क्षण आकाश-मार्ग से देव गण अपने अपने दिव्य विमानों बैठकर सौमिल के पास न जाकर श्रमण भगवान महावीर की ओर वायुवेग से गये। हमेशा ऐसे अवसरों पर आकर यज्ञ का दर्शन करने वाले देवगणों का सौमिल के पास न आकर इस बार महावीर के पास जाना देखकर सौमिल और उसके ऋत्विज आश्चर्य में पड़ गये। इस अनोखी बात पर चर्चा करते हुए वे यज्ञशाला में रह गये। यज्ञ की गोष्ठी में देवगणों का पधारना एक प्रथा है।

## 54 DISCUSSION AT THE YAGNA SHALA (THE PLACE OF THE SACRIFICIAL CEREMONY)

Soumil stood at the entrance of the Yagnashala and invited the Rithviks in one after another. The first to be invited were Indrabhuti, Vayubhuti and Agnibhuti, the sons of Vasubhuti of Gauthama Gotra - these belong to Gowara. The next to be welcomed were Vyakta of Village Kollaga and belonging to Bharadwaja Gotra, Sudharma of Agnivysyana, the scholar Vasistha Manditha of the Maurya, Mauryaputra of the Gothra of Kasyapa, Gautham Akampitha of Mithila, Achalabhadra, belonging to Harithasa Gothra from the kingdom of Kausala, Matharya of Kaundinyasa Gothra from the Kingdom of Thunga, Prabhasa of Kaundinyasa Gothra from the town of Rajagriha in that order. He then requested the Rithviks to start performing the Yajna assisted by their disciples numbering 4,400. At same time, the heavenly hosts, in their divine planes, were travelling in the direction of Samavasarana at a great speed. This strange phenomenon filled the minds of Soumil and the Rithviks with wonder, because on such occasions, it was customary for heavenly hosts to pay a visit to the sight of the Yajna. So, Soumil and the Rithviks were overcome with sadness and began to discuss the phenomenon.

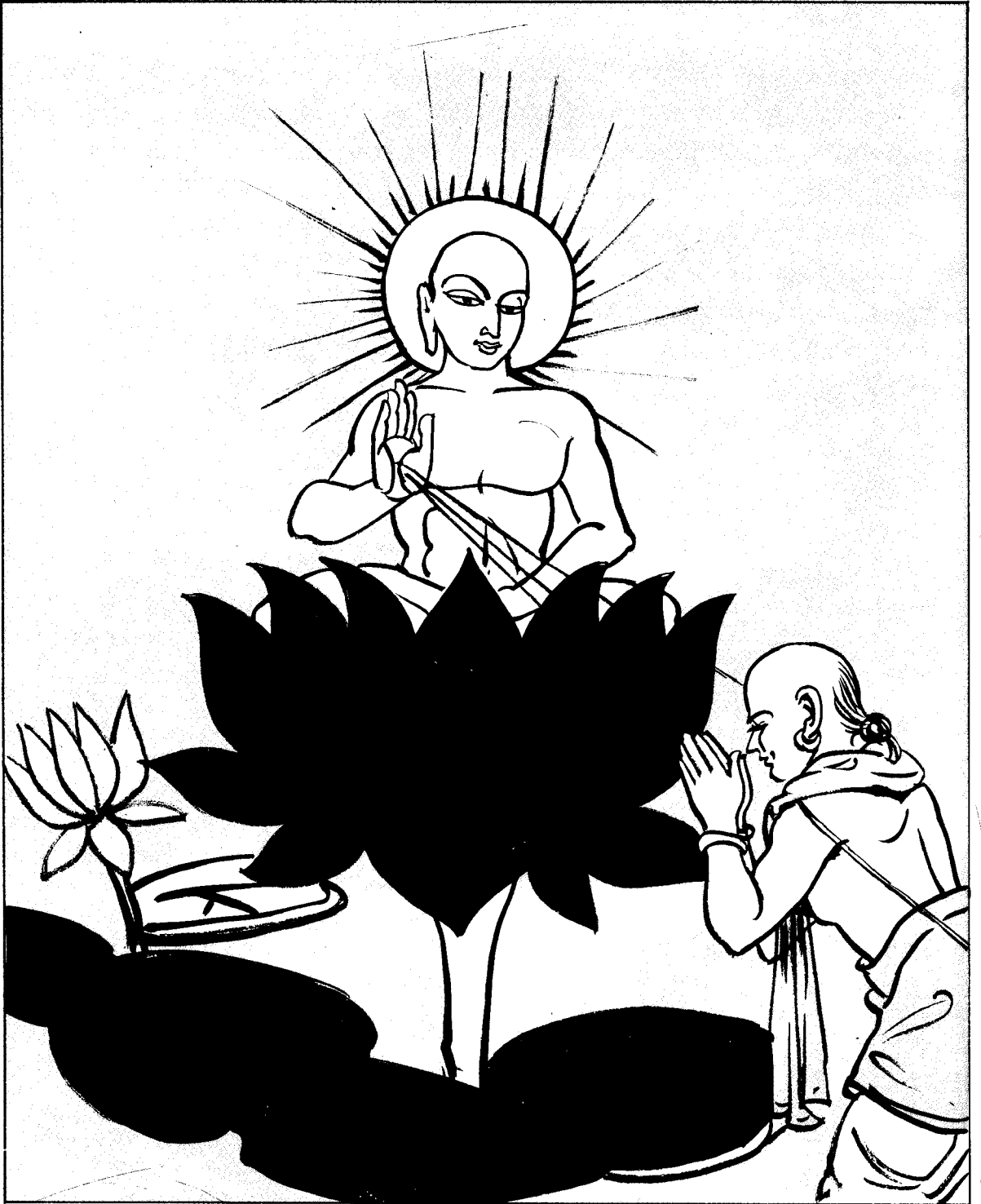


## समव शरणम

इस प्रकार केवल ज्ञान (महान ज्ञान) की प्राप्ति से प्रसिद्ध हुए भगवान महावीर अत्यन्त उत्कृष्ट समवशरम पर आसीन हुए थे। इस प्रकार बैठे हुए स्वामीजी समस्त देवगण, मानव गण, जन्तु-जाति और इस आकर्षण कारी जगत की समस्त जीवराशि को अपनी तरफ आकृष्ट कर सके। वहाँ से एक योजन (लगभग ८ से १० मील था १२ से १६ किलो मीटर) की दूरी (फासले) पर सौमिल नामक एक ब्राह्मण ग्यारह अन्य ब्राह्मण ऋत्विजों को लिये यज्ञ करने पर कटिबद्ध (उद्युक्त या संसिद्ध) हुआ था। उन ग्यारह ऋत्विजों में गौतम गोत्र के तीन भाई भी शामिल थे। जिन के नाम इन्द्रभूति, वायुभूति और अग्निभूति हैं। इस बात को अपनी दिव्य दृष्टि से जानकर श्री महावीर अपने जिन धर्म के अनुसार उस यज्ञ को रोक रखने के लिये जो उनके कर्तव्य का एक भाग (हिस्सा) है, कटिबद्ध हुए। केवल ज्ञान को प्राप्त करने के बाद स्वामी जी का दिव्य प्रवचन जो सब से प्रथम है; वह सुनने के लिये समस्त जन उत्सुकता के साथ समव शरण की तरफ चल पड़े।

## SAMAVASARANA

Thus endowed with Supreme Knowledge, Shramana Bhagawan Mahavira was then seated upon a holy pulpit on which only a Jina can sit - it is in the shape of a lotus. From this divine seat the Swamy was able to attract all types of animate, human and divine orders. He was the centre of attraction of all types of souls which orbited him. In the meantime, at a distance of one yojana from that spot (about 8 to 10 miles / 12 to 16 Kilometres in present day terms), a Brahmin by name Soumil was making arrangements to perform a great Yajna (a sacrificial performance) with the help of Eleven Rithviks (officiating priests). The more important of these Rithviks were Indrabhuti, Vayubhuti and Agnibhuti - three brothers belonging to the Gothra (lineage) of Gautama. Shramana Bhagawan Mahavira with his divine vision was able to know of this attempt on the part of Soumil and was bent upon stopping the sacrifice of animal life in this performance as this intention was a part and parcel of Jaina Dharma (the duty of a Jaina). This public oration was the first on the part of Shramana Bhagawan Mahavira after he had attained Supreme Knowledge and so people from all walks of life turned their steps in the direction of Samavasarana.



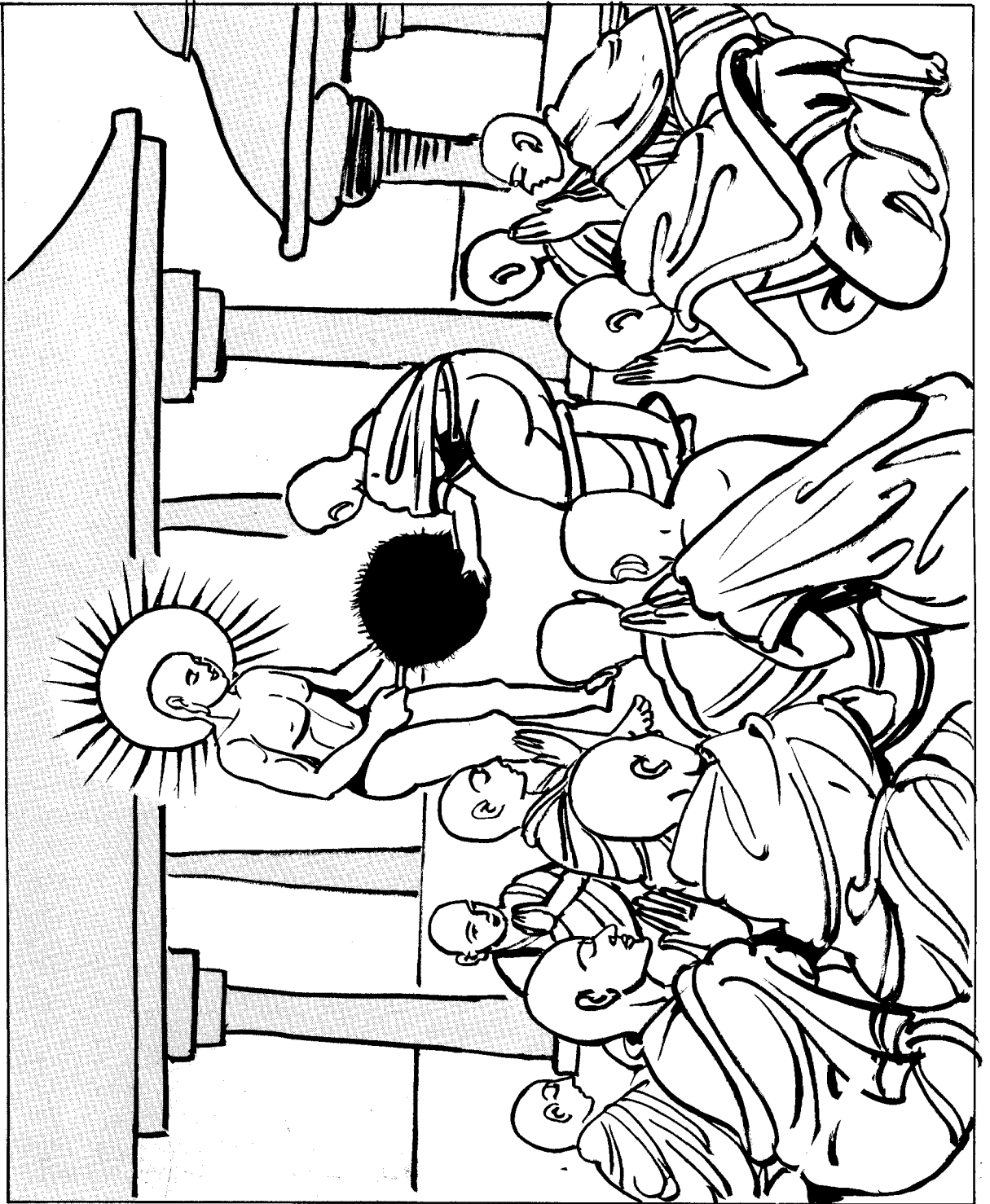
## 55. भगवान महावीर का इन्द्रभूति को ज्ञान मार्ग बनाता

उस प्रकार चर्चा विषय में बैठे हुए ऋत्विज महावीर के प्रति और महत्व को देखने के लिए उत्सुक हुए। पहले गौतम इन्द्रभूति अपने ५०० शिष्यों के साथ यज्ञ शाला से समवशरण की ओर चल पड़े। गौतम इन्द्रभूति अपने शिष्यों के साथ वहाँ पहुँचते समय 'समवशरण' देवताओं के आगमन से प्रकाशयुक्त हो उठा। स्वामी जी एक विशाल (बड़े) कमल पर पद्मासन लगाये बैठे थे। श्वेत वर्ण के शरीर वाले स्वामी के मुष्करानेसे उनका मुख-प्रकाश देखने वालों को दिव्यानुभूति प्राप्त हो रही थी। गौतम इन्द्रभूति अभी तक ऐसा प्रशान्त स्थान को ऐसी दिव्यमंगल मूर्ति को नहीं देखा था। स्वामी जी को देखते ही उसका सारा घमंड चूर चूर (चूकनाचूर) हो गया। उसी समय स्वामी "गौतम ! आओ" ऐस कहकर गौतम को बुलाया। स्वामी जी के सुमधुर शब्द ने गौतम इन्द्रभूति को चरणाक्रान्त कर दिया। इसके बाद स्वामी ने जीव या आत्मा के सम्बन्ध में सविस्तार बताया। यह सुनते ही गौतम इन्द्रभूति अपने ५०० शिष्यों सहित स्वामी के निर्णयानुसार श्रमण सम्प्रदाय में शामिल होकर उनका प्रमुख शिष्य बन गया।

## 55 THE GRANTING OF JNANA TO INDRABHUTI GAUTAMA BY SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA

The Rithviks who thus fell to discussion and debate among themselves, finally decided to test the greatness and the magical powers of Shramana Bhagawan Mahavira. The first to issue forth from out of the Yajnasala was Gauthama Indrabhuti followed by his 500 disciples. When he approached Shramana Bhagawan Mahavira along with his disciples, Indrabhuti saw that the whole place looked attractive beyond measure with the arrival of the heavenly hosts. The Swami was seated in the posture of Padmasana on a giant lotus. The onlookers were gifted with a divine bliss at the sight of the Swami whose face was lit up by a smile and from whose body a radiant white light and Divine Sound - Divya Dhvani - emanated. Never was Gauthama Indrabhuti a witness to such a sanctifying sight. The whole area was calm and peaceful and the Swami himself was a picture of divine beauty. A look at the Swami was enough to dispel the ego of Gauthama Indrabhuti. The Swami looked at Indrabhuti and, addressing him by his full name, asked him to go nearer to him "Come here, Gauthama Indrabhuti", said the Swami and this was enough to send Indrabhuti sprawling upon the ground at the feet of the Swami in absolute obeisance. The Swami then explained to Gauthama Indrabhuti the true nature of Jiva or Atman (the permanence and essence of Jiva) in a brief manner. Gauthama Indrabhuti was convinced of the exposition of the Swami and, along with his 500 disciples, became the disciple of the Swami (the chief one at that) and thus came to follow the tradition of the Shramanas.





## 56. वैदिक सम्प्रदाय से श्रमणों के पंथ की ओर

इसके बाद धीरे धीरे गौतम अग्निभूति और गौतम वायुभूति ने भी अपने बड़े भाई का अनुसरण किया। जब वे अपने शिष्यों और प्रशिष्यों के साथ 'समवशरण' में पहुँचे तब स्वामी जी 'चिनमुद्रा' में बैठकर एकाग्र निष्ठा पूर्वक ध्यान में मग्न हुए थे। स्वामीजी के शरीर से सुरीली ध्वनि की लहरें (तरंग) निकल कर उनके कानों में आने (पड़ने) लगी। जब वे उन ध्वनियों (शब्दों) का अर्थ समझने का प्रयत्न कर रहे थे तभी स्वामी जी ने अपने आँखें धीरे धीरे खोली और अग्निभूति और वायुभूति को उनके जन्म के समय रखे गये नामों से सम्बोधित किया। इसके बाद उनको समझाया कि कर्म-सिद्धान्त क्या होता है और 'केवल ज्ञान' की उत्कृष्टता कैसी होती है। केवल ज्ञान की विशिष्टता को विवरण (विस्तार) पूर्वक बताया। गौतम की वंश परम्परा के इन तीनों भाइयों के बाद क्रमशः व्यक्त, सुधर्म, मण्डित, अचलभद्र, मौर्यपुत्र, अकम्पिता, मातर्य और प्रभास अपने वैदिक सम्प्रदाय के शिष्य गणों के साथ वहाँ पहुँचे। तब तक को चन्दनबाला वहाँ आ चुकी थी और स्वामी जी के आध्यात्मिक विजय के बारे में सुनकर उसने अपना शेषजीवन स्वामीजी के चरणों की सन्निधि में व्यतीत करने (बिताने) का निश्चय कर लिया। स्वामी जी ने मधुर मुस्कुराहट के साथ उनका स्वागत किया और उनको पंचभूतों के अस्तित्व, ऐहिक बन्धन, स्वर्ग और नरक, नैतिक विषयों को सोदाहरण, विस्तार पूर्वक समझाया। स्वामी जी ने मीठी बातों में उनको समझा दिया कि अहिंसा और सम्यक दर्शन का सावधान पूर्वक पालन करने से आधिभौतिक जीवन की क्लेशकारिणी समस्याओं से कैसे मुक्ति मिलती है। उन्होंने इन बातों का स्पष्ट प्रकाशन अर्द्धमागधी भाषा के मधुर स्वरों (शब्दों) में किया। सब श्रोता स्वामी के उक्त भाषण की बातों की सच्चाई से सहमत होकर सविनय अहिंसा - मार्ग के अनुयायी बने। स्वामीन उनको उच्छिष्ट पद्धति के अनुसार सन्यास धर्म में दीक्षा दी।

## 56 FROM THE VAIDIK TRADITION TO THE PATH OF SHRAMANAS

After the coming of Gauthama Indrabhuti into the fold of Shramana Bhagawan Mahavira, his brother Agnibhuti and Vayubhuti, accompanied by their own disciples and their followers, reached Samavasarana. When they reached the spot, the Swami was in deep concentration in the posture called Chinmudra. Melodious sounds emanated from the body of the Swami and the visitors were thrilled to hear them. While they were trying to understand the meanings of those sounds, the Swami slowly opened his eyes and addressed them by their names. Then he explained to them the Law of Karma and the relationship between the Jiva and Karma and the superiority of Supreme Knowledge (Kevalajnana). The next to follow these three brothers of the clan of Gauthama were Vyakta, Sudharma, Manditha, Achalabhadra, Mauryaputra, Akampita, Prabhasa along with their followers of the Vaidik tradition. Already by then Chandanabala had arrived there, having heard of the spiritual victory of the Swami and decided to spend the rest of her life at the feet of the Swami. The Swami welcomed them with a sweet reassuring smile and explained to them the existence of the five elements, the earthly bonds, heaven and hell and the moral law along with relevant examples. He further explained to them how the observance of Ahimsa (non-violence), and Equanimity (Samyak Darshana) can provide deliverance from the harrying problems of material life. His exposition was delivered in Arthamagadhi in melodious tones. All the listeners were convinced of the exposition made by the Swami and reverentially followed the path of Ahimsa. The Swami admitted them into monkhood according to the procedure prescribed.

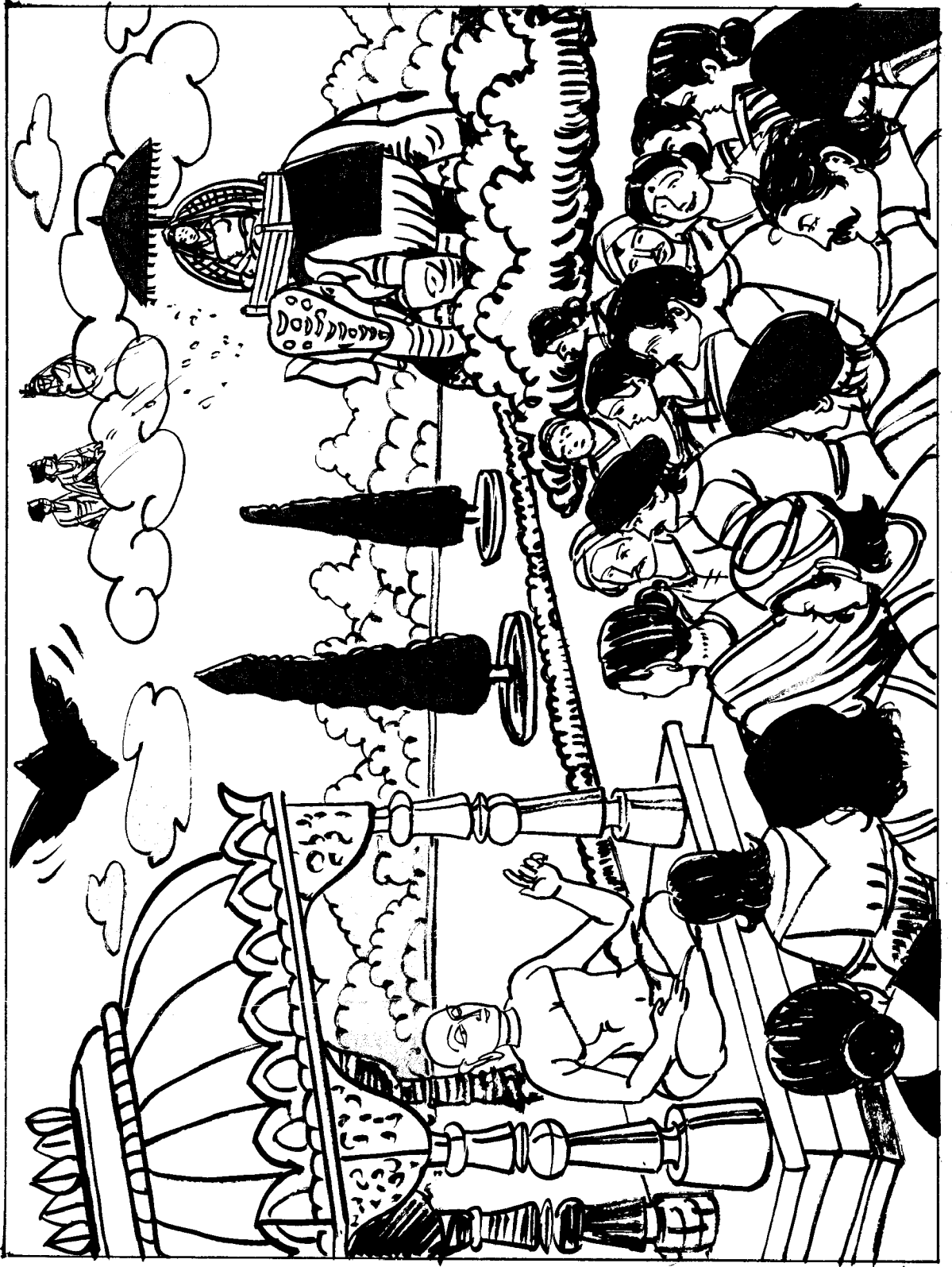


## 57. तीर्थङ्करों के चरित्र के बारे में स्वामी का कहना

सन्यास की दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात इन्द्रभूति गौतम तथा अन्य अनुयायी यज्ञादि क्रतुओं के बारे में स्वामी जी के अभिप्राय के जानने के लिये 'समवशरण' में पहुँचे। उनकी उत्सुकता को देख कर स्वामी ने सविवरण कहा कि मैं यज्ञयागादि क्रियाओं का विरोधी हूँ, और बताया कि अहिंसा युक्त की जाने वाली याज्ञिक क्रियाएँ ही सच्ची हैं और वे ही यज्ञ कहलाती हैं। उन्होंने स्वामी जी से पूछा कि यदि बात ऐसी है तो आप जो यज्ञ कर रहे हैं उस यज्ञ प्रक्रिया का क्या अर्थ है? इस प्रश्न के उत्तर में स्वामीजी ने जवाब दिया कि मेरा वैराग्य ही स्वयं प्रज्वलित करने (होने) वाली यज्ञ-ज्वाला है। सतत (निरन्तर) जागरूकता ही मेरी यज्ञ-भूमि है और अनेक प्रकार की मानसिक प्रवृत्तियाँ ही पवित्र कुशों के अग्र हैं, और मेरा अपना (निज) शरीर ही प्रधान हवन-वेदी है। इस प्रकार युक्ति-युक्त विवरण दिया। इसके बाद स्वामी जी ने तेईस तीर्थङ्करों और एक और अर्हंत के बारे में विस्तार पूर्वक अत्यन्तमनोहर ढंग (प्रकार) से बताने का उपक्रम (आरंभ) किया। वहाँ जितने लोग उपस्थित थे उन सब के मनो ने एक साथ (दम) पतित-पावन तीर्थङ्करों के चरित्र और महत्व को ग्रहण किया। वे तीर्थङ्करों के चरित्र के माधुर्य एवं महत्व से प्रभावित हुए। उनको यही रास्ता राज-मार्ग सा जान पड़ा। स्वामी जी ने पहले श्री ऋषभनाथ स्वामी के बारे में बताया।

## 57 TELLING ABOUT THE LIVES OF TIRTHANKARAS

After having been admitted to monkhood, Indrabhuti Gauthama and the others went up to Samavasarana to know Shramana Bhavawan Mahavira's opinion on the subject of Yajna (sacrificial ceremony), Yaga (ritual ceremony) and Krathu (another ceremony). The Swami was pleased with the inquiring bent of mind of the questioners and explained to them that he was opposed to sacrificial ceremonies and that ceremony is the true ceremony that is characterised by Ahimsa (non-violence). Then the questioners wanted to know about the nature of the sacrificial procedure adopted by the Swami. In reply the Swami explained to them that renunciation is the true flame that glows in his Yajna; constant awareness is his sacrificial ground; and various mental pulls are the blades of sacred grass and that his own body is the prime fuel, while his deeds constitute the offering of Ghee. Inflexible control over the senses provides the invocation to the Gods, the Ahimsa Yajna comprises the parts above mentioned. Next, the Swami related to them the life histories of the 23 Tirthankaras that had preceded him. He also related the story of an Arhantha, who was not a Tirthankara. This narrative was characterised by graphic examples and in a convincingly sweet language. Thus the listeners were at once endowed with an understanding of the greatness of the Tirthankaras and the exemplary nature of their lives. The narrative of the lives of the Tirthankaras was the flow of nectar to their recipient ears. Their mendicant lives also were ever guided by these teachings and they travelled incessantly and undeterred towards the goal of the Supreme Knowledge. The Swami began his narrative by telling the story of Rishabhanathaswami first.

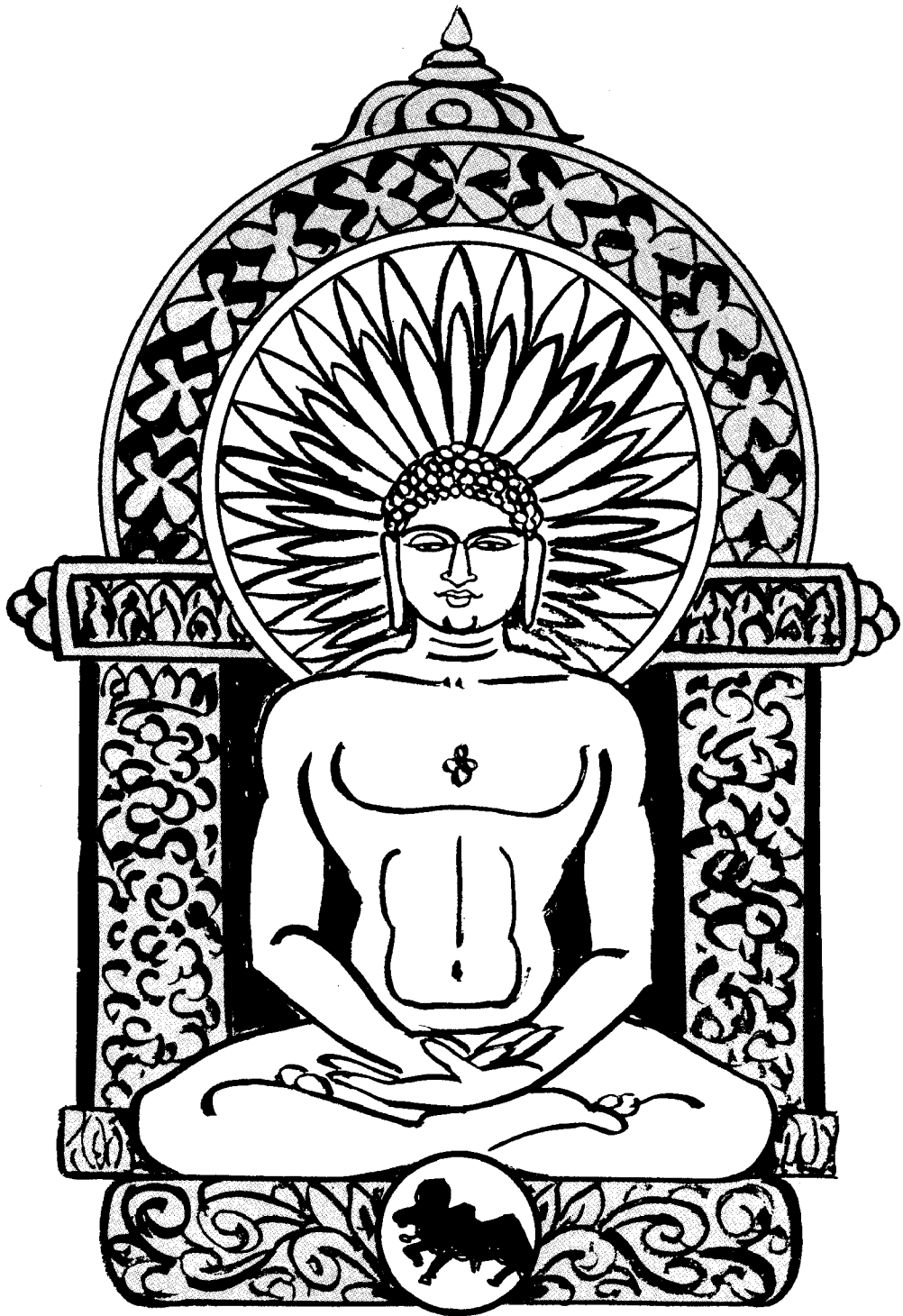


## 58. श्री आदिनाथ

भारत के पश्चिमोत्तर प्रान्त काश्मीर का शासन राजा नाभि करते थे। उनकी धर्मपत्नी का नाम मरुदेवी था। सर्वप्रथम तीर्थङ्कर ऋषभनाथ स्वामी का जन्म सर्वतो सिद्ध स्वर्गवासी एक देवता के अंश से चैत्रमास के कृष्ण पक्ष (बहुल पक्ष) अष्टमी के दिन हुआ था। युवास्था को प्राप्त करने पर उनका विवाह सुमंगला और सुनन्दा नाम्नी दो कन्याओं से हुआ था। उनके एक सौ बेटे और दो बेटियाँ हुई। तब से इस दुनिया में स्वार्थ का आतंक फैल गया। सब मानव चीजों और सम्पत्ति के लिये आपस में झगड़ते-लड़ते थे। एक दूसरे को मारक इस पृथ्वी को नरक-तुल्य बना रहे थे। इस परिस्थिति (हालत) को जानकर ऋषभनाथ स्वामी अपनी सेना के लिए हुए जम्बूद्वीप में बचे हुए राज्य को अपने काबू (वश) में करके समाज को नियंत्रित करने के लिये कटिबद्ध (संसिद्ध) हुए। मानव प्रवृत्तियों के अनुकूल पेशों का अलग वर्गीकरण करके उसके अनुसार मनुष्यों को चार वर्णों या कुलों में विभक्त किया गया। उन में से पुरुषों को ७२ कलायें और स्त्रियों को ६४ कलाएँ दी गईं। पूरे राज्य में इस प्रकार सुभिक्ष की स्थापना हुई। इस तरह अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिये बड़ी पत्नी के बेटे भरत को 'विनीत' का राजा बनाया और दूसरी पत्नी के बेटे 'बाहुबलि' को 'तक्षसिला' का राजा बनाया। इस प्रकार राज्य को बाँट दिया। राजा ने वैराग्य से प्रभावित होकर चैत्र

## 58 THE STORY OF ADINATHA SWAMY

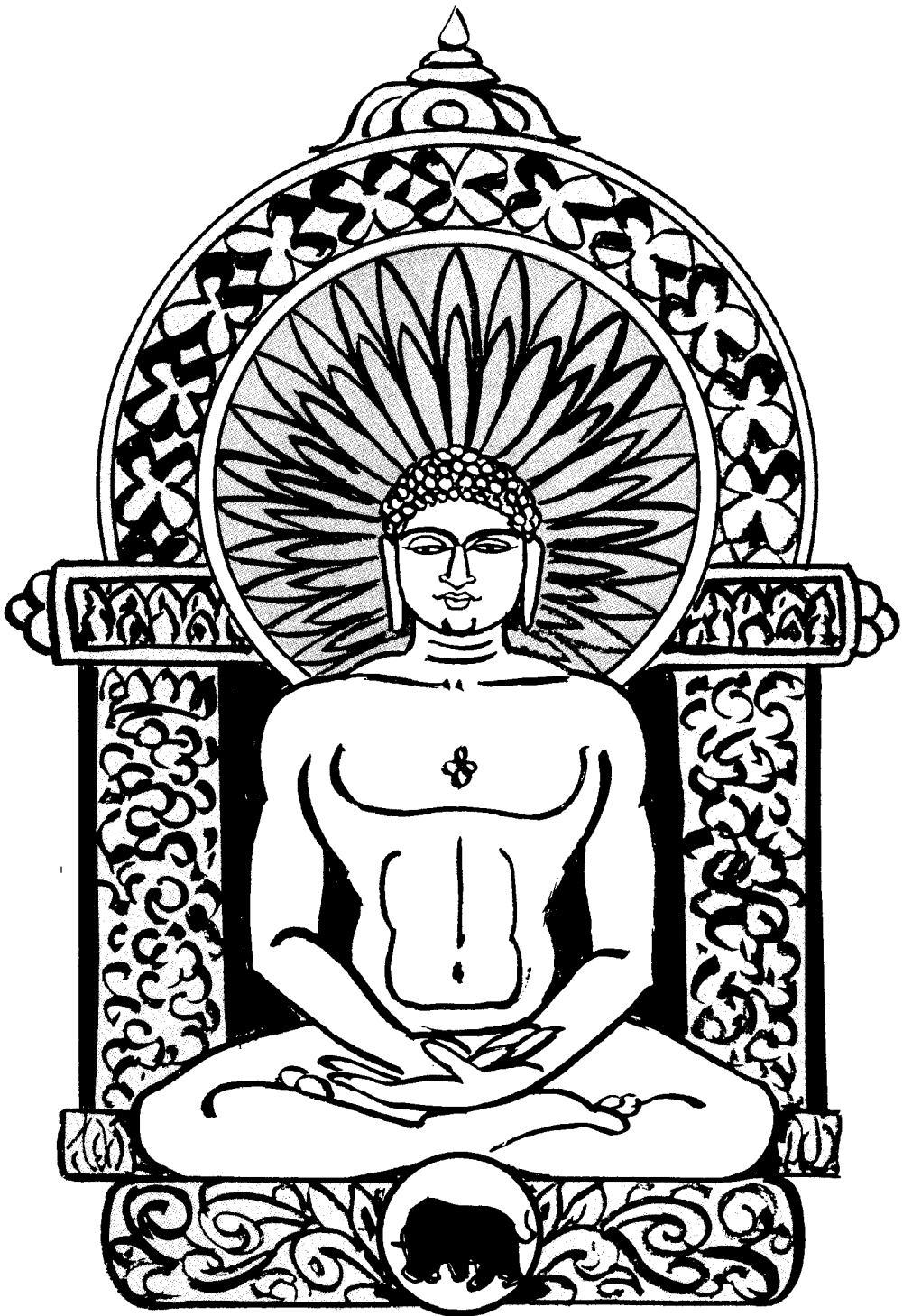
The first of the Tirthankaras is Shri Rishabhanathaswamy who was born on a Chaitra Bahula Ashtami (corresponding to the eighth day of the waning phase of the first month in the lunar calendar). The region of Paschimottara Aryavarttha (corresponding to the present day Kashmir and the whole of North-west India) was then ruled by King Nabhi and his wife Marudevi. The child thus born partook of a divine fraction of the divinity hailing from that heaven known as Sarvathesiddha. When he came of age he was married to two royal damsels by name Sumangala and Sunanda. In course of time, he was blessed with one hundred sons and two daughters. Already by then people became apostate and depraved and everywhere there was anarchy. Acquisitive tendency grew and there was cut throat competition among men. They even killed one another. In short, the kingdom resembled hell upon earth. Having been saddened by the prevailing conditions prince Rishabhanatha gathered his armies and embarked upon the conquest of the other kingdoms in the Jambudvipa (the subcontinent of India), so that he could reorganise social life along the lines of rectitude. He allotted professional work according to the bent of mind of each individual. On the basis of bents of minds he proceeded to build the caste system. He divided the whole society into 4 castes, (according to professions) and apportioned 72 arts and crafts to men and 64 arts and crafts to women. Thus was order restored in the kingdom. Having thus



शुद्ध अष्टमी के दिन सन्यास की दीक्षा ले ली और सब प्रकार के विधि-विधानों और भौतिक कामनाओं को छोड़कर फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष के एकादशी के दिन पुरिमटल शहर में केवल ज्ञान को प्राप्त करके अर्हत हो गये। समस्त जनों की सम्पत्ति के लायक, आचरण योग्य जैन सिद्धान्तों को प्रति पादित करके उनको सारे संसार में लाकर प्रथम तीर्थङ्कर हो गये। हजारों लोगों को ज्ञान-भिक्षा देकर ऋषभनाथ स्वामी ने माधुशुद्ध त्रयोदशी के दिन अपना पार्थिव शरीर छोड़ा और शान्ति पूर्ण स्थान स्वर्गधाम को प्राप्त कर लिये।

performed his duty Rishabhanatha entrusted the governance of the territory of Vineetha to Bharatha, the son of his elder wife and the territory of Takshasila to Bahubali, the son of his second wife. He himself became detached from all the earthly desires, and accepted the order of the Sanyasa (monkhood). Having thus renounced on a Chaitra Shuddha Ashthami (corresponding to the eighth day of the waxing fortnight of the first lunar month) everything. Rishabhanatha attained on a Phalguna Shuddha Ekadasi (corresponding to the eleventh day of the waxing fortnight in the last month of the Lunar Calendar) the state of Supreme Knowledge in the town of Purimtal and thus became an Arhantha. Then he propounded the Jain principles, acceptable and practicable to all persons and brought them into vogue. He thus became the first Tirthankara after having given the alms of knowledge to thousands of seekers. Shri Rishabhanatha attained the abode of peace, gave up the physical body on a Magha Shuddha Trayodasi, (corresponding to the thirteenth day of the waxing phase of eleventh lunar month).





## 59. श्री अजितनाथ स्वामी

बाद में द्वितीय तीर्थङ्कर श्री अजितनाथ स्वामी हुए। श्री अजित नाथ स्वामी ने माघमास के कृष्ण पक्ष (बहुल पक्ष) के अष्टमी तिथि के जन्म लिया। उनके पिता अयोध्या के राजा जितशत्रु थे और माता रानी विजया थी। उन्होंने राज्य के सब सुखों को भोगा, बाद इसके माघ बहुल नवमी दिन सन्यास की दीक्षा ली, समस्त कर्मों को चोड़कर पुष्य बहुल एकादशी के दिन केवल ज्ञान को प्राप्त कर अर्हत होकर द्वितीय तीर्थङ्कर हो गये। इस स्वामी का नाम अजित नाथ कैसे पड़ा इस प्रश्न के पूछने पर स्वामी की माँ ने जवाब दिया कि मैंने अपने पति के साथ शतरंज जितनी बार खेली उतनी ही बार मैं ने ही जीत पायी। इसी कारण से इनका नाम अजित नाथ पड़ा। स्वामी का निर्याण चैत्र बहुल पंचमी के दिन हुआ था।

### 59 SHRI AJITHANATHA SWAMY

The second Tirthankara is Shri Ajithanatha Swamy. Shri Ajith was born to king Jita Shatru and queen Vijaya of the realm of Ayodhya on a Magha Bahula Ashtami (corresponding to the eighth day of the waning phase in the eleventh month of the lunar calendar). Having enjoyed all the royal pleasures, he decided upon giving them up and entered monkhood on a Magha Bahula Navami (corresponding to the ninth day of waning fortnight of the eleventh month of the lunar calendar). He was freed from all bonds of Karma (action - inaction) and obtained Kevalajnana (the Supreme Knowledge) on a Pushya Bahula Ekadasi (corresponding to the eleventh day of the waning phase in the tenth month of the lunar calendar). Thus he became an Arhantha and the second of the Tirthankaras. There is an interesting story about his having been given the name of Ajithanatha. It goes as follows. When queen Vijaya was conceived of the holy foetus she never lost a game of chess that she played with her husband (the royal couple used to play this game to pass time). The holy foetus must have been responsible for the invincible record of his mother and so he was given the name Shri Ajithanathaswamy, and rightly so. He attained Supreme Bliss on a Chaitra Bahulu Panchami (corresponding to the fifth day of waning fortnight of the first lunar month)

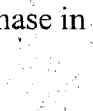


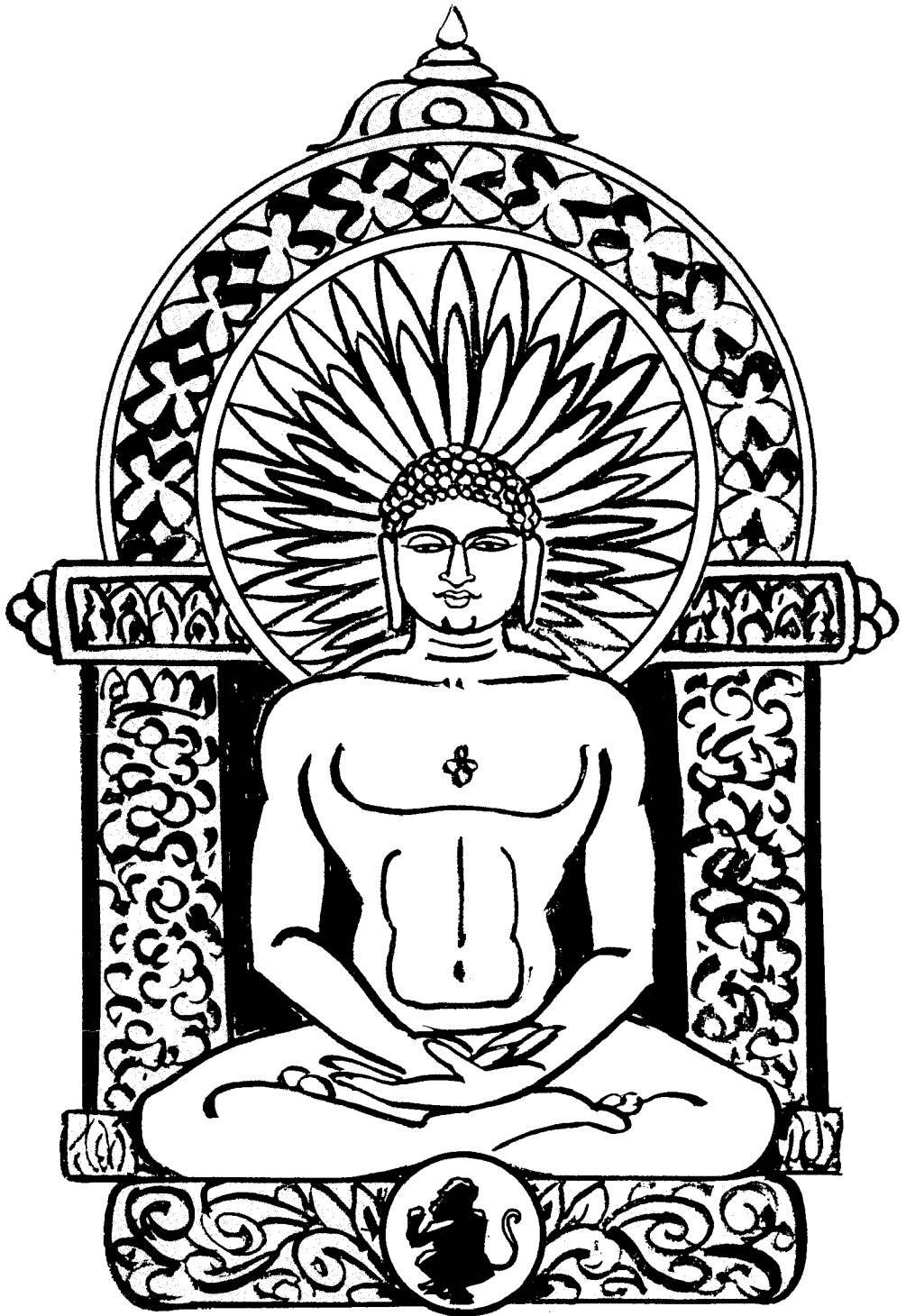
## 60. श्री संभवनाथ स्वामी

इसके बाद श्रावस्ती का सासन करनेवाले राजा 'जथारी' ('जठा') और रानी 'सेवा' नाम राज-दम्पतियों को एक पुत्र हुआ जिसका नाम था संभवनाथ । जब श्री संभवनाथ अपनी माँ के गर्भ में था तब से राज्य में सुभिक्ष (सुकाल) और शान्ति की स्थापना के लिये अनुकूल परिस्थितियाँ होने (बनने) लगीं । इस लिये राजा ने अपने बेटे का नाम संभवनाथ रखा था । श्रीसंभवनाथ ने अपने ४९ वर्ष की अवस्था में आषाढ अमावास्या के दिन सन्यास की दीक्षा ग्रहण की और कार्तिक पूर्णिमा के दिन केवल ज्ञान प्राप्त किया और अर्हत होकर श्री संभवनाथ स्वामी तृतीय तीर्थङ्कर हो गयी । उन्हें चैत्र बहुल पंचमी के दिन मोक्ष की प्राप्ति हुई ।

## 60 SHRI SAMBHAVANATHA SWAMY

The next Tirthankara is Shri Sambhavanathaswamy. He was born to the royal couple of Shravasthi, King Ja'hari and Queen Seva. The date was Magha Bahula Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day of the waning fortnight in the eleventh Lunar month). The conditions in the kingdom which were a bit unsettled at that time began to take a turn for the better and travelled irresistibly towards prosperity and peace. This was the reason why the child was named Sambhavanatha. Shri Sambhavanatha took the vow of Sanyasa in his 49<sup>th</sup> year on an Ashadha Amavasya (corresponding to the New Moon Day of the 4<sup>th</sup> month in the lunar calendar) and became an Arhantha on a full moon day in the month of Karthika, having attained Kevalajnana, thus Shri Sambhavanatha Swamy became the third of the Tirthankaras. He gave up his physical body on a Chaitra Bahula Panchami (corresponding to the fifth day of the waning phase in the first month of lunar calendar).



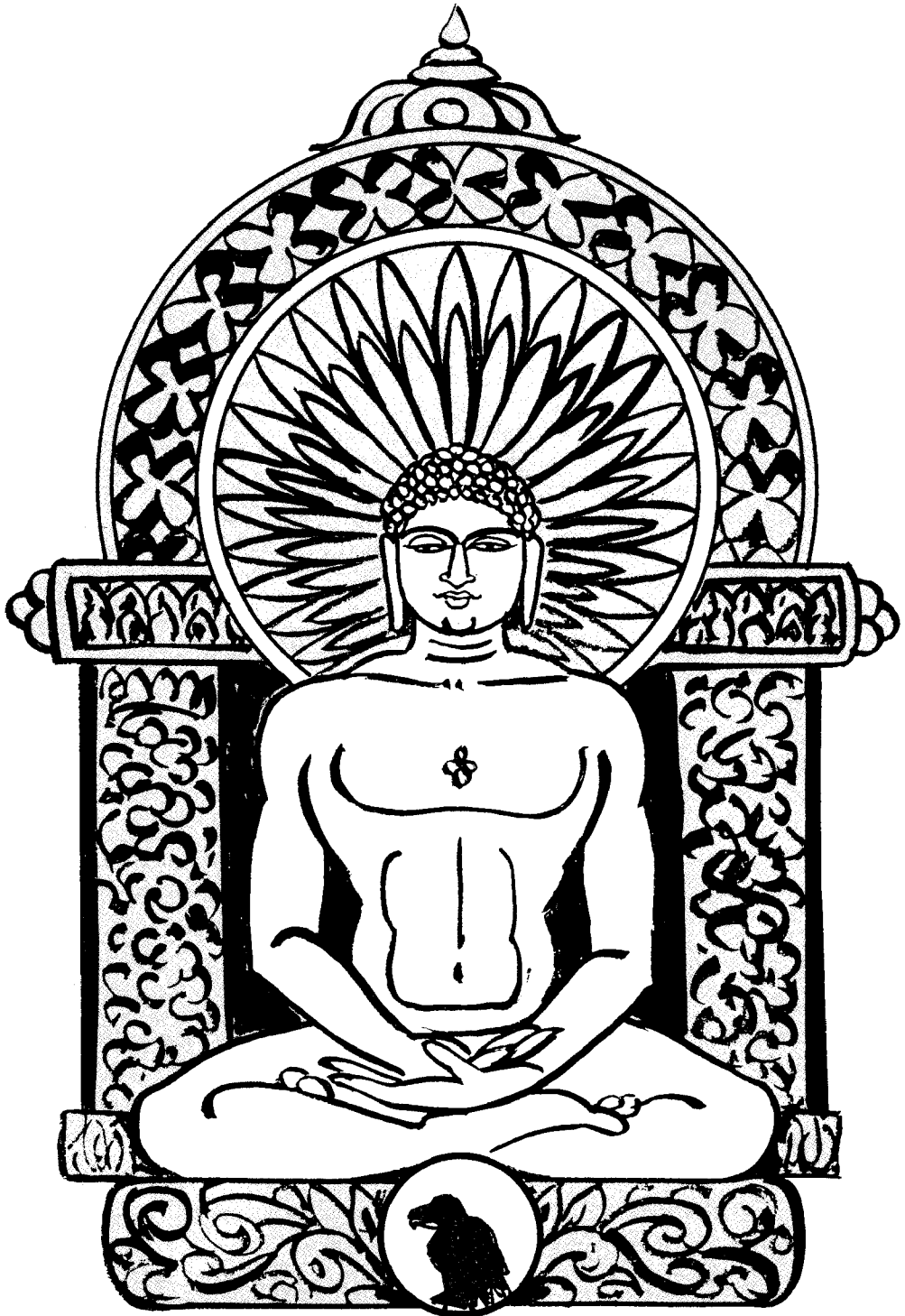


## 61. श्री अभिनन्दन स्वामी

इसके बाद आयोध्या का शासन करने वाले राजा संबर और उनकी रानी सिद्धार्थी गर्भ से श्री अभिनन्दन स्वामी का जन्म हुआ था। माघ बहुल विदिया (द्वितीया) के दिन। सारे राज्य में सुभिक्ष (सुकाल) था और शत्रुभय नहीं था। इस लिये उनका नाम अभिनन्दन रखा गया। समस्त राज भोगों का अनुभव करने के बाद श्री अभिनन्दन स्वामी ने सन्यास की दीक्षा ग्रहण की। फिर केवल ज्ञान को प्राप्त कर अर्हंत और चतुर्थ तीर्थङ्कर बन गये। उनको वैशाख बहुल अष्टमी के दिन मोक्षा की प्राप्ति हुई।

### 61 SHRI ABHINANDANA SWAMY

The next of the Tirthankaras is Shri Abhinandanaswamy. He was born to King Sambara and Queen Siddhartha of Ayodhya. The day was Magha Bahula Vidiya (corresponding to the second day of the waning phase of the eleventh month in the lunar calendar). When this child was born, the Kingdom was enjoying peace and prosperity, and so the child was given the name Shri Abhinandana. After having tasted all material pleasures Shri Abhinandana Swamy entered monkhood on a Magha Bahula Dwadasi (corresponding to the twelfth day in the waning phase of the eleventh month of the lunar calendar). This happened in the city of Ayodhya itself. And the Swamy, divested of all earthly bonds, led a life of a monk for 28 years and finally became an Arhantha, having attained Kevalajnana. On a Pushya Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day of the waxing phase of the tenth month in the lunar calendar), he thus became the fourth of the Tirthankaras. He attained Supreme Bliss on a Vaisakha Bahula Asthami i.e. 8<sup>th</sup> day of the waning fortnight in the second month of lunar the calendar.



## 62. श्री सुमतिनाथ स्वामी

अयोध्या का शासन करनेवाला राजा मेघ उनकी रानी मंगला को वैशाख शुद्ध अष्टमी के दिन श्री सुमति नाथ स्वामी का जन्म हुआ। जब सुमतिनाथ अपनी माँ के गर्भ में थे तब महारानी ने एक बार भारी सभा में एक अच्छा फैसला सुनाकर (देकर) एक निर्दोष स्त्री को दण्ड (सजा) से बचाया। गर्भवती रानी को जो सूक्ष्मज्ञान प्राप्त हुआ था उसी ज्ञान की याद के चिह्न के रूप में इस बालक का नाम करण सुमति नाथ नाम से किया गया। लौकिक जीवन को भोगने के बाद श्री सुमतिनाथ ने वैशाख बहुल नवमी के दिन सन्यास की दीक्षा ग्रहण करके समस्त कर्मों का त्याग करके केवल ज्ञान प्राप्त कर ली और अर्हत होकर पाँचवें तीर्थङ्कर हो गये। चैत्र बहुल नवमी के दिन उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हुई।

## 62 SHRI SUMATHINATHA SWAMY

The next of the Tirthanakaras is Shri Sumathinatha Swamy. His parents were King Megha and Queen Mangala of Ayodhya. The auspicious day of birth was Vaisakha Suddha Ashtami, (corresponding to the eight day of waxing fortnight in the second month of lunar calendar). When the queen was *enceinte*, she once gave a very wise judgement, in the royal court and saved the life of an innocent woman. On the assumption that the holy foetus in the womb of the queen must have been responsible for this wise judgement the baby, when it was born, was given the name Shri Sumathinatha. Shri Sumathinatha led a secular life until he was surfeited and then entered the order of monks on a Vaisakha Bahula Navami (corresponding to the ninth day of waning fortnight in the second month of lunar the calendar). He broke all his earthly shackles and after a life of 20 years of monkhood attained Kevalajnana and became an Arhantha on a Chaitra Bahula Ekadasi corresponding to the eleventh day of the waning fortnight in the first month of the lunar calendar). He thus became the fifth Tirthankara. He attained the abode of the immortals on a Chaitra Bahula Navami, (corresponding to the ninth day of the waning phase of first month in the lunar calendar).



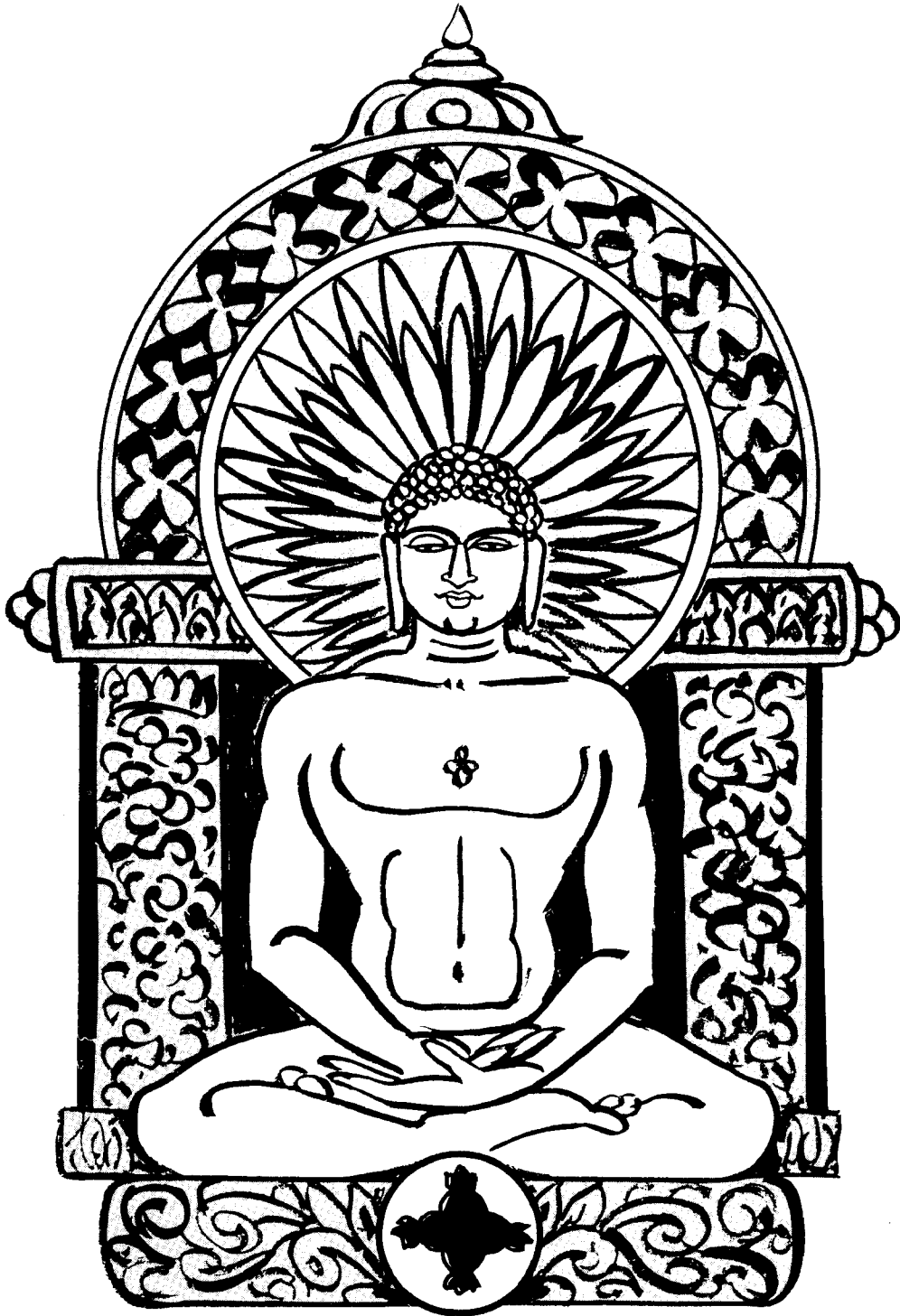


## 63. श्री पद्मप्रभुस्वामी

बाद में कौशम्बि नगर के शासक राजा श्रीधर हुए और उनकी रानी सुसिमा थी। उन दम्पतियों को कार्तिक बहुल द्वादशी के दिन श्री पद्मप्रभु का जन्म हुआ। २९ वर्ष की उम्र में कार्तिक शुद्ध त्रयोदशी के दिन उन्होंने सन्यास की दीक्षा ग्रहण की। समस्त कर्म छोड़कर वे केवल ज्ञान को हासिल (प्राप्त) करके अर्हत बनकर षष्ठम (छठाँ) तीर्थङ्कर हो गये। मार्गशीर्ष शुद्ध एकादशी के दिन उन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया।

### 63 SHRI PADMA PRABHU SWAMY

The 6<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Padmaprabhuswamy. The city of Kaushambi was then ruled by King Sridhara and his wife was Queen Susima. Shri Padmaprabhuswamy was born to this couple on a Karthika Bahula Dwadasi (corresponding to the twelfth day of waning fortnight in the eighth month of the lunar calendar). He entered the order of Sanyasis in his 29<sup>th</sup> year on a Karthika Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day of the waxing phase in the eighth month of the lunar calendar). Having transcended all earthly attachments and pulls Shri Padmaprabhu attained Kevalajuna and became an Arhantha on a Chaitra Pournima (corresponding to the Full Moon Day in the first month of the lunar calendar). He thus became the sixth of the Tirthankaras. Shri Padmaprabhuswamy gave up his material body on a certain Magha-Shirsha Shuddha Ekadasi (corresponding to the eleventh day of the waxing phase in the ninth month of the lunar calendar).



## 64. श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी

इसके बाद वारणाशी का शासन करनेवाला राजा प्रतिष्ठा एवं रानी पृथ्वी देवी को ज्येष्ठ बहुल द्वादशी के दिन श्री सुपार्श्व नाथ पैदा हुए। उन्होंने १९ वर्षों तक सांसारिक जीवन को बिताया। फिर इसके बाद स्वामी ने ज्येष्ठ बहुल त्रयोदशी के दिन सन्यास की दीक्षा ली। उन्होंने कैवल्य ज्ञान को पाया। वे अर्हत हो ७ वें तीर्थङ्कर बने। फाल्गुन शुद्ध सप्तमी के दिन वे मोक्ष को प्राप्त हो गये।

## 64 SHRI SUPARSHVANATHASWAMY

The 7<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Suparsvanathaswamy. Varanasi was then being ruled by King Pratishta and Queen Prithvi Devi was his consort. He was born on a certain Jyeshtha Bahula Dvadasi (corresponding to the twelfth day of the waning phase in the third month of the lunar calendar). After having spent a married life for 19 years, Shri Suparsva Nathaswamy entered monkhood on a Jyeshtha Bahula Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waning phase of the third month in the lunar calendar) and attained Kevalajnana, thus becoming an Arhantha on a Phalguna Suddha Shashti (corresponding to the sixth day of the waxing phase in the twelfth month of the lunar calendar). He thus became the 7<sup>th</sup> of the Tirthankaras. Shri Suparsvanathaswamy attained Supreme Bliss on a Phalguna Shuddha Sapthami (corresponding to the seventh day of the waxing phase in the 12<sup>th</sup> month of the lunar calendar).

www.jainelibrary.org

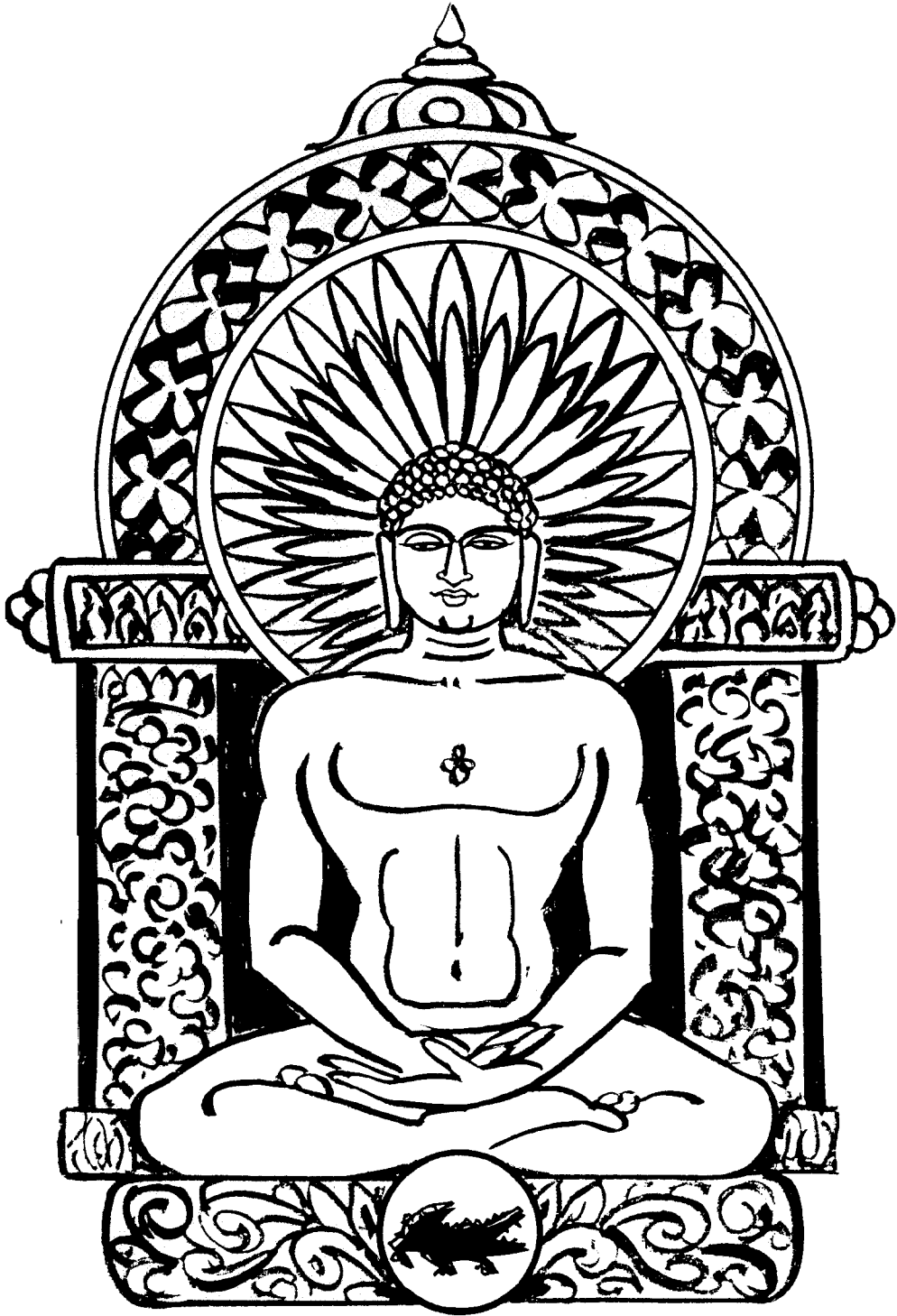


## 65. श्री चन्द्रप्रभ स्वामी

इसके बाद चन्द्रपुरी के शासन राजा महासेन और रानी लक्ष्मण को पुष्य शुद्ध द्वादशी के दिन श्री चन्द्रप्रभ स्वामी पैदा हुए। लौकिक (सांसारिक) जीवन २९ साल बिताने के बाद पुष्य शुद्ध त्रयोदशी के दिन चन्द्रपुरी में सन्यास की दीक्षा स्वीकार करके समस्त कर्मों का त्याग करके फाल्गुन शुद्ध सप्तमी के दिन केवल ज्ञान पाकर आठवें तीर्थङ्कर के रूप में अपने को उन्होंने प्रकट किया। वे अपना पार्थिव शरीर छोड़कर भाद्रपद शुद्ध सप्तमी के दिन मेक्ष को प्राप्त हुए।

## 65 SHRI CHANDRAPRABHA SWAMY

The 8<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Chandraprabha Swamy. He was born to King Mahasena and Queen Lakshmana, rulers of Chandrapuri on a Pushya Shuddha Dwadasi (corresponding to the twelfth day of the waxing phase in the tenth month of the lunar calendar). For some time he led a secular life but soon his mind was bent upon taking the vow of monkhood. So he took the vow at Chandrapuri itself on a Pushya Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of tenth month in the lunar calendar). Having broken all the earthly bonds and attachments (the effect of Karmas) Shri Chandraprabha Swamy attained Kevalajnana, thus becoming an Arhantha on a Phalguna Shuddha Sapthami (corresponding to the seventh day in the waxing phase of the twelfth month in the lunar calendar). He revealed himself as 8<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He left his earthly abode on a certain Bhadrapada Suddha Sapthami (corresponding to the seventh day in the waxing phase of the sixth month in the lunar calendar).



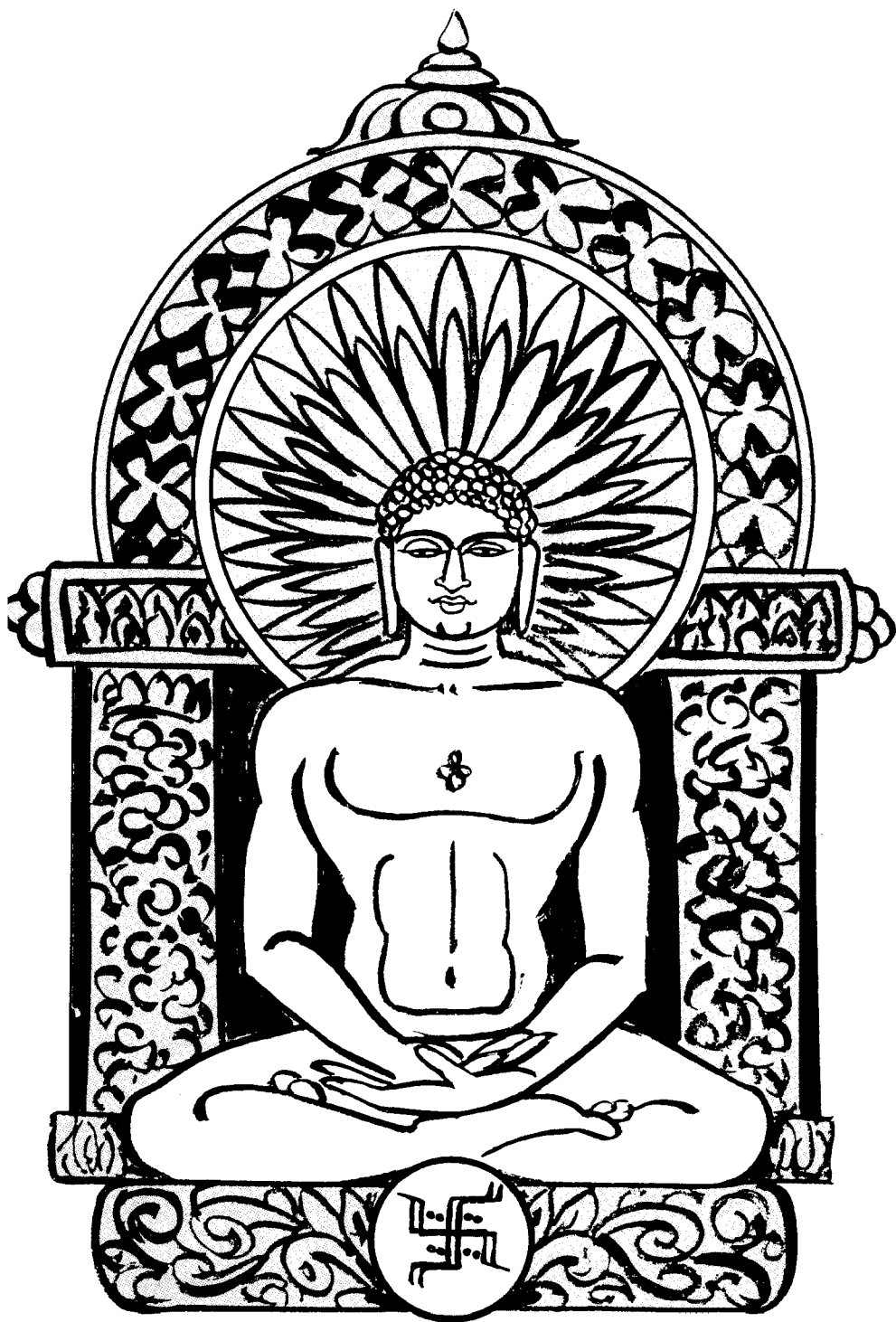
## 66. श्री सुविधनाथ स्वामी

इसके पश्चात काँकंडि के शासक महाराज सुग्रीव थे और उनकी रानी रमा थी। उस दम्पति का पुत्र होकर श्री सुविधनाथ स्वामी ने आषाढ शुद्ध पंचमी के दिन जन्म लिया। समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त करके आषाढ शुद्ध तृतीया के दिन श्री सुविधनाथ स्वामी ने सन्यासी दीक्षा स्वीकार कर ली। उन्होंने समस्त कर्मों को छोड़ कर कार्तिक बहुल तृतीया के दिन केवल ज्ञान को प्राप्त किया और वे अर्हंत हुए और नौवाँ तीर्थङ्कर बन गये। उनके निर्याण भाद्रपद बहुला नवमी के दिन हुआ।

## 66 SHRI SUVIDHANATHASWAMY

The 9<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Suvidhanathaswamy. He was the son of King Sugriva and Queen Rama of Kakandi. It was on an Ashadha Shuddha Panchami (corresponding to the fifth day in the waxing phase of the fourth month of the lunar calendar) that his birth occurred. He also enjoyed all the material pleasures for some time before becoming surfeited and on a certain Ashadha Bahula Thadiya, (corresponding to the third day in the waning phase of the fourth month of the lunar calendar) Shri Suvidhanathaswamy took the vow of Sanyasa. After having broken all the bonds of Karma, he became a Kevalin and thus an Arhantha on a certain Karthika Bahula Thadiya (corresponding to the third day of the waning phase in the eighth month of the lunar calendar). He thus became the 9<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He attained Supreme Bliss on a Bhadrpadava Bahula Navami (corresponding to the ninth day in the waning phase of the sixth month in the lunar calendar).



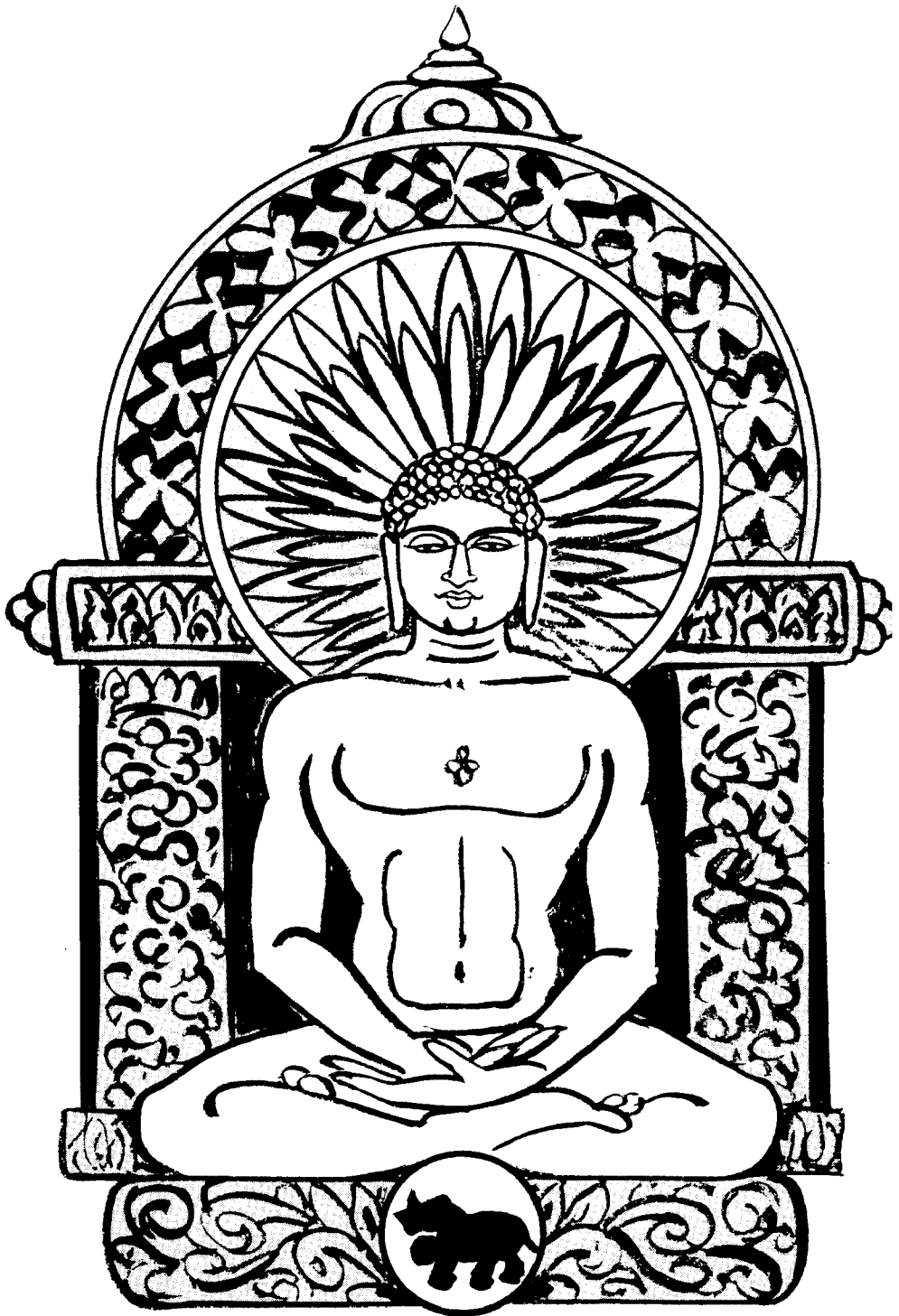


## 67. श्री शीतलनाथ स्वामी

इसके पश्चात बद्दिलापुर के राजा द्विधनाथ और रानी नन्दादेवी के पुत्र के रूप में माघशुद्ध द्वादशी के दिन श्री शीतलनाथ स्वामी ने जन्म लिया। कतिपय वर्ष लौकिक जीवन व्यतीत करके माघ शुद्ध द्वादशी के दिन उन्होंने सन्यास की दीक्षा स्वीकार कर ली। उन्होंने कर्म छोड़कर पुष्य शुद्ध चर्तुदशी के दिन केवल ज्ञान प्राप्त किया। वे अर्हत होकर दसवें तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए। उनके निर्याण वैशाख शुद्ध द्वितीया को हुआ।

### 67 SHRI SEETHALANATHA SWAMY

Shri Seethalanathaswamy is the 10<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He was the son of King Dridhanatha and Queen Nandadevi of Baddilapura. The auspicious day of birth being Magha Shuddha Dvadasi (corresponding to the twelfth day of the waxing phase in the eleventh month of the lunar calendar). In order to be turned away from the earthly pulls, it was necessary that a person leads an earthly life for some time. Shri Seethalanathaswamy was no exception and so, after having spent material pleasures, he finally relinquished them to take the vow of Sanyasa on a Magha Shuddha Dvadasi (corresponding to the twelfth day in the waxing phase of the eleventh month in the lunar calendar). Having thus become freed from the effects of past karmas, Shri Seethalanathaswamy became a Kevalajnani and an Arhantha on a Pushya Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waxing phase of the tenth month in the lunar calendar) and thus unveiled himself as the 10<sup>th</sup> of the Tirthankaras. the Nirvana (Supreme Bliss) occurred on a Vaisakha Suddha Vidiya (corresponding to the second day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar)

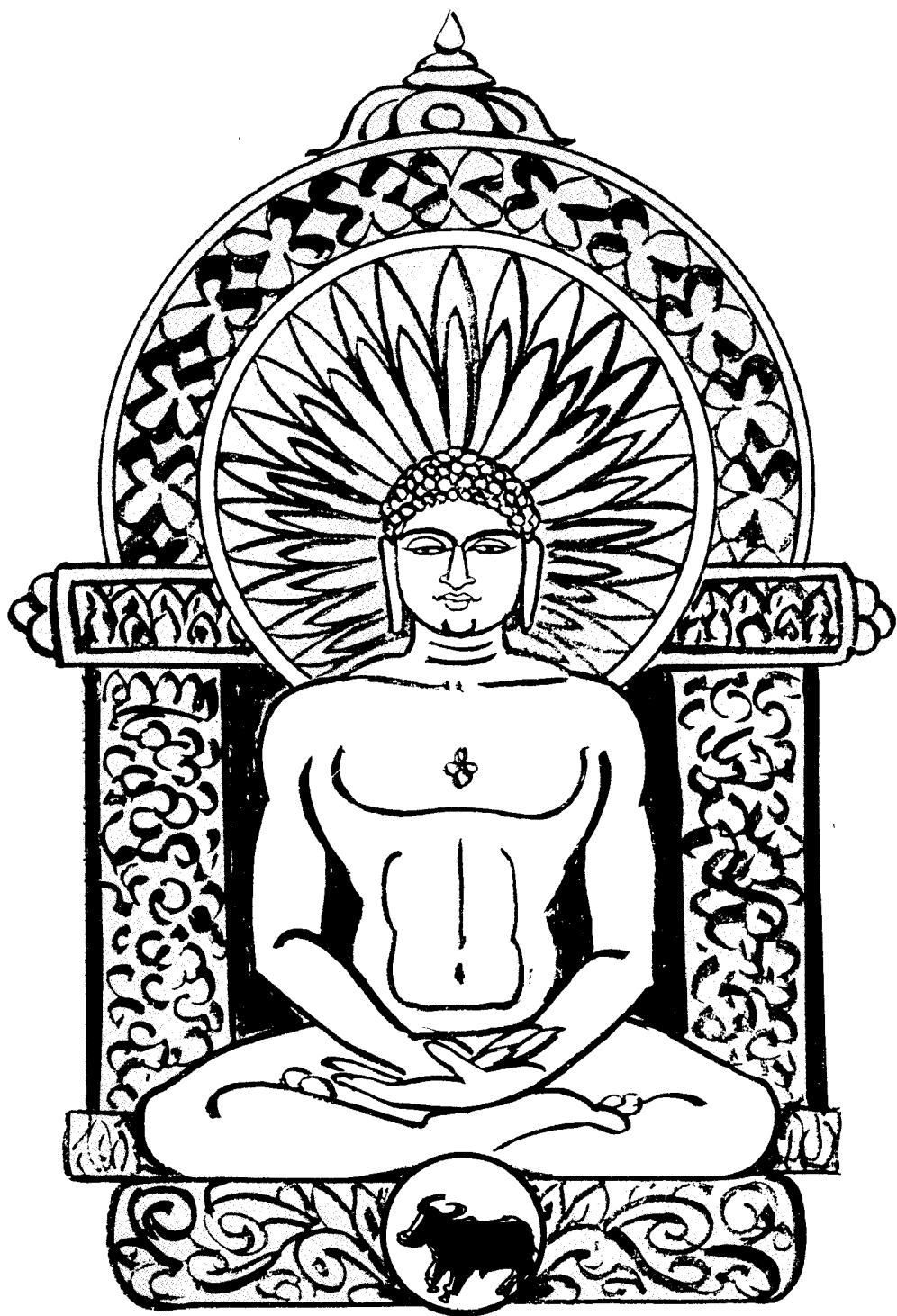


## 68. श्री श्रेयांशनाथ

श्री श्रेयांसनाथ के माता-पिता सिंहपुरी की रानी वैष्णवी और राजा विष्णु थे। उनके पुत्र के रूप में उनके जन्म फालगुण शुद्ध त्रयोदशी के दिन हुआ। कुछ वर्षों तक ऐहिक जीवन को व्यतीत कर उन्होंने समस्त कर्मों से मुक्ति पायी और माघ शुद्ध तृतीया के दिन केवल ज्ञान पाया। अर्हत होकर ग्यारहवें तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए। इसके पश्चात एक शुभ दिन में उनके निर्याण हुआ।

## 68. SHRI SREYANSANATHA SWAMY

Shri Shryensanathaswamys is the 11<sup>th</sup> of the Tirthankaras. His parents were King Vishnu and Queen Vaishnavi of Simhapuri (city of the Lion). Having led a material life for some time Shri Shreyansanatha Swamy gave it up in favour of monkhood on a Phalguna Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of the twelfth month in the lunar calendar). After having been freed thus of the effects of Karmas, Shri Shreyansa Natha Swamy obtained Kavalajnana on a Magha Shuddha Thadiya (corresponding to the third day in the waxing phase of the eleventh month in the lunar calendar), and became an Arhantha. He was the 11<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He gave up his physical body on an auspicious day.

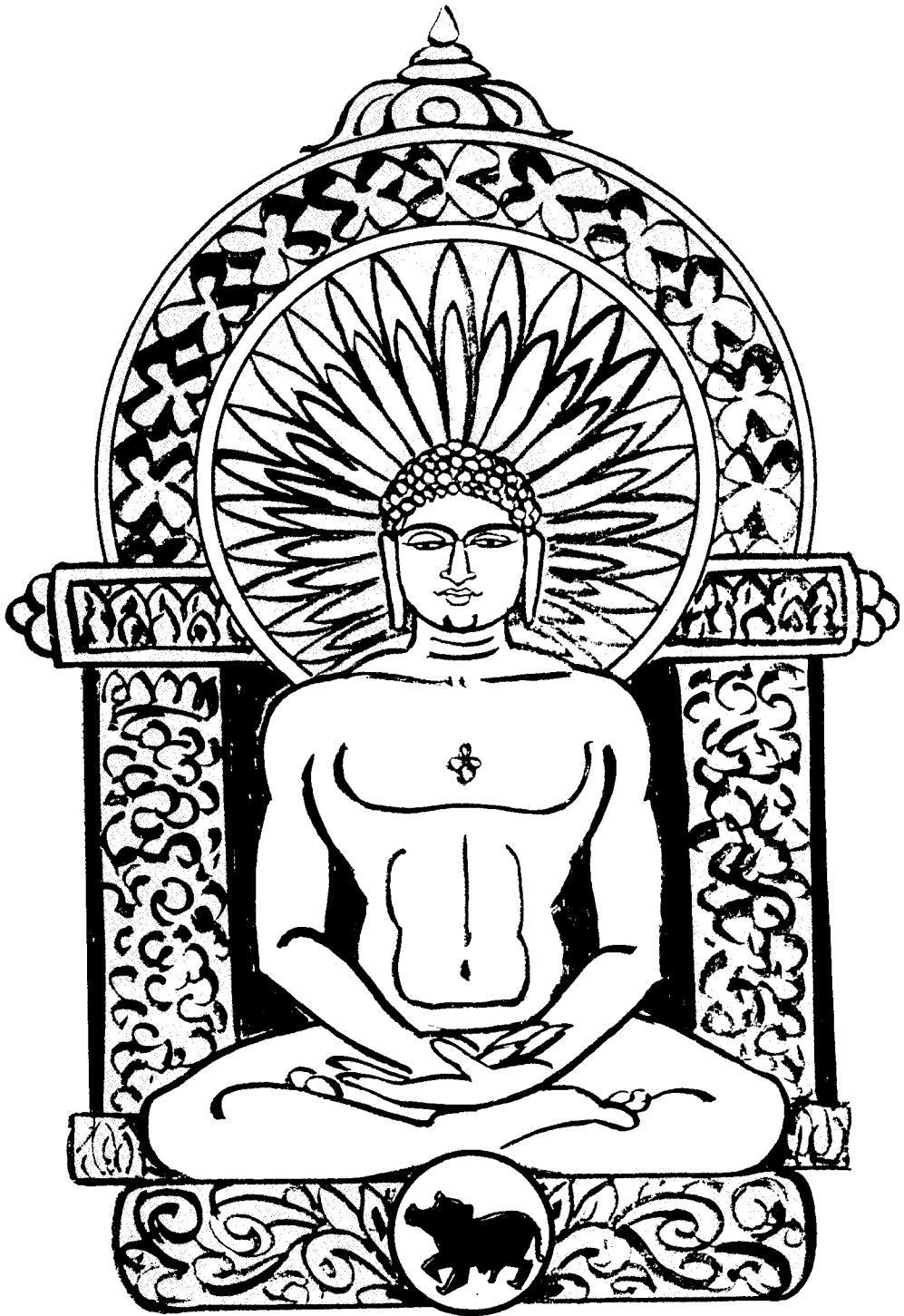


## 69. श्री वासुपूज्य स्वामी

बाद में, चम्पापुरी के महाराज वसुपूज्य और उनकी रानी जय देवी को पुत्र के रूप में श्री वासुपूज्य ने फाल्गुन शुद्ध चतुर्दशी के दिन जन्म लिया। कुछ वर्ष तक लौकिक जीवन बिताया। इसके बाद फाल्गुन अमावास्या के दिन उन्होंने सन्यास की दीक्षा ली। समस्त कर्मों को छोड़कर उन्होंने केवल ज्ञान प्राप्त किया। माघशुद्ध द्वितीया के दिन वे अर्हत बने। फिर बाद में बारहवें तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए और उनके निर्याण आषाढ बहुल चतुर्दशी को हुआ।

## 69 SHRI VASUPUJYA SWAMY

Shri Vasupujya Swamy is the 12<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He was the son of King Vasupujya and Queen Jayadevi of Champapuri. The auspicious day of birth being Phalguna Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waxing phase of the twelfth month in the lunar calendar). He also enjoyed all the material pleasures for some time and on a certain Phalguna Amavasya (corresponding to the New Moon Day in the twelfth month in the lunar calendar). Shri Vasupoojya Swamy took the vow of Sanyasa. After having broken all the bonds of Karma, he became a Kevalin and thus an Arhantha on a certain Magha Shuddha Vidiya (corresponding to the second day in the waxing phase of the eleventh month in the lunar calendar). He thus became the 12<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He attained Supreme Bliss on a certain Ashadha Bahula Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar).



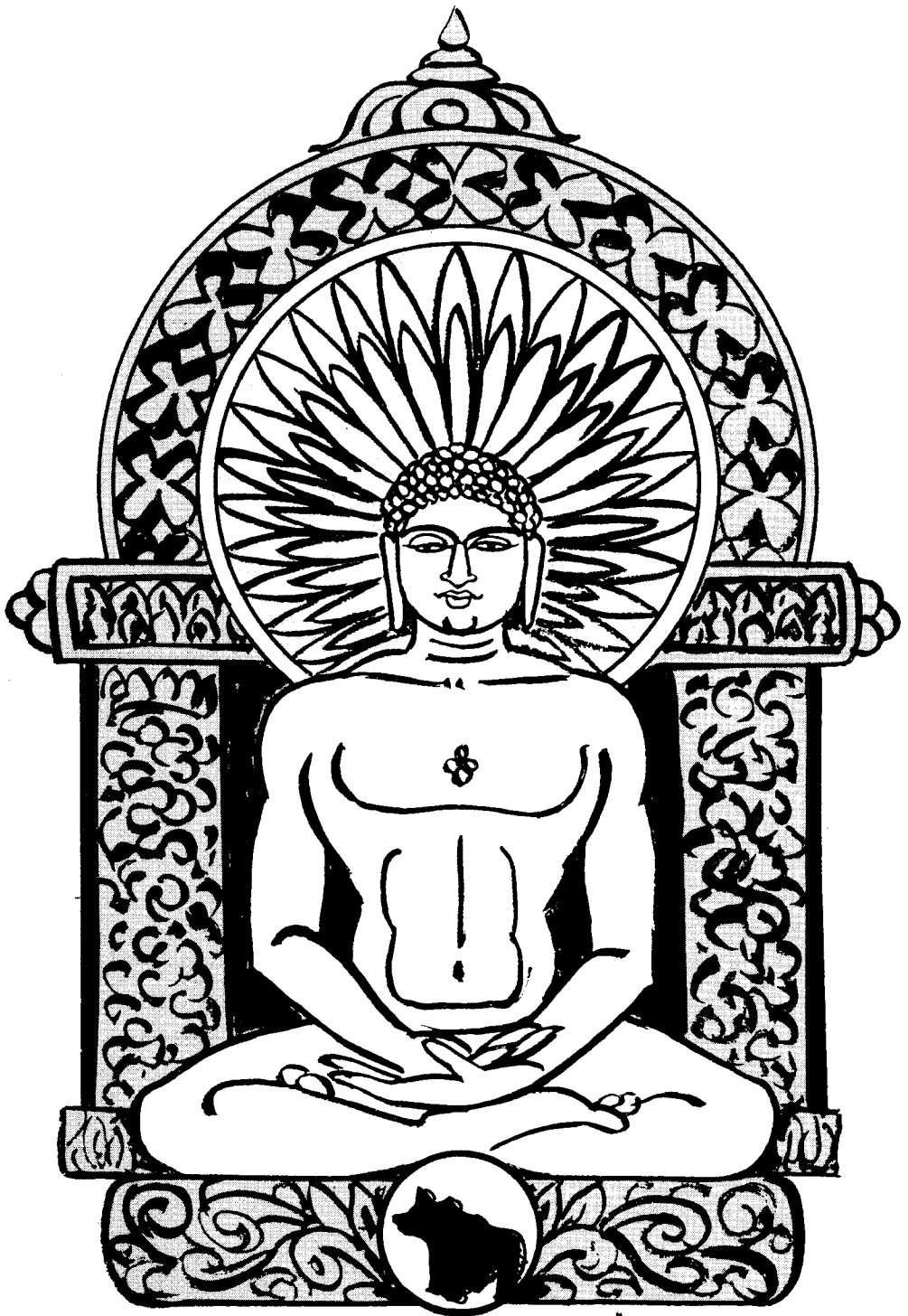
## 70. श्री विमलनाथ स्वामी

कपिलपुर के शासक थे राजा कृतवर्मा और उनकी रानी थी श्यामला देवी। उनके पुत्र के रूप में श्री विमलनाथ के जन्म माघ बहुल तृतीया के दिन हुआ। समस्त सम्पत्तियों को भोगकर माघ बहुल चतुर्था के दिन वे सन्यासाश्रम में प्रविष्ट हुए। सारे कर्मों को छोड़कर पुष्य बहुल षष्ठी के दिन केवल ज्ञान प्राप्त करके अर्हंत बने और तेरहवों तीर्थङ्कर हुए। उनके निर्याण आषाढ़ शुद्ध सप्तमी के दिन हुआ।

## 70 SHRI VIMALANATHASWAMY

The 13<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Viamlanatha Swamy. Kapilapuram was being ruled by King Krithavarma and Queen Shyamadevi was his consort. Shri Vimalanathaswamy was their child. He was born on a certain Magha Bahula Thadiya (corresponding to the third day in the waning phase of the eleventh month in the lunar calendar). After having spent a secular life for some years, Shri Vimalanatha Swamy entered monkhood on a certain Magha Bahula Chavithi (corresponding to the fourth day in the waning phase of the eleventh month in the lunar calendar) and attained Kevalajnana on a certain Pushya Bahula Shasthi (corresponding to the sixth day in the waning phase of the tenth month in the lunar calendar). He thus became the 13<sup>th</sup> Tirthankar and attained Supreme Bliss on a certain Ashadha Shuddha Saptami (corresponding to the seventh day in the waxing phase of the fourth month in the lunar calendar).



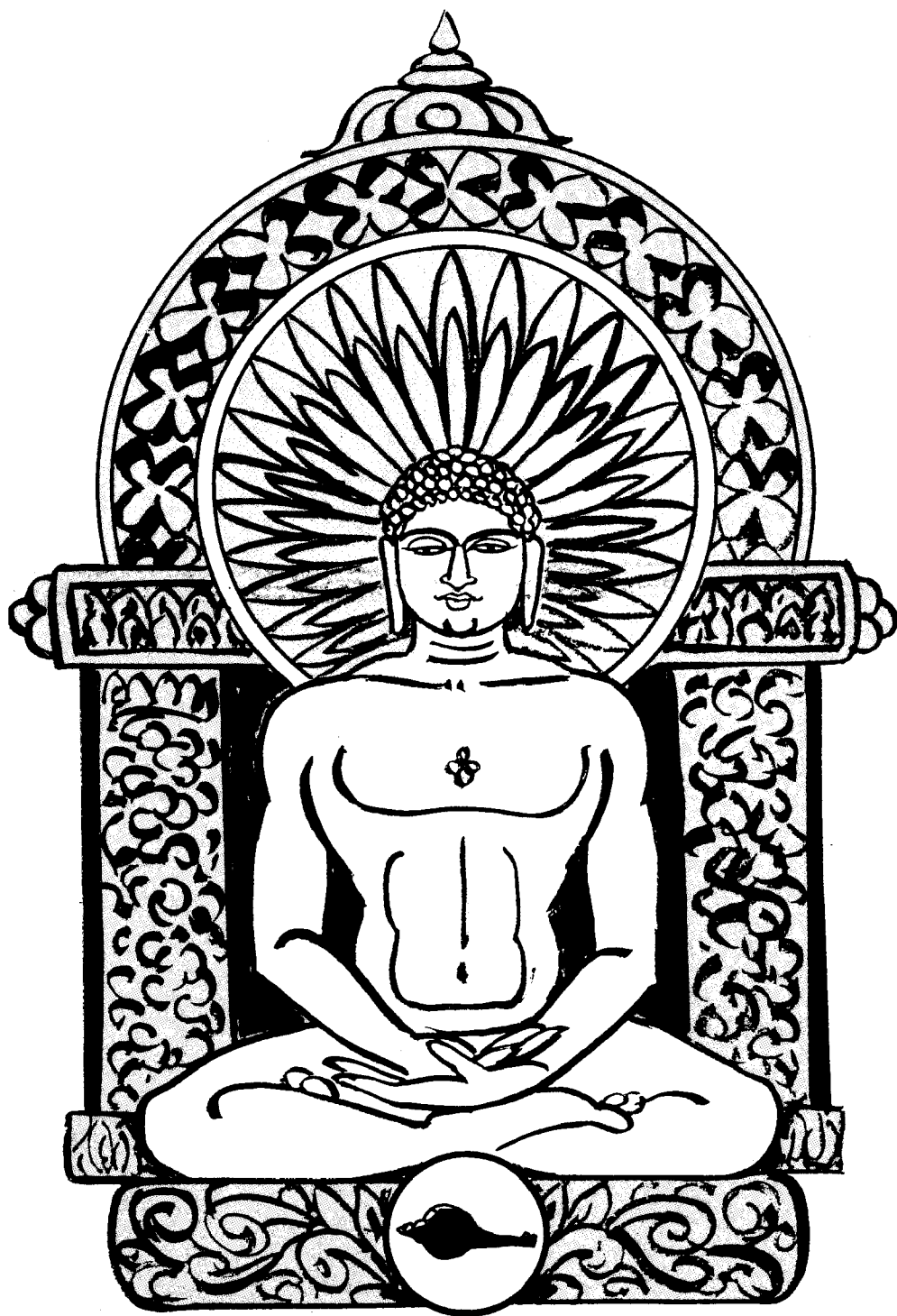


## 71. श्री अनन्तनाथ स्वामी

अयोध्या का शासन राजा सिंहसेन करते थे। उनकी रानी सुयाषा थी। उनके पुत्र के तौर पर श्री अनन्तनाथ स्वामी का जन्म वैशाख शुद्ध त्रयोदशी के दिन हुआ। उन्होंने कुछ वर्षों तक सांसारिक जीवन बिताया। वैशाख शुद्ध चतुर्दशी के दिन वे सन्यास की दीक्षा ग्रहण करके अर्हंत हुए और चौदहवाँ तीर्थङ्कर बने। उनके निर्याण चैत्र बहुल पंचमी के दिन हुआ।

## 71 SHRI ANANTHANATHA SWAMY

Shri Ananthanatha Swamy is the 14<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He was the son of King Simhasena and Queen Suyasha of Ayodhya. The auspicious day of birth being Vaisakha Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar). He also enjoyed all the material pleasures for some time and on a certain Vaisakha Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar). Shri Ananthanatha Swamy took the vow of Sanyasa. After having broken all the bonds of Karma he became a Kevalin on a certain Vaisakha Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar) and thus an Arhantha. He is thus the 14<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He attained Nirvana on a certain Chaitra Bahula Panchami (corresponding to the fifth day in the waning phase of the first month in the lunar calendar).

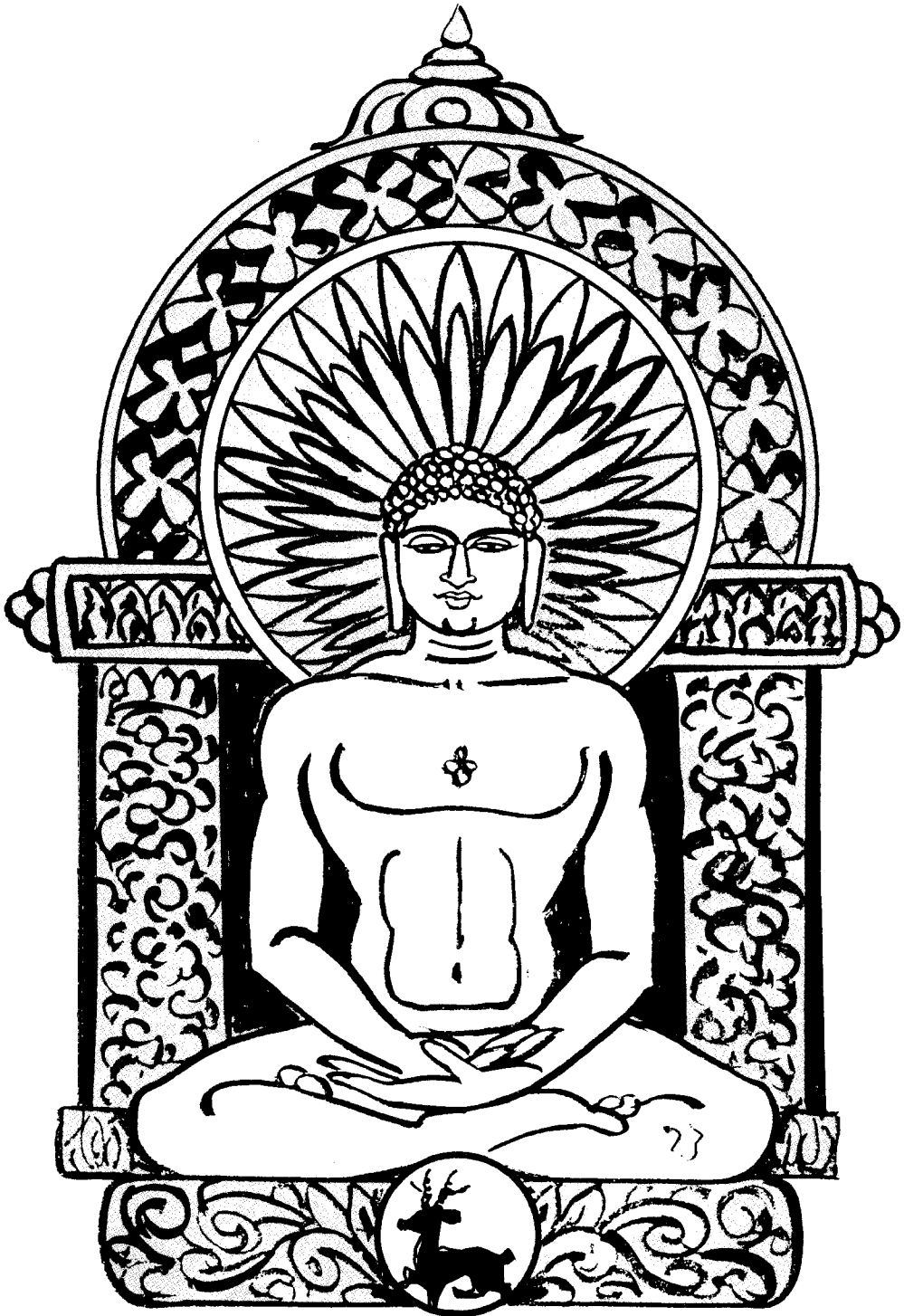


## 72. श्री धर्मनाथ स्वामी

रत्नपुरी का शासन भानु नामक राजा करते थे। उनकी रानी सुव्रता थी। उनके पुत्र के तौर पर श्री धर्मनाथ स्वामी का जन्म माघ बहुल तृतीया के दिन हुआ था। राज्य सुखों का अनुभव कुछ वर्षों तक करके माग शुद्ध त्रयोदशी के दिन सन्यास की दीक्षा में दीक्षित हुए। सारे कर्मों का विसर्जन करके वे पुष्य पूर्णिमा के दिन अर्हंत बने और पन्द्रहवें तीर्थङ्कर हुए थे। बाद में उनके निर्याण जेष्ठ बहुल पंचमी को हुआ था।

## 72 SHRI DHARMANATHASWAMY

The 15<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Dharmanatha Swamy. The city of Ratnapuri was then ruled by King Bhanu and Queen Suvratha. Shri Dharmanatha Swamy was born to this royal couple on a certain Magha Bahula Thadiya (corresponding to the third day in the waning phase of the eleventh month in the lunar calendar). After having spent the royal life for some years, he entered the order of Sanyasa on a Magha Shuddha Triyodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of the eleventh month in the lunar calendar). Having transcended all earthly pulls and attachments, Shri Dharmanatha Swamy attained Kevalajnana and thus became an Arhantha on a certain Pushya Pournima (corresponding to the Full Moon day of tenth month in the lunar calendar). He thus became the 15<sup>th</sup> of the Tirthankaras. Shri Dharmanatha Swamy gave up his mortal body on a certain Jyestha Bahula Panchami (corresponding to the fifth day in the waning phase of the third month in the lunar calendar).

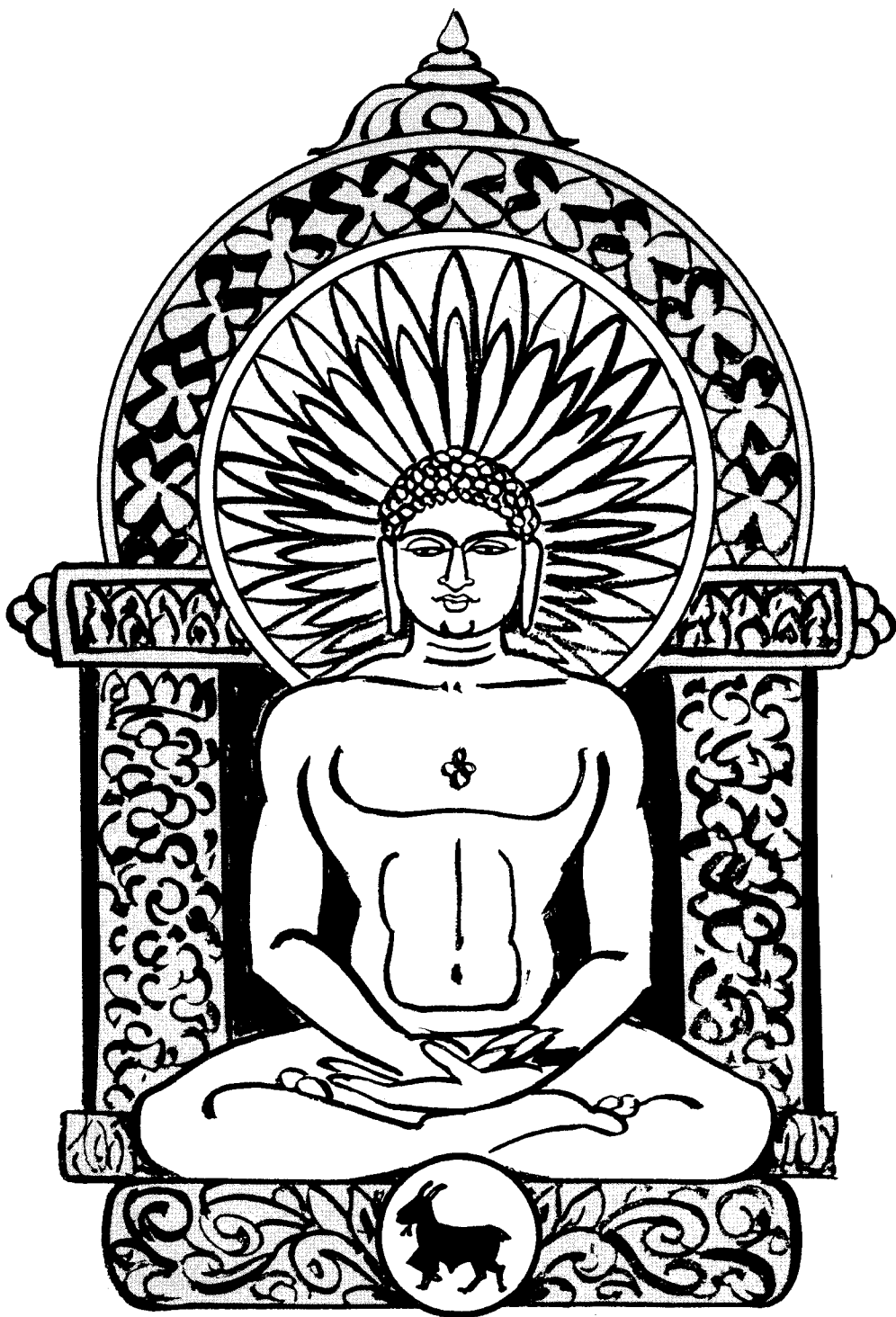


## 73. श्री शान्तिनाथ स्वामी

गजपुरी का शासन राजा विश्वसेन करते थे और उनकी रानी अचिरा थी। उनके पुत्र के तौर पर ज्येष्ठ शुद्ध त्रयोदशी के दिन श्री शान्तिनाथ स्वामी का जन्म हुआ। उन्होंने युवावस्था में सब राजसुखों को भोग लिया। जवानी के घमण्ड में रहते समय उन्हें दो देवताओं ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर नश्वर शरीर के सम्बन्ध में बताया था। जिसके कारण उनको ज्ञानोदय हुआ। ज्येष्ठ शुद्ध चतुर्थी के दिन श्री शान्तिनाथ स्वामी ने सन्यास की दीक्षा ली और मोह में फँसाने वाले शरीर का मोह छोड़ दिया। अन्त में पुष्य-बहुल नवमी के दिन केवल ज्ञान की प्राप्ति होने पर वे अर्हत होकर सो लहवें तीर्थङ्कर बन गये। इस प्रकार धन्य जीवन व्यतीत करने वाले स्वामी ज्येष्ठ शुद्ध त्रयोदशी के दिन निर्याण को प्राप्त हुए थे।

## 73 SHRI SHANTHINATHA SWAMY

The 16<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Santhinathaswamy. He was born to King Viswasena and Queen Achira of Gajapuri. The day was Jyeshtha Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of the third month in the lunar calendar). He was leading a reckless life out of vanity - during his youth - in the Kingdom and on certain day he was blessed with spiritual insight and reflection by the grace of the Gods from Heaven. He started thinking about the transitoriness of this world and ultimately on a certain auspicious day he took the vow of mendicancy [i.e. on a certain Jyeshtha Shuddha Chavithi (corresponding to the fourth day in the waxing phase of the third month in the lunar calendar)] and attained Kevalajnana on a certain Pushya Bahula Navami (corresponding to the ninth day in the waning phase of the tenth month in the lunar calendar) and thus became an Arhantha. He attained Supreme Bliss on a Jyeshtha Shuddha Trayodasi (corresponding to the thirteenth day in the waxing phase of the third month in the lunar calendar).



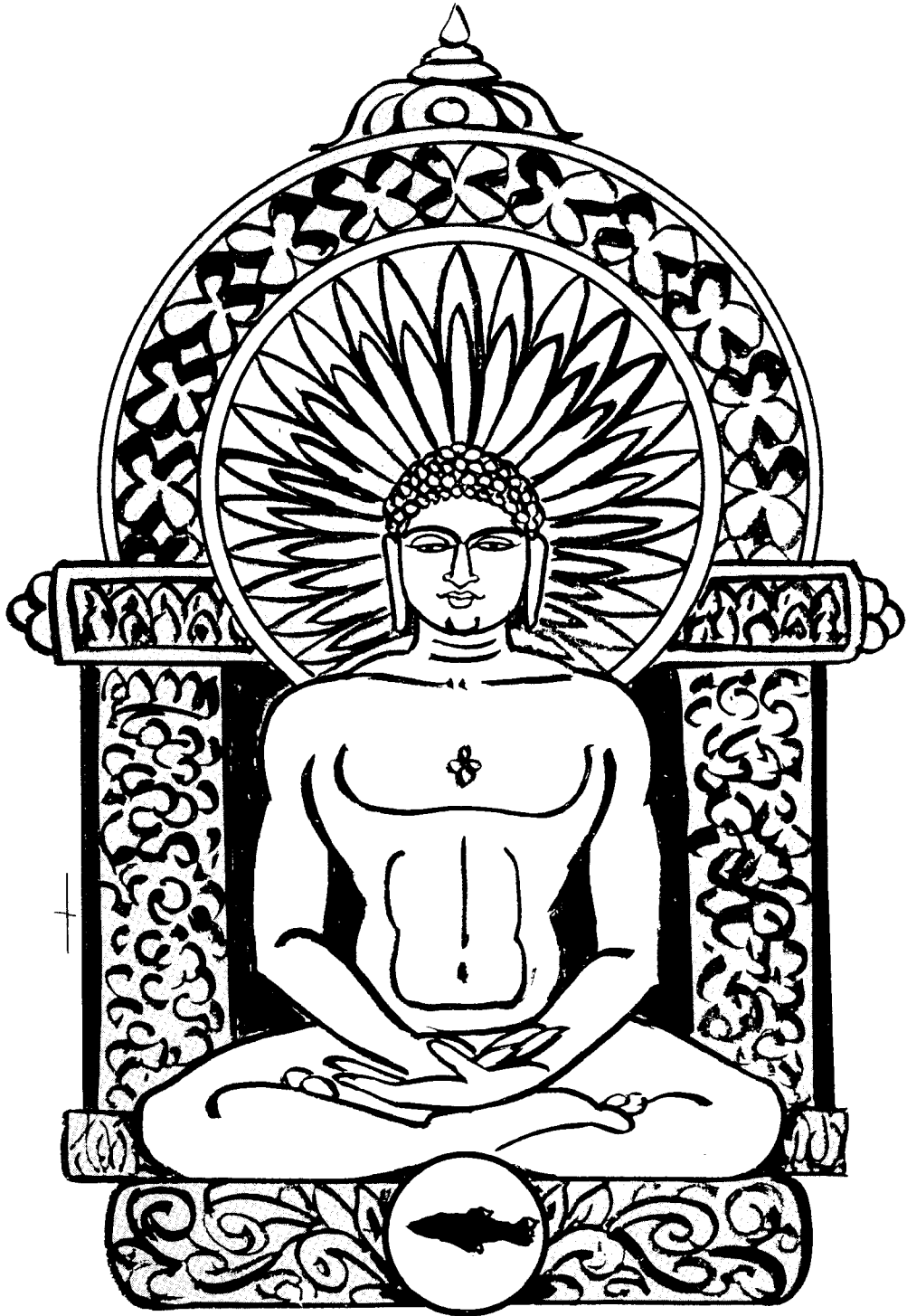
## 74. श्री कुन्तुनथ स्वामी

गजपूर का शासन करनेवाला राजा सुर था और रानी श्री थी। उनके पुत्र के रूप में वैशाख शुद्ध चतुर्दशी के दिन श्री कुन्तनाथ का जन्म हुआ था। कुछ दिन सांसारिक जीवन बिताकर चैत्र शुद्ध पंचमी के दिन उन्होंने सन्यास की दीक्षा ले ली। समस्त कर्मों को छोड़कर चैत्र शुद्ध तृतीया के दिन वे केवल ज्ञान का लाभ उठा कर अर्हत हुए और शत्रुहर्त्रे के तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए थे। वैशाख शुद्ध पाड्यमी के दिन वे मोक्षगामी हुए थे।

## 74 SHRI KUNTHUNATHA SWAMY

The next of the Tirthankaras is Shri Kunthunatha Swamy. The city of Gajapuram was then ruled by King Sura and Queen Sri. Shri Kunthunathaswamy was born to this royal couple on a certain Vaisakha Shuddha Chaturdasi (corresponding to the fourteenth day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar). After having spent a married life for some years, Shri Kunthunathaswamy entered monkhood on a Chaitra Shuddha Panchami (corresponding to the fifth day in the waxing phase of the first month in the lunar calendar) and attained Kevalajnana on a certain Chaitra Bahula Thadiya (corresponding to the third day in the waning phase of the first month in the lunar calendar) and thus became an Arhantha and 17<sup>th</sup> of the Tirthankaras. He attained Nirvana on a certain Vaisakha Shuddha Padyami (corresponding to the first day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar).





## 75. श्री अर्हनाथ स्वामी

गजपुर के राजा सुधर्म थे और उनकी रानी देवी थे। इस दम्पति के पुत्र के तौर पर आषाढ बहुल (कृष्णपक्ष) दशमी के दिन अर्हनाथ स्वामी का जन्म हुआ था। युवावस्था में राज्य का शासन करने के कुछ दिनों के बाद राज्य-भोगों से विमुख होकर उन्होंने सन्यासकी दीक्षा आषाढ बहुल एकादशी के दिन ग्रहण की। समस्त कर्मों को त्याग कर तीन साल के बाद कार्तिक बहुल (कृष्णपक्ष) के द्वादशी के दिन वे केवल ज्ञान को हासिल कर चुके। फिर अर्हत बन कर अठारहवें तीर्थङ्कर बन गये। उनका निर्याण आषाढ कृष्ण पक्ष के दशमी के दिन को हुआ था।

## 75 SHRI ARHA NATHA SWAMY

The 18<sup>th</sup> of the Tirthankaras is Shri Arhanatha Swamy. He was born to the royal couple King Sudarshana and Queen Devi of Gajapuri. He was born on a certain Ashadha Bahula Dasami (corresponding to the tenth day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar). After having spent the royal life for some years, he took the vow of Sanyasa on an Ashadha Bahula Ekadasi (corresponding to the eleventh day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar). He had undergone many trials and tribulations during his penances and ultimately on a certain Karthika Bahula Dwadasi (corresponding to the twelfth day in the waning phase of the eighth month in the lunar calendar), he attained Kevalajnana and thus became an Arhantha and thus became the 18<sup>th</sup> of the Tirthankaras in the order. He had attained Supreme Bliss on an Ashadha Bahula Dasami (corresponding to the tenth day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar).

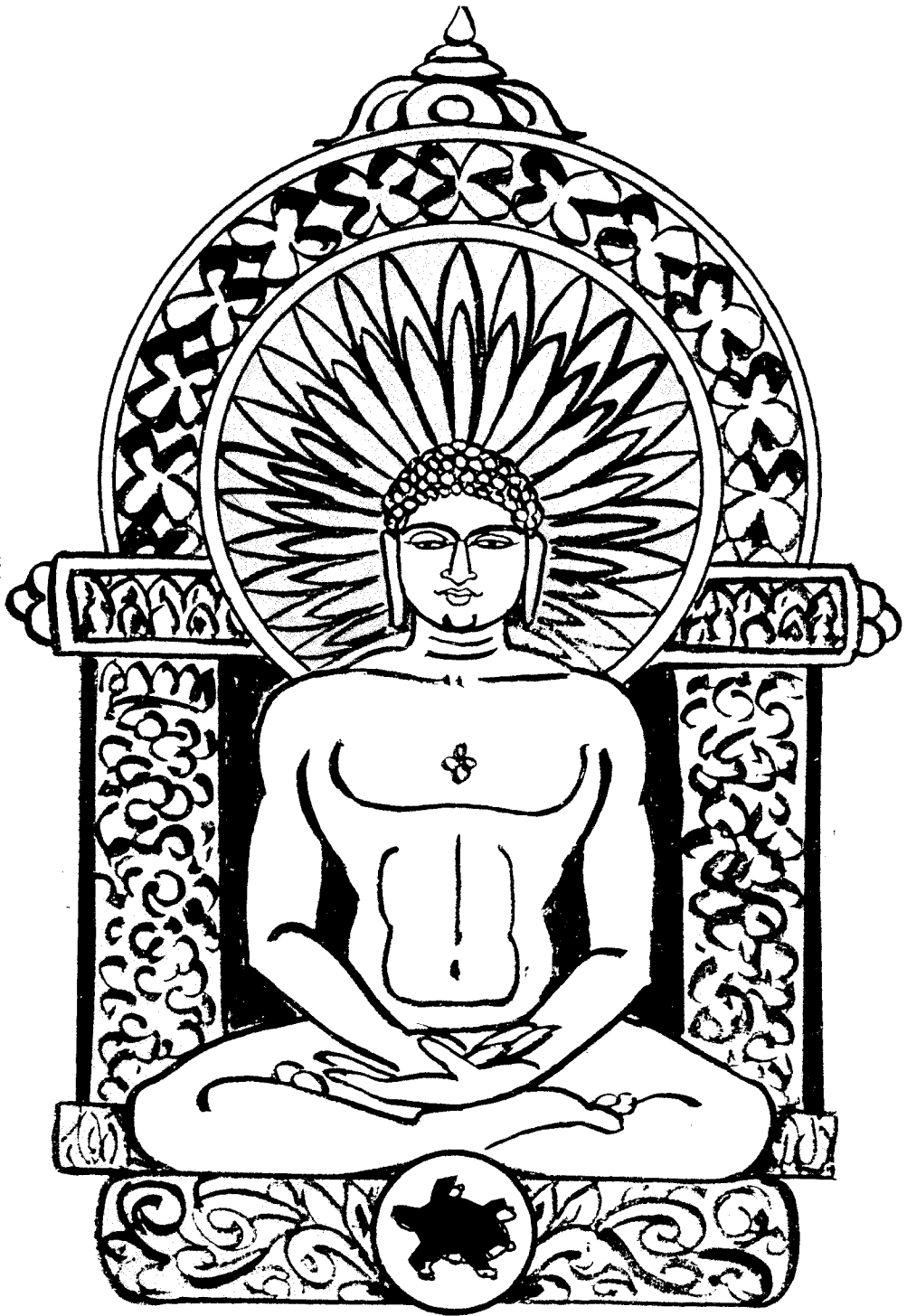


## 76. अरहंत श्री मल्लि (श्री मल्लिनाथ स्वामी)

मिथिला नगर के राजा कुंभ थे और उनकी रानी प्रभा देवी थी। उनकी पुत्रिका के रूप में श्री मल्लि का जन्म आषाढ़ के कृष्ण पक्ष के एकादशी के दिन हुआ था। बचपन से ही वह वीतराग रही और युवती होने पर उसने सन्यासिनी की दीक्षा ले ली। उसी दिन उसने केवल ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान की प्राप्ति का श्रेय उस स्त्री को ही मिला। फिर इसके बाद वह अर्हंत हुई। वह उन्नीसवीं तीर्थङ्करिणी बनी। फाल्गुन के कृष्ण पक्ष के द्वादशी के दिन उनकी निर्याण हुआ। तीर्थङ्कर के रूप में वह विख्यत हुई। उनकी जीवन से यह साबित होता है कि स्त्रियाँ भी अर्हंत हो सकती हैं।

## 76 SHRI MALLINATHA SWAMY (ARHANTHA SHRI MALLI)

Shri Arhantha Malli is the 19<sup>th</sup> of the Tirthankaras. She was the daughter of King Kumbha and Queen Prabhadevi of Mithila. She took birth on an auspicious Ashadha Bahula Ekadasi (corresponding to the eleventh day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar). From the very early childhood she naturally developed an insight into the life of mendicancy and thus she took the vow of Sanyasa and on a certain Ashadha Bahula Ekadasi (corresponding to the eleventh day in the waning phase of the fourth month in the lunar calendar) and on the same day she attained Kevalajnana. Thus she became the 19<sup>th</sup> of the Tirthankaras and on a certain Phalguna Bahula Dwadasi (corresponding to the twelfth day in the waning phase of the twelfth month in the lunar calendar), she attained Supreme Bliss. Her life itself is the proof that a woman can also become a Kevalin.



## 77. श्री मुनिसुव्रत स्वामी

राजगृह का शासन राजा सुमित्र करते थे। उनकी रानी पद्मावती थी। इस दम्पति को पुत्र के रूप में ज्येष्ठ शुद्ध अष्टमी के दिन श्री मुनिसुव्रत का जन्म हुआ था। बारह साल लौकिक जीवन को बिताने के बाद फाल्गुन के कृष्णपक्ष के दिन उन्होंने सन्यास लिया। समस्त कर्म छोड़कर फाल्गुन शुद्ध द्वादशी के दिन कैवल्य ज्ञान प्राप्त करके अर्हत हुए और बीसवें तीर्थङ्कर के रूप में वे प्रकट हुए। ज्येष्ठ शुद्ध नवमी के दिन उनके निर्याण हुआ था।

## 77 SHRI MUNISUVRATHA SWAMY

The next of the Tirthankaras is Shri Munisuvratha Swamy. His parents were King Sumitra and Queen Padmavathi of Rajagriha. The auspicious day of birth was Jyeshtha Shuddha Ashtami (corresponding to the eighth day in the waxing phase of the third month in the lunar calendar). After having spent a royal life for 22 years, Shri Munisuvrutha Swamy entered monkhood on a Phalguna Bahula Dwadasi (corresponding to the twelfth day in the waning phase of the twelfth month in the lunar calendar). Having broken all the earthly bonds, he attained Kevalajnana on a Phalguna Shuddha Dwadasi (corresponding to the twelfth day in the waxing phase of the twelfth month in the lunar calendar) and thus became an Arhantha and he is the 20<sup>th</sup> of the Tirthankaras in the order. He attained Moksha on a Jyeshtha Shuddha Navami (corresponding to the ninth day in the waxing phase of the third month in the lunar calendar).



## 78. श्री नमिनाथ स्वामी

मथुरा के महाराजा विजय थे और उनकी रानी विप्रादेवी थी। उनको श्रावण बहुल अष्टमी के दिन पुत्र के तौर पर श्री नमिनाथ का जन्म हुआ था। कुछ साल लौकिक जीवन बिताने के बाद सुखों से विमुख होकर आषाढ शुद्ध नवमी के दिन श्री नमिनाथ सन्यास लिया। इसके बाद समस्त कर्मों को छोड़कर ग्यारह महीनों के अनन्तर केवल ज्ञान के प्राप्त होने पर अर्हत बने। फिर वे इक्कीसवें तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए। वैशाख शुद्ध दशमी के दिन उनके निर्याण हुआ था।

## 78 SHRI NAMINATHA SWAMY

Shri Naminatha Swamy is the 21<sup>st</sup> of the Tirthankaras. He was the son of King Vijaya and Queen Vipradevi of Mathura. The auspicious day of birth being Sravana Bahula Ashtami (corresponding to the eighth day in the waning phase of the fifth month in the lunar calendar). He also enjoyed all the material pleasures for sometime and on a certain Ashadha Shudda Navami (corresponding to the ninth day in the waxing phase of the fourth month in the lunar calendar), Shri Naminatha Swamy took the vow of Sanyasa. After 11 months of Mendicancy he attained Kevalajnana and thus became an Arhantha and thus he is the 21<sup>st</sup> of the Tirthankaras. He attained Nirvana on a Vaisakha Shuddha Dasami (corresponding to the tenth day in the waxing phase of the second month in the lunar calendar).



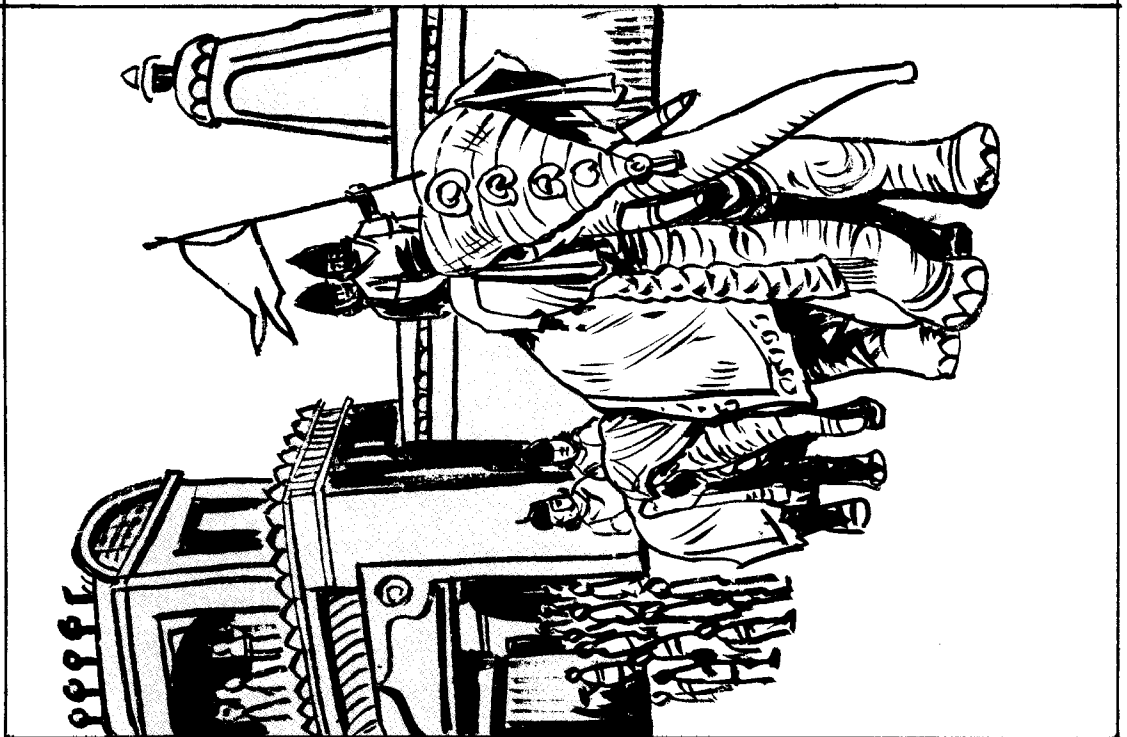
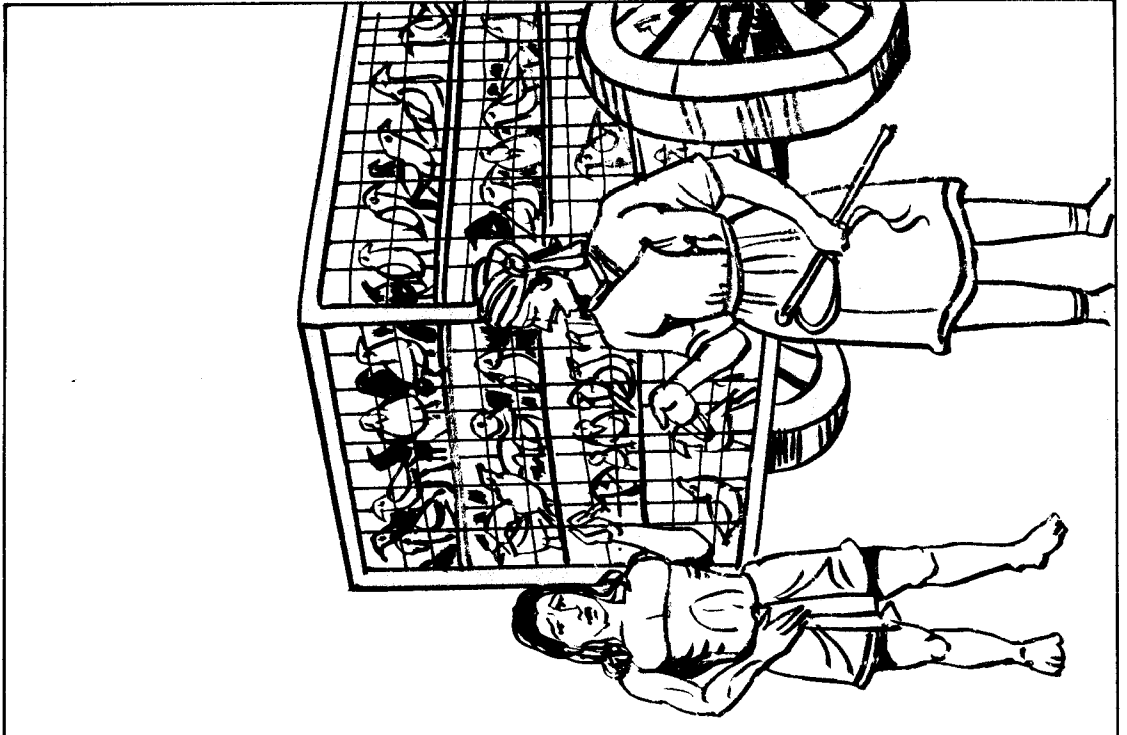


## 79. श्री नेमिनाथ स्वामी

सौराष्ट्र के शासक राजा समुद्रविजय थे और उनकी रानी शिवरानी थी। उनके पुत्र के रूप में श्रावण बहुल पंचमी के दिन श्री नेमिनाथ का जन्म हुआ। वे जन्म से ही अत्यन्त बलशाली थे। खेल प्रतियोगिता में वे अपने साथियों को आसानी से हरा देते थे। गिरनार के जंगलों में जो सिंह रहते थे उनके केसरो को पकड़कर वे खेलते थे। ऊँची कद के शरीर वाले होने के कारण वे देखनेवालों को आनन्दित करते थे। एक बार अपनी माँ की सलाह पर अपने वंशज श्री कृष्ण और बलराम को देखने के लिए द्वारका गये। तब श्री कृष्ण और बलराम घर पर नहीं थे। श्री नेमिनाथ महल के अन्दर गये और एक एक कमरे में रखे हुए हथियारों को एक एक करके कौतूहल और उत्सुकता के साथ देखते

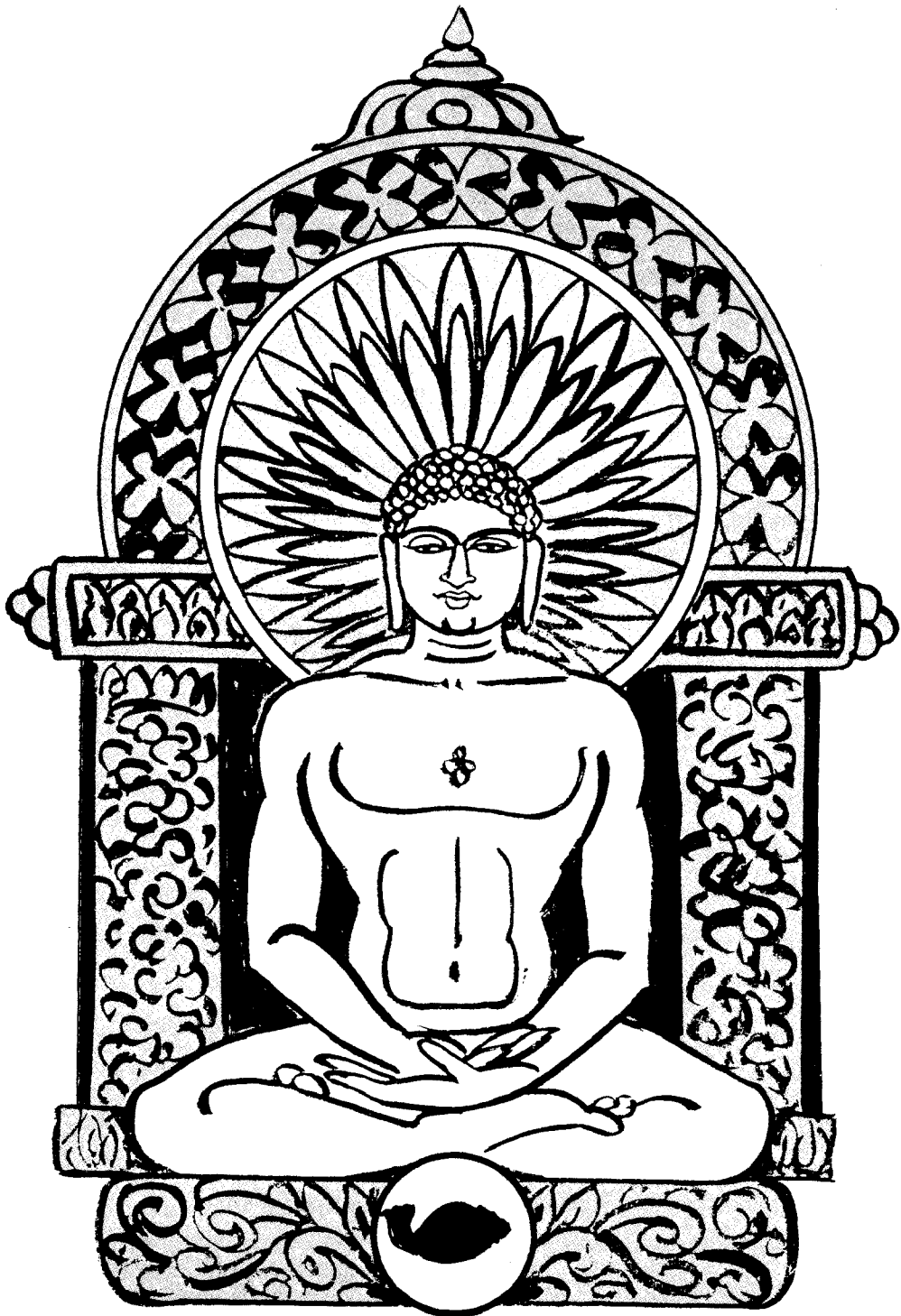
## 79 SHRI NEMINATHASWAMY

Shri Neminatha Swamy is the 22<sup>nd</sup> of the Tirthankaras. His parents were King Samudravijaya and Queen Sivarani of Saurashtra (modern day Gujarat) on a certain Sravana Bahula Panchami (corresponding to the fifth day in the waning phase of the fifth month in the lunar calendar). From birth itself Shri Neminathaswamy was a person of Physical prowess. He easily overcame all his playmates in the daily games. The nearby Girnar forests were the habitat of Lions then (even as now). Shri Neminatha used to play with lions as though they were pet dogs. He used to catch hold of their manes and thus control them. Long armed and tall he was a feast for the eyes. One day, at the suggestion of his mother, he went to the city of Dwaraka. At that time neither Shri Krishna nor Balarama was in the house. In the meantime, Shri Neminatha was curious to study the articles used by Shri Krishna. Shri Krishna's conch was Panchajanya, an eloquent and magnificent "Shanka". Shri Neminatha was filled with wonder at the sight and was immediately filled with a desire



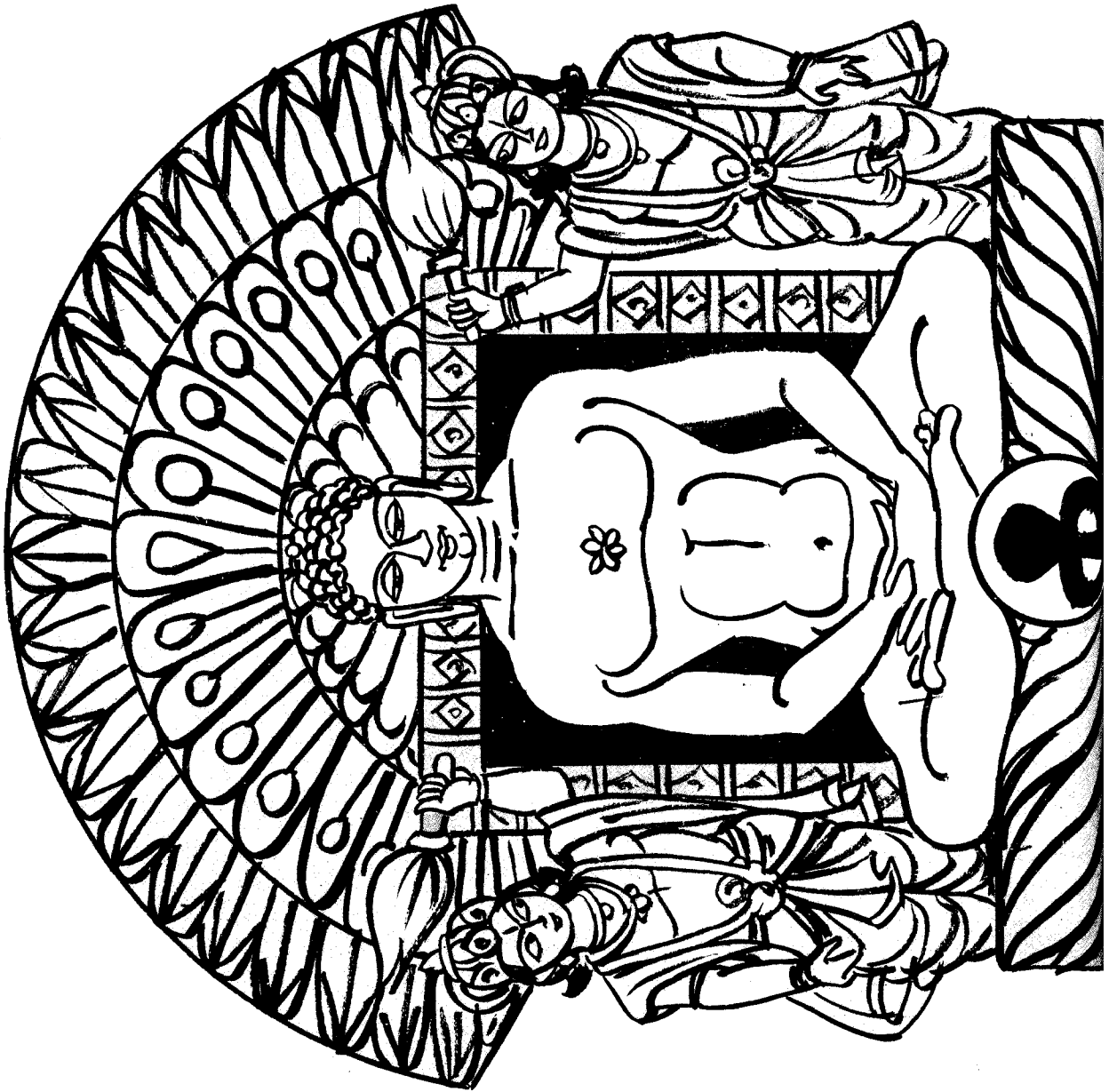
रहे। श्री कृष्ण का अत्यन्त भयोत्पादक पाँचजन्य नामक शंख को देखकर वे बहुत विस्मित हुए। उसको हाथ में लेकर उन्होंने उसे फूँका। उसकी आवाज सारी से राजधानी काँप उठी। इस बात को जानकर श्री कृष्ण एक दम द्वारका में पहुँचे। नेमिनाथ की ताकत को देखकर और उन्हें अपना सगा-सम्बन्धी जानकर श्री कृष्ण ने उनका विवाह करने का प्रयत्न करने लगे। वैवाहिक जीवन के पराङ्मुख रहनेवाले नेमिनाथ बटों की बात नहीं ठुकरा सके। वे विवाह के लिये सहमत हो गये। वधू मथुरा नगर की युवराणी थी। बड़ी धूमधाम के साथ वर को लेकर वधु मित्र सपरिवार मथुरा नगर को पहुँचे। श्री नेमिनाथ जनवास में रात को सोये हुए थे तब चिड़ियों की चहचहाहट सुनाई पड़ी। नेमिनाथ ने उठकर पूछ-ताछ की तो मालूम हुआ कि मेहमानों को जलसे में खिलाने के लिये दूसरे दिन सब चिड़ियों को पकाएँगे। यह बात सुनकर नेमिनाथ चिन्ताग्रस्त हुए। सोचा कि मानवों के सुख के लिए प्राणियों की बलि ठीक नहीं है। एकदम उनके

to blow it. No sooner was this desire born in his heart, Shri Neminatha took the conch in his hands and blew it with all his might. It was such a loud sound that escaped from the Sankha that it reverberated through-out the kingdom and filled the hearts of the people with fear. Shri Krishna himself was much surprised. He returned home post-haste and was introduced to Shri Neminatha, his cousin. Shri Krishna felt that such a powerful man was characterised by machismo and immediately began efforts to get his cousin married. But Shri Neminatha, inspite of all his manliness, was reluctant to lead married life. At the same time he could not say no to his parents and his cousins and agreed to get married. The bride was the princess of Mathura. The bridal party was on the move with all the paraphernalia. Soon the party arrived at a resting place on the way and were sleeping, when their sleep was disturbed by the cries of birds. On inquiry it was revealed that these birds were meant for meat on the following day at the camp. All the birds were going into the dishes to be prepared on the



मन में वैराग्य का उद्भव हुआ। उन्होंने झटपट घर छोड़कर सन्यास की दीक्षा ग्रहण की। परिव्राजक बन गये। समस्त कर्मों का त्याग कर ज्ञान की प्राप्ति के लिये जंगलों में घुमकड़ बनकर घुम-फिरने लगे। तपस्या की। केवल ज्ञान प्राप्त करके अर्हंत बने। चौबीसवें तीर्थङ्कर के रूप में उन्होंने अपारयश पाया। आषाढ़ बहुल अष्टमी के दिन उनका निर्याण हुआ। श्री नेमिनाथ का चरित्र सुननेवाले वहाँ के शिष्यगणों ने शद्धा और भक्ति के साथ उनको प्रणाम किया।

following day. Having been thus informed Shri Neminatha was smitten with remorse and pity, whereupon his heart immediately filled with a spirit of renunciation. Without a second's delay, Shri Neminatha left the camp, took the vow of Sanyasa and became a travelling mendicant. He trekked through all the forests. Having snapped all bonds of Karma, he also performed Tapasya (ascetic practice), as a result of which he attained Kevalajnana on an auspicious day when the Moon was in conjunction with the star Svathi. Having thus become an Arhantha, Shri Neminatha Swamy unveiled himself as the 22<sup>nd</sup> Tirthankara. Through his exemplary life he won a great name and fame and finally gave up his physical body on an Ashadha Bahula Ashtami - corresponding to the eighth day of the waning phase in the fourth month of the lunar calendar. (The company of disciples who were listening to the stories of the Tirthankaras - were filled with so much awe and reverence towards Shri Neminathaswamy that they bowed to his memory after the narration of his story was completed).



## 80. श्री पार्श्वनाथ स्वामी

वारणासी (काशी) का शासन राजा अश्वसेन करते थे। उनकी रानी वामदेवी थी। उस दम्पति के पुत्र के रूप में पुष्य शुद्ध दशमी के दिन श्री पार्श्वनाथ का जन्म हुआ था। इस जीवन के अशाश्वत (नश्वर) होने के बारे में जानकारी पाकर श्री पार्श्वनाथ स्वामी ने पुष्य शुद्ध एकादशी के दिन वारणासी में ही सन्यास की दीक्षा लेली और ८४ दिनों में समस्त कर्म छोड़ दिये। उनको सन्यासी का जीवन व्यतीत करते समय कई कष्टों को ढेलना पड़ा। एक बार जब वे ध्यान में निमग्न रहे तब उनका ध्यान भंग करने के उद्देश्य से असुर मेघमालिनी नामक राक्षस ने जोरों से मूसल धार पानी उनके ऊपर बरसाया। तुरन्त धरणेन्द्र नामक एक भुजंगराज (सर्पों का राजा) ने अपने सात फणों को छत्र (छाता) के रूप में उनके ध्यान (तप) को विघ्न से बचाने के लिये उठा कर रखा। इसके बाद स्वामी तेईसवें तीर्थङ्कर के रूप में प्रकट हुए। उनके चैत्र शुद्ध चतुर्थी को केवल ज्ञान को प्राप्ति हुई। इसके बाद एक शुभ घड़ी में उनका निर्याण हुआ।

## 80 SHRI PARSHVANATHA SWAMY

The 23<sup>rd</sup> Tirthankara is Shri Parshvanatha Swamy. Shri Parshvanatha Swamy was born to King Ashvasena and Queen Vamadevi, the ruler of Varanasi on a Pushya Shuddha Dasami. (corresponding to the tenth day in the waxing phase of the tenth month in the lunar calendar). Having spent material life for some time Shri Parshvanatha Swamy understood the ephemeral nature of earthly existence and on a Pushya Shuddha Ekadasi (corresponding to the eleventh month in the waxing phase of the tenth month in the lunar calendar) in Varanasi City itself, he took the vow of monkhood and within 84 days, was freed from the effect of all the Karmas, (the result of mental, verbal and physical acts). During his life as Sanyasi (monk) Shri Parshvanatha had to face many troubles and tribulations. Once when he was deeply immersed in meditation, a Rakshasa by name Asurameghamalini brought down a torrential downpour upon the Swami with the object of disturbing his penance. Perceiving this, a great serpent king by name Dharanendra was determined to protect the Swami in his meditation. So he reared up at the back of the Swami, unfolded his Seven Great Hoods like an umbrella and prevented rain from drenching the Swamy. The serpent thus saw to it that the penance was not disturbed at all. After this incident Shri Parshvanatha Swamy attained Kevalajnana on a certain Chaitra Shuddha Chavithi (corresponding to the fourth day of the waxing phase of the first month in the lunar calendar) thus becoming an Arhantha. He was thus revealed as 23<sup>rd</sup> Tirthankara. Finally, Shri Parshvanatha Swamy gave up his mortal body on an auspicious day.



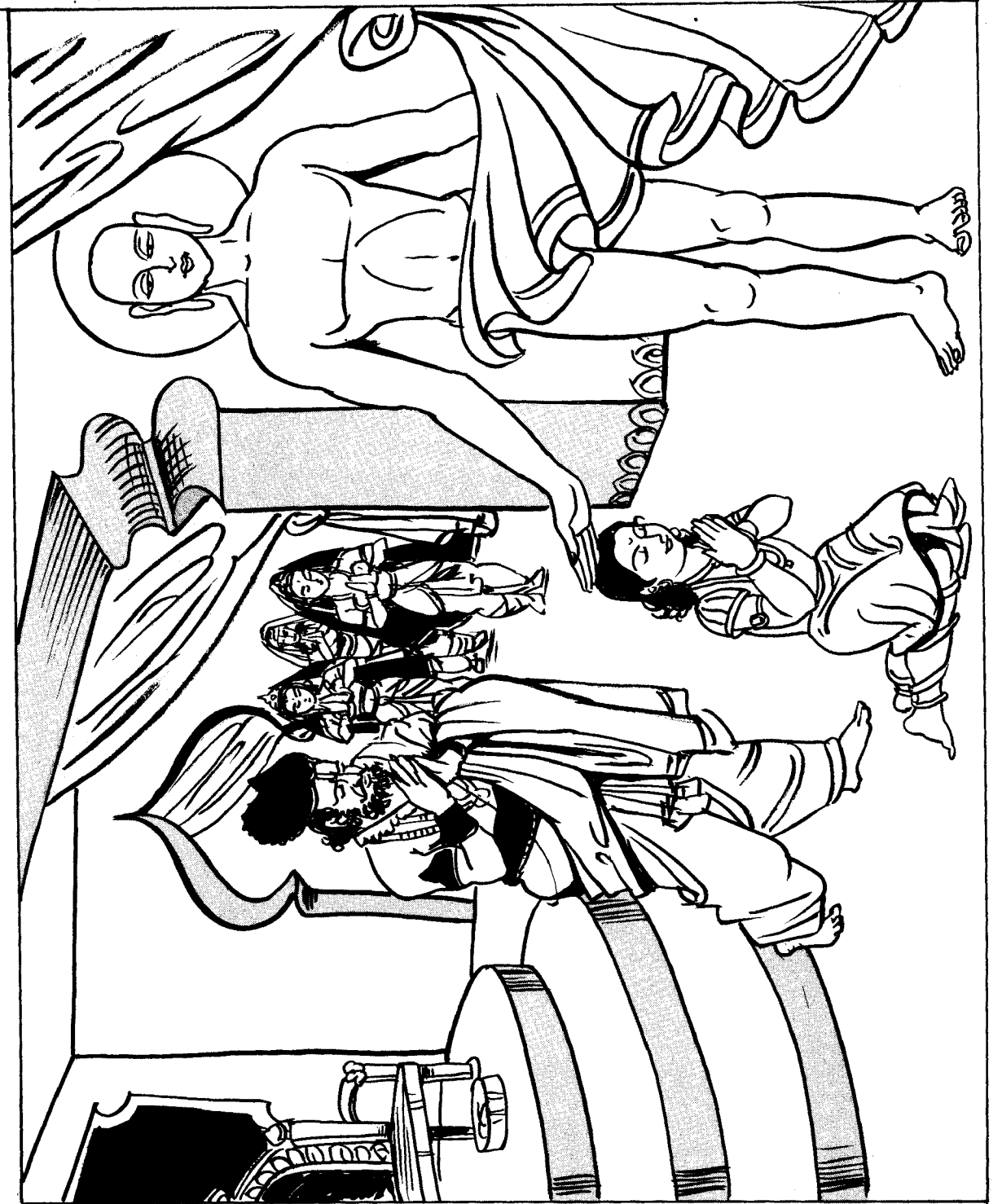


## 81. अर्हत श्री बाहुबलि

इस प्रकार तेईस तीर्थङ्करों के जीवन चरितों को सविवरण बताने के बाद श्री महावीर स्वामी ने श्री बाहुबलि के जीवन चरित्र का बयान करना शुरू किया। तीर्थङ्कर श्री ऋषभनाथ स्वामी की दूसरी पत्नी सुनन्दा का पुत्र बाहुबलि था जो तक्षशिला का राजा था। बाहुबलि का दूसरा नाम गोमटेश्वर है। वे इस नाम से भी प्रचलित हैं। श्री ऋषभनाथ स्वामी के निर्याण के बाद राज्य के बंटवारे के सम्बन्ध में वादविवाद उत्पन्न हुए थे। बाहुबलि को अपने बड़े भाई भरत से जो विनीता राज्य का राजा था, युद्ध करना पड़ा। दोनों के बीच में वैर भाव है। उन्होंने अपने अपने पक्ष की सेनाओं से अलग रहने के लिये कहा। उन्होंने परस्पर द्वन्द्व युद्ध में अपने बड़े भाई भरत को आसानी से हरा दिया। जीतने के बाद वह सोचने लगा कि राज्य की सम्पत्ति के लिये अपने भाई के साथ युद्ध करना पड़ा। द्वन्द्व युद्ध करके उनको हराना पड़ा। तुरन्त उनके मन में इस बात पर पछतावा हुआ। इसका प्रायश्चित्त करने के वास्ते उसने कायोत्सागर मुद्रा में उग्र तपस्या शुरू की। तप करते समय उनके शरीर के चारों तरफ बाँबियाँ (वल्मीक अर्थात् दीमकों का बनाया हुआ मिट्टी का भीठा या बँबीठा) उठी थीं और काँटों की बेलों और लताएँ उठी थीं। अन्त में वे अपनी तपस्या में सफल हुए। उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ तथा वे अर्हत हो गये। वे सब लोगों के लिये पूज्य और आदरणीय हो गये। इन गाथाओं को सुनकर श्री महावीर स्वामी के शिष्य वृन्द पुनीत हो अपने अपने आश्रमों की ओर चले गये।

## 81 ARHANTHA SHRI BAHUBALI

Having thus related the details of the lives of 23 Tirthankaras, Shri Mahavira Swamy began to narrate the life history of Shri Bahubali, who became an Arhantha but not a Tirthankara. Bahubali is the son of Sunanda the second wife of Shri Rishabhanathaswamy, the first Tirthankara. Bahubali ruled Takshasila. He was also known as Gomatheswara. After the Nirwana of Bahubali's father the division of Kingdom became an issue and Bahubali had to fight it out with his elder brother Bharatha, the King of Vineetha. The two brothers, having considered that the rivalry is between themselves, asked the armies on both sides to stand aside and allow them to settle it in a duel. It so happened that Bahubali defeated his brother effortlessly. However, Bahubali was stricken with remorse that he had to fight with and defeat his own elder brother for the sake of Kingdom and Wealth. As result of this Shri Bahubali turned his mind inwards and began to reflect upon the state of things. As a result of this reflection Bahubali was determined to make amends for what he considered to be his past sins. He started performing a most rigorous penance in the posture of Kayotsagara and in course of time anthills rose upon his body and tangled creepers covered the body and place entirely and yet Bahubali was quite unmoveable and with an astounding steadfastness pursued his penance until it was crowned with Kevalajnana (Absolute Knowledge). He has thus become an Arhantha, having obtained this status, as a result of his devotion and his steadfastness, Shri Bahubali may be venerated by all mankind, for his attainments have been such. He is a model for us to copy. After listening to all the stories of the Arhanthas and Tirthankaras ending with the story of Arhantha Shri Bahubali, the disciples of Shri Mahavira Swamy felt fulfilled and hallowed and left for their cottages.

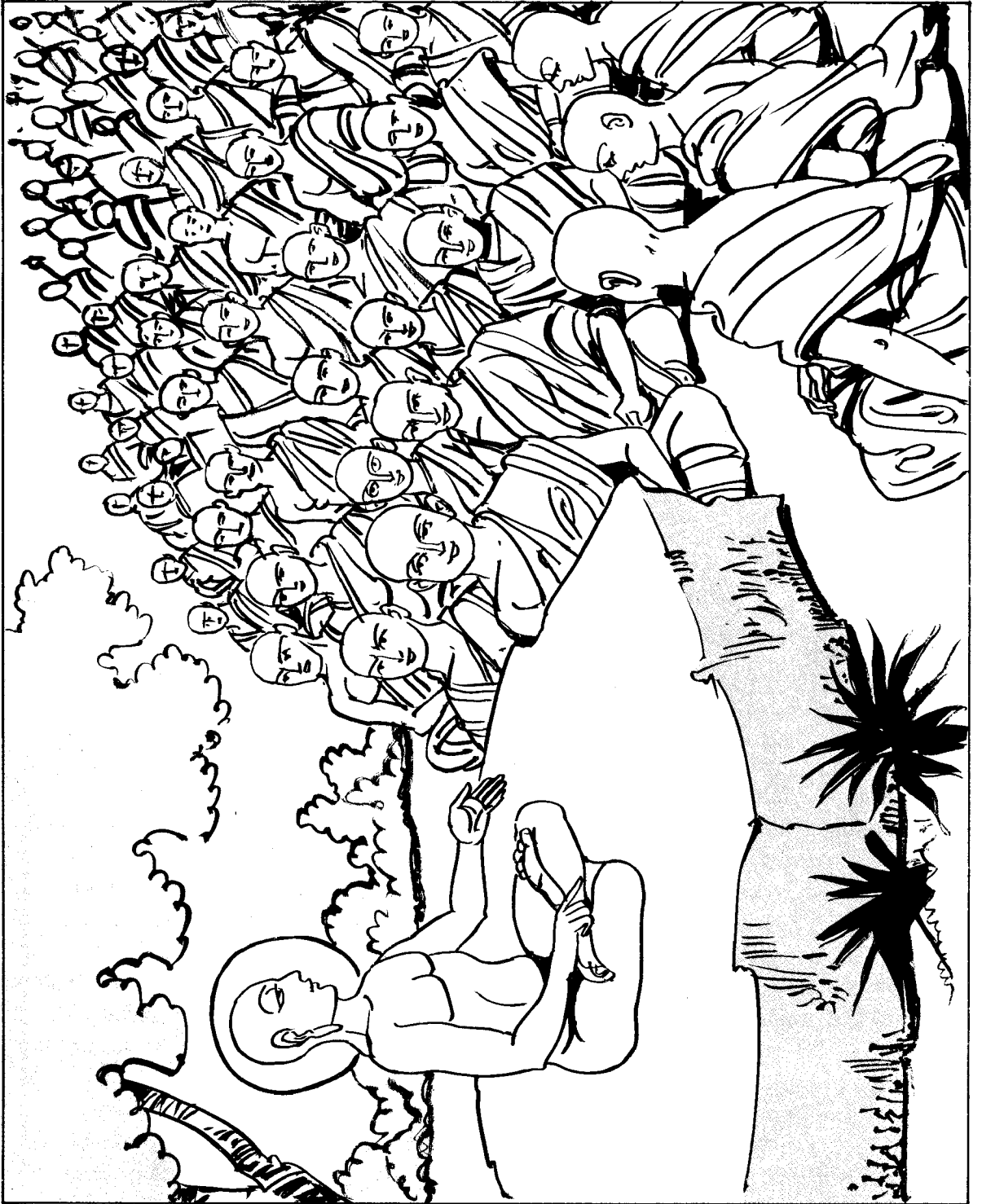


## 82. राजगृह में स्वामी

स्वामी का यश चारों ओर फैले हुए था। स्वामी के दर्शन हेतु उनके बताए हुए ज्ञान मार्ग को सुनने के लिए कई लोग लगातार आने लगे। विभिन्न देशों के मुख्य शहरों के अधिपतियाँ स्वामी को अपने अपने राज्यों में पधारने के लिए आह्वान किया। उनके राज्यों को आकर, प्रवचनों को सुनाने के लिए आमंत्रण भेजे गये। इन्हीं आमंत्रणों को स्वीकार करते हुए स्वामी 'राजगृह' राज्य का शासन करने वाले 'श्रेणिक' राजा के प्रमुख राजधानी को गये। स्वामी को स्वागत हेतु पूरे शहर को धूमधाम से सजाया गया। राजा और रानी राजकुमारों के सहित भक्ति भाव से स्वामी को प्रणाम किये। स्वामी जो ज्ञानोपदेश बता रहे थे उसको शद्धा भक्ति से सुन रहे थे। स्वामी इस सांसारिक जीवन में होने वाली अनिश्चल एवं सारविहीन स्थिति और आत्म दर्शन के द्वारा प्राप्त होने वाले आनन्द को, अपने सुमधुर भाषण से सुना रहे थे। उनके ज्ञान को सुनने वालों में राज कुमार मेघ, स्वामी से सन्यास दीक्षा ग्रहण करने हेतु उनके सामने आ गया। स्वामी संतुष्ट होकर राजकुमार मेघ को सन्यास दीक्षा ग्रहण करा दिये। तभी से उनका नाम मेघ मुनि रखा गया।

## 82 SWAMY IN RAJAGRIHA

The fragrance of the fame of the Swamy travelled in all directions; wherever he went, hundreds of people were crowding around him just to have a glimpse of his noble features and also to listen to his divine preachings. Invitations came to the Swamy from the capitals of various Kingdoms in the country requesting him to come to their places and deliver his discourses. The Swamy, having accepted one such request, visited Rajagriha, then ruled by King Srenika. The whole city bore a festive appearance as part of welcoming the Swamy to the place. The King, the Queen and the Princes attended upon the Swamy with devotion and reverence and listening to his sweet discourses on Dharma with avidity. The Swamy explained to them in a very pleasant manner the radical difference between material life and spiritual life. He explained to them that material life is insipid and barren whereas turning one's mind inwards leads to absolute bliss. One of the Princes by name Megha who was present at that discourse was bent upon accepting Sanyasa relinquishing the ephemeral material life. The Swamy did not ward him off, but gladly admitted him into monkhood, and named him "Meghamuni". For Sanyasa requires a new name as a symbol to sever all links with the previous material life.

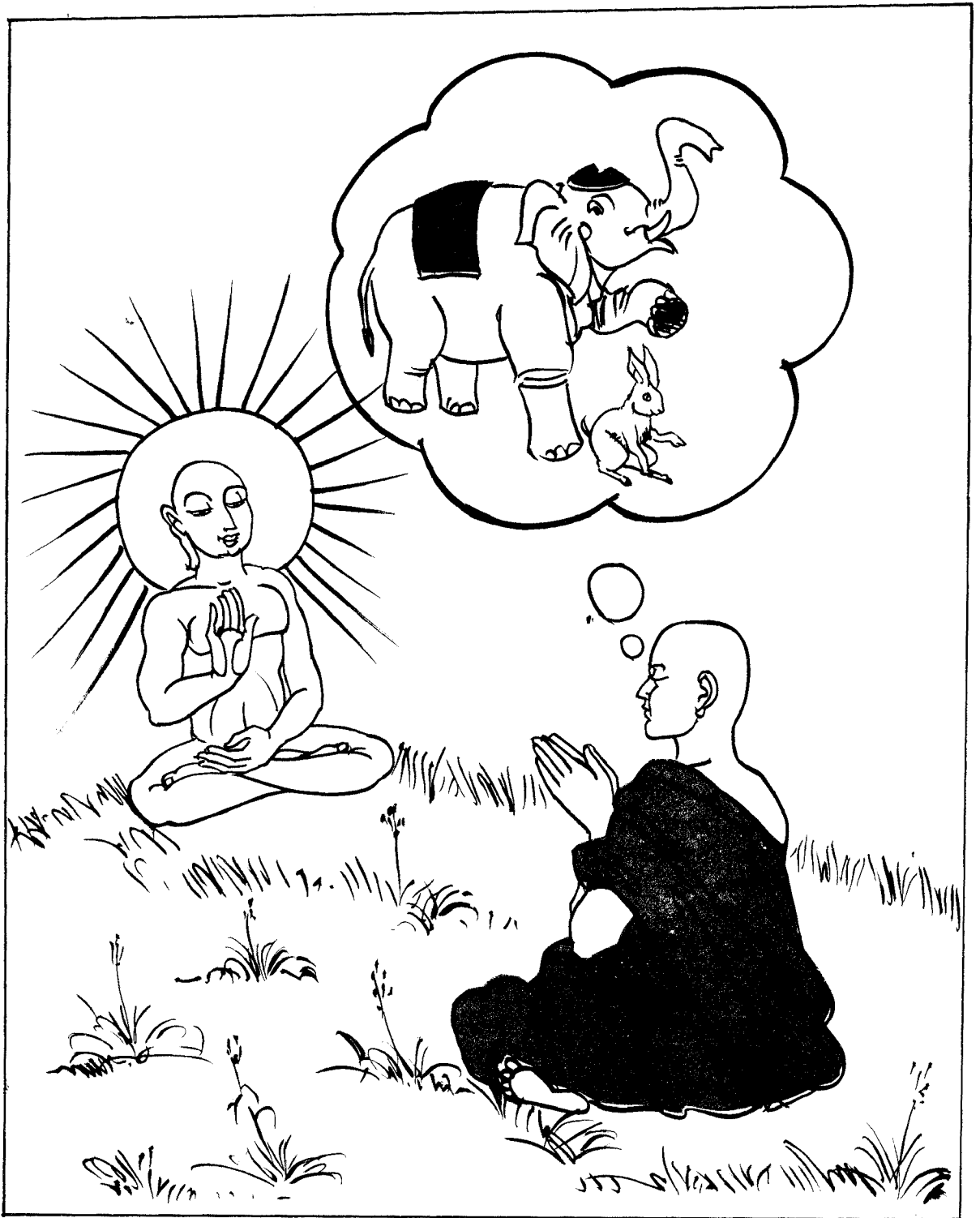


## 83. मेघमुनि का स्वाभिमान - जाति स्मरण ज्ञान

सन्यास की दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात मेंघमुनि (पूर्वाश्रम में युवराज मेघकुमार) आश्रम-जीवन के कष्टों को सहने न सके। साथी वाले सन्यासियों का उन्हें अपने से बढ़कर बड़ान मान कर बराबरी के स्तर पर देखना, निद्रा और भोजन के समय सब का एक ही पंक्ति में खाना और सोना देख कर उनके अंह के घायल होने से वे खिन्न हुए। वे अपने मन की बेचैनी का निवेदन करने के लिये स्वामी के यहाँ पहुँचकर उनके अनुग्रह की प्रतीक्षा कर रहे थे। स्वामी ने ध्यान-मुद्रा छोड़कर मेघमुनि को देखा और बीती-बात को समझ लिया। यह सोचकर कि सन्यासी जीवन की विशिष्टता समझा दी जाय, स्वामी ने उन्हें ध्यान-स्थिति में लेजाकर उनके पिछले जन्म का वृत्तान्त दृश्यों के साथ दिखाया। मेघमुनि पिछले (गत) जन्म में विन्ध्यारण्य के प्रदेश में मेरुप्रभ नामक हाथी के रूप में धूमते थे। एक अवसर पर उस सारे प्रदेश में दावानल लगाने से बहुत से जानवरों की आहुति हुई अर्थात् उस दावा में जल मरे। मेरुप्रभ परिस्थिति को सँवारने (ठीक करने) के लिये एक तालाब के पास जा पहुँचे और सूँड से पानी छिड़कने लगे। यह देखकर बचे हुए जानवर मेरुप्रभ के चारों ओर जुट गये उस हड़बड़ी में खरगोश का एक बच्चा

## 83 THE SELF-ESTEEM OF MEGHAMUNI - JATISMARANA JNANA

Having entered the order of monks Meghamuni, who in his earliest part of life was Meghakumara a Prince, was hard put to bear the rigours of the life of a monk (of Ashramajeevana) with patience. He was puzzled by the equal treatment meted out to him by his fellow monks for he thought that he should have been elevated above them. He could not digest the fact that all of them sat in a single line while taking their meals and slept in a common dormitory meant for monks so his self-esteem suffered and his mind was filled with sorrow. Thus having got perplexed, Meghamuni wanted to explain the state of his mind to the Swamy and, having approached the Swamy, stood near him for his permission to speak. The Swamy was in Dhyana (meditation) at that time. Presently, the Swamy came out of meditation and a mere look at Meghamuni was enough for him to know what the matter was. The Swamy then wanted to make Meghamuni realise the superiority of the life of a monk to a secular one. Then he, by the force of his Will (Sankalpa) took Meghamuni into a state of Meditation, wherein all the details of the past life of Meghamuni were shown to him. And this was the picture: In his past life, Meghamuni was an elephant by name "Meruprabha" roaming the jungles near the Vindhya Mountain. On one occasion a forest fire raged and consumed most of the flora and fauna. Meruprabha wanted to do his bit to control the situation and having gone to the banks of a lake, sucked water with his great trunk and with this water he began to put out the fire around itself by squirting it upon the raging fires. As the spot around the great elephant became safe many animals gathered around Meruprabha and soon a tumult developed. In this tumult a young rabbit accidentally came under a foot of the great pachyderm (Meruprabha). Now Meruprabha was filled

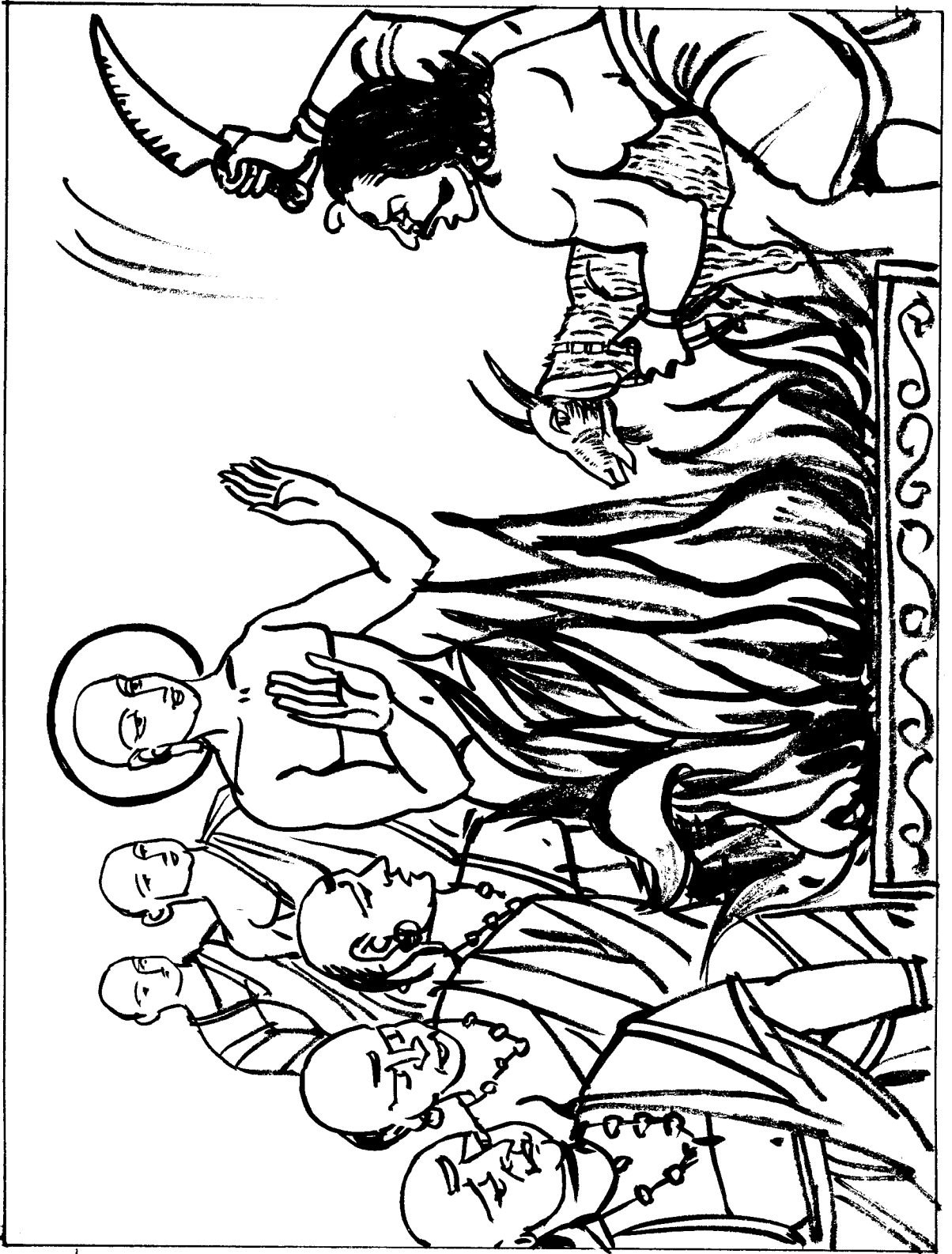


मेरुप्रभु के पैर के नीचे आ गया। इस डर से कि कहीं वह खरगोश का बच्चा मर न जाय, मेरुप्रभु एक पाँव ऊपर उठाकर उसी मुद्रा (ढंग) में अर्थात् तीन पैरों पर तीन दिन तक खड़े रहे। परिस्थिति के ठीक हो जाने पर सब जानवरों ने अपना रास्ता पकड़ा। तब मेरुप्रभु ने अपना चौथा पैर जमीन पर रखने की कोशिश की तो तीन दिन तक एक ही ढंग से खड़े रहने के कारण वह पैर नीचे नहीं झुका तो मेरुप्रभु पीड़ा के मारे तुरन्त मर गये। अपने समानवाले साथी प्राणियों को तीन दिनों तक बचाये रखने के सत्कर्म के फलस्वरूप मेरुप्रभु ने राजकुमार का जन्म लेकर सबसुखों को भोगा। श्री महावीर स्वामी ने मेघमनि को ज्ञान-बोध कराया कि अहिंसा, दृढ़ संकल्प एवं सहन के साथ जीने वाला सन्यासी आनन्द-पूर्ण आत्मज्ञान से प्रकाशित होता है! अपने अहंभाव पर पश्चात्ताप होकर, मेघमुनि शेष परिव्राजकों से मिलकर जिन-धर्माचरण के लिये देशाटन को गये।

with pity towards the tiny creature and lifted his foot well clear-off the ground, with the result that he was forced to stand only on his remaining three legs. For three full days the elephant stood like that, saving the life of the dazed rabbit [and at the same time sucking water from the lake and squirting it on the fires to extinguish them]. That was a stupendous effort of the great creature. Now after three days the fire subsided and all the creatures slowly recovered from their dazed state and left for their natural spots. Meruprabha now wanted to put down his foot, but, as the leg became stiff with three days of Herculean effort, the great elephant was unable to stretch his leg and attain his normal posture. Moreover, a great pain now began to course through the body of the elephant consuming his life in the end. For the pious act of saving his fellow creatures for three consecutive days Meruprabha was elevated into the human form and was born as a Prince; thus, he was enabled to enjoy all the royal pleasures as a Prince - What a reward for an act of kindness, on the part of an animal, towards its fellow creatures!

As soon as the vision ended, the mind of Meghamuni realised that a monk leading the hard life of self-denial, of non-violence, of patience, of steadfastness of zeal, must certainly be rewarded with a very great boon. Shri Mahavira Swamy then explained to him that such a mendicant will exult in Atmajnana and will experience the highest type of bliss. Thus the Swamy imparted wisdom to Meghamuni. Meghamuni, on his part, was ashamed of his previous self-esteem and now began to move among his fellow monks without any reservation and in order to follow Jina-Dharma, began to travel all over the country.





## 84. सम्यक् दर्शन - जीव धर्म

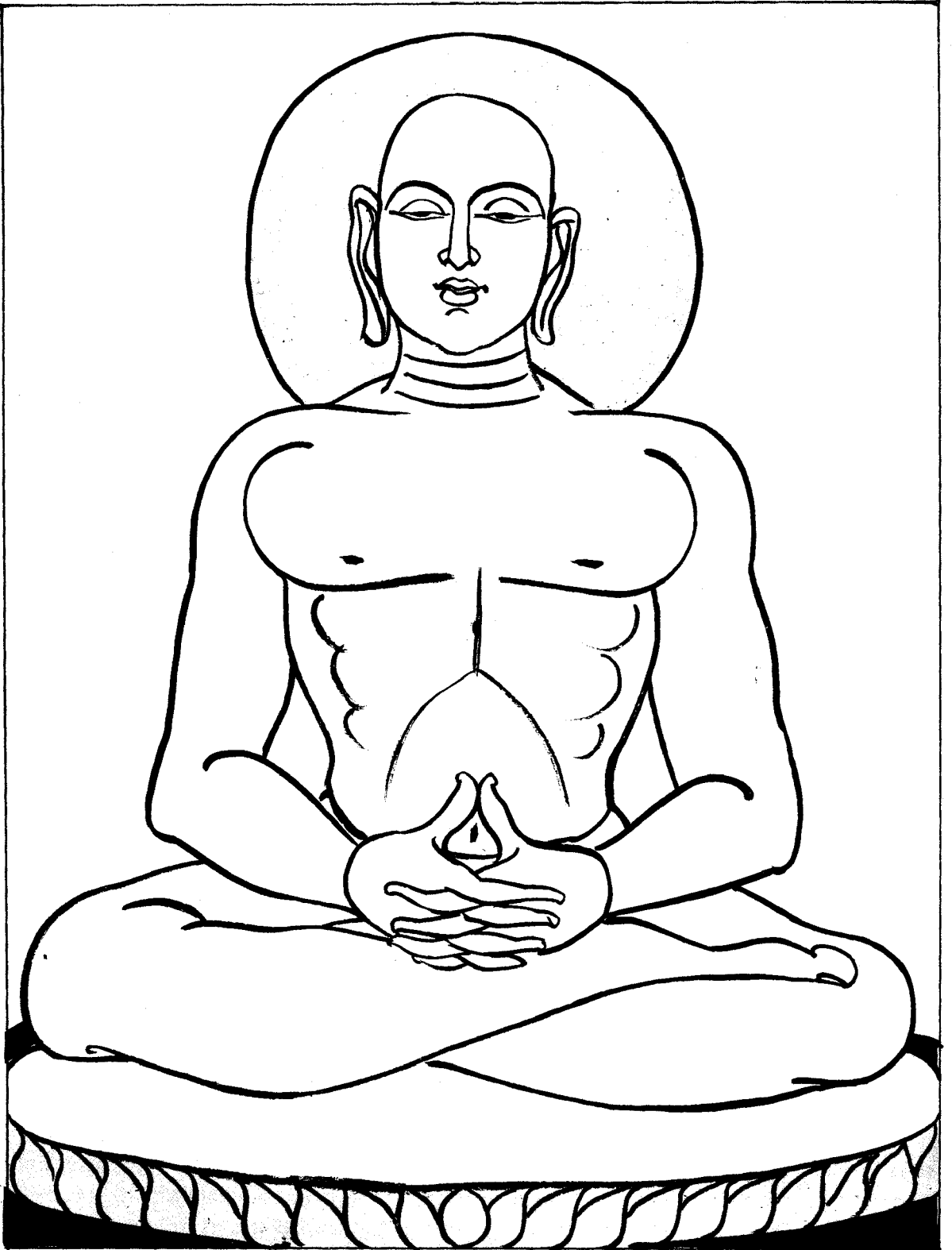
तब महावीर स्वामी ने वहाँ इकट्ठे हुए शिष्य-गण को आत्म-तत्त्व का उपदेश दिया। उन्होंने बताया कि देह में आत्मा न केवल एक ही भाग में रहती है बल्कि सारी देह में व्याप्त और निक्षिप्त रहती है; चैतन्य देह के अन्दर का भाग होकर, अणु-अणु में प्रकाशित होता है, मन इन्द्रियानुभूति के लिये परितप्त होता हुये देह के आश्रय में रहता है। इसलिये वैराग्य के द्वारा सुख दुःख का परित्याग करते हुए भूत (गत) को एक तरफ ठेल कर, भविष्य के सम्बन्धी विचारों का अन्त करके वर्तमान में ही मन को लगाते हुए, कर्मत्याग का उपदेश दिया। जब यह पूछा गया कि कर्मच्छेद कैसे होता है तो श्री महावीर स्वामी ने बताया कि अहिंसा युक्त चैतन्य ही इस का मार्ग है। एक साधारण गृहस्थ के लिये जीव की हिंसा न करना ही अहिंसा है और वही अहिंसा सन्यासी के लिये मोक्षद्वार है। क्योंकि कर्म-विच्छेद तथा उसके द्वारा प्राप्त होने वाले आत्म-साक्षात्कार के लिये अहिंसा ही परम-पदका सोपान है। शिष्यों ने जब चाहा कि अहिंसा युक्त जीवन का मार्ग दिखाया जाय तो स्वामी ने जिन धर्म का इस प्रकार उपदेश दिया।

1. किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो।
2. किसी भी प्राणी को अपने वश व नियंत्रण में मत रखो।
3. किसी भी प्राणी को अपनी सम्पत्ति - सेवक अथवा गुलाम - के रूप में मत मानो
4. किसी भी प्राणी को असुवधा मत दो।

## 84 SAMYAK DARSHANA - JINA DHARMA (THE RIGHT VISION - THE DUTY OF A JAINA)

Shri Mahavira Swamy then explained the nature of Soul (Atma Tattva) to the disciples assembled before him. He told them that Atma (Jiva) is not confined to a part of the body but spreads all over it as a part and parcel of it. Consciousness is an inner quality of the body and it is immanent in every cell of the body from where it shines forth. He explained that the mind craves after the experiences of the senses and thus takes shelter in the body. For this reason a true monk should adopt the Spirit of Renunciation and should discard both happiness and unhappiness. He should forget the past, stop thinking about the future and should concentrate his mind upon the present. We should break all bonds of Karma (the results of action) and should activate the mind towards what is permanent. Then the disciples wanted to know how the bonds of Karma could be cut. Shri Mahavira Swamy replied that the conscious following of the practice of non-violence will automatically lead to the severing of all bonds of Karma (action as well as inaction). The standards of Ahimsa - respect for life - are different from one Ashrama (also, stage of life, way of life) to another. Therefore for an ordinary Grihastha (householder), Ahimsa means abstinence from torturing other creatures. For a Sanyasi (a monk) the same spirit of Ahimsa becomes the central principle of existence, to the exclusion of all other activities. This path gradually leads to the realisation of Self. So, Ahimsa is the only staircase that leads up to the ennobled and ultimate state of Omniscience. Then the disciples requested the Swamy to prescribe for them a way of life that would make Ahimsa the Central Principle and that (which) is called Jina Dharma. Then the Swamy preached Jina Dharma to the disciples as follows:

1. Do not torture any living being.



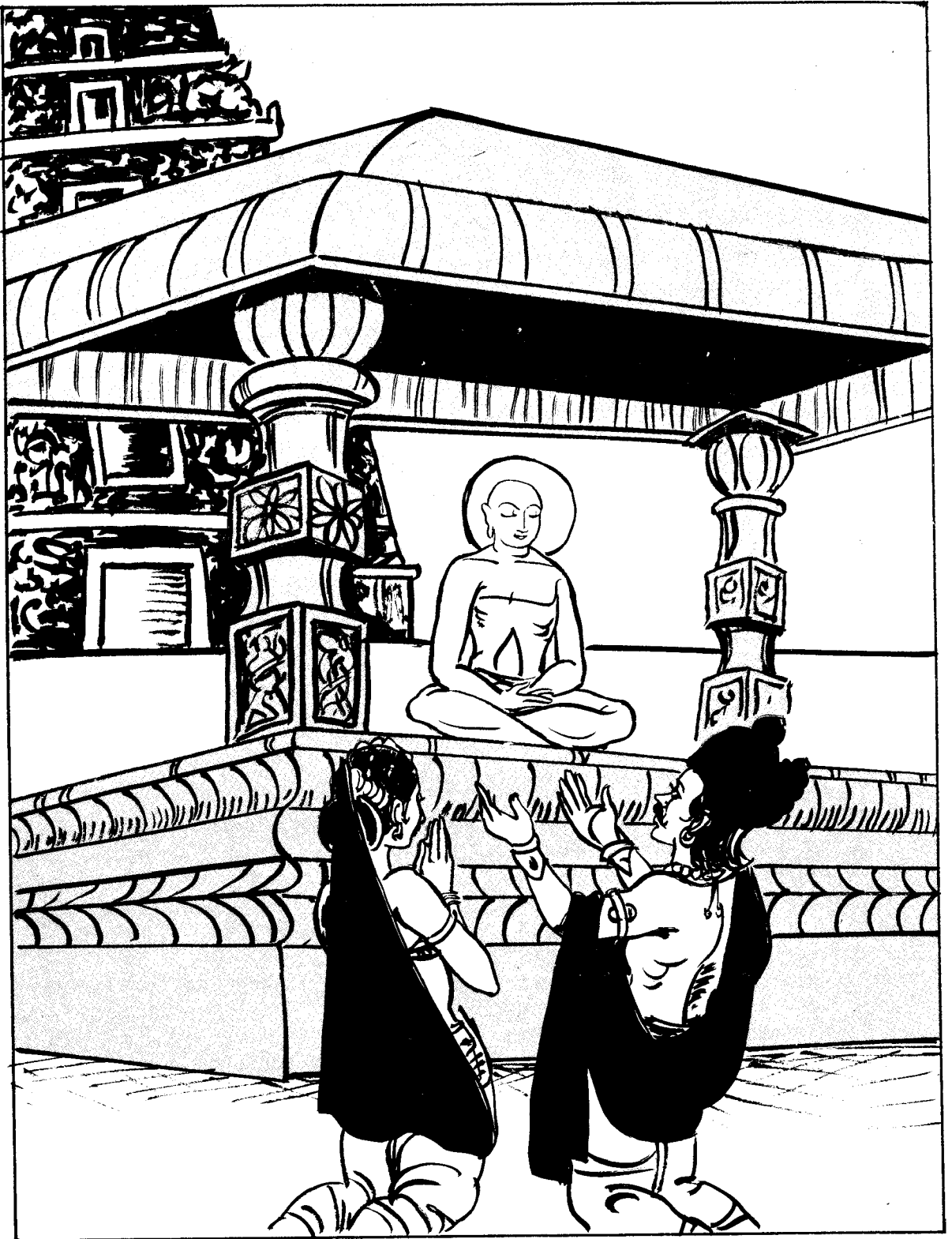
5. किसी भी प्राणी का वध मत करो ।
  6. क्रोध को नियंत्रण में रखो ।
  7. संचय मत करो अर्थात् लोलुप मत होओ ।
  8. अस्वास्थ्य मे सही, बुढ़ापे में सही, आखिर मौत के मुख में सही - डरो मत ।
  9. लापरवाही से जियो मत ।
  10. बुरे विचारों को मन में स्थान मत दो ।
  11. सच ही बोलना चाहिये ।
  12. इन्द्रिय-निग्रह का अभ्यास (साधना) करो ।
  13. मोक्ष के लिये प्रयत्न करो ।
  14. तुम्हें जो दिया गया उसके सिवा दूसरों के घन की आशा मत करो, चोरी मत करो ।
  15. चोरी मत करो ।
  16. सब कुछ छोड़ने के लिये हमेशा तैयार रहो ।
  17. अपने मन और इन्द्रियों की ज्यादा तियों को काबू में रखो ।
- इस प्रकार उपदेश देने के बाद स्वामी जी ध्यान-मग्न हो गये । तदनन्तर शिष्य अपने अपने कुटीरों में चले गये ।

### सम्यग - दर्शन - ज्ञान - चरित्राणी मोक्ष-मार्ग :

2. Do not enslave any living creature.
3. Do not appropriate any living creature as an item of property (human or animal)
4. Do not cause discomfort to any living creature.
5. Do not kill any creature
6. Conquer Anger
7. Do not acquire or store
8. Do not be afraid of anything - of ill-health or of old age or even of death.
9. Do not lead a frivolous or flippant life.
10. Do not entertain evil thoughts
11. Always utter the truth
12. Conquer the senses.
13. Always set Moksha as your Goal
14. Be satisfied with whatever you have - do not crave after another's property or possession.
15. Do not steal
16. Always be ready to relinquish everything (at a moment's notice)
17. Check the extremities of the mind and the senses - the aberrations and their excesses.

### ***“SAMYAG-DARSANA-JNANA-CHARITRANI MOKSA-MARGAHA”***

Having laid down these principles the Swamy immediately entered the state of meditation. The disciples then took the hint and dispersed from there in the direction of their cottages.

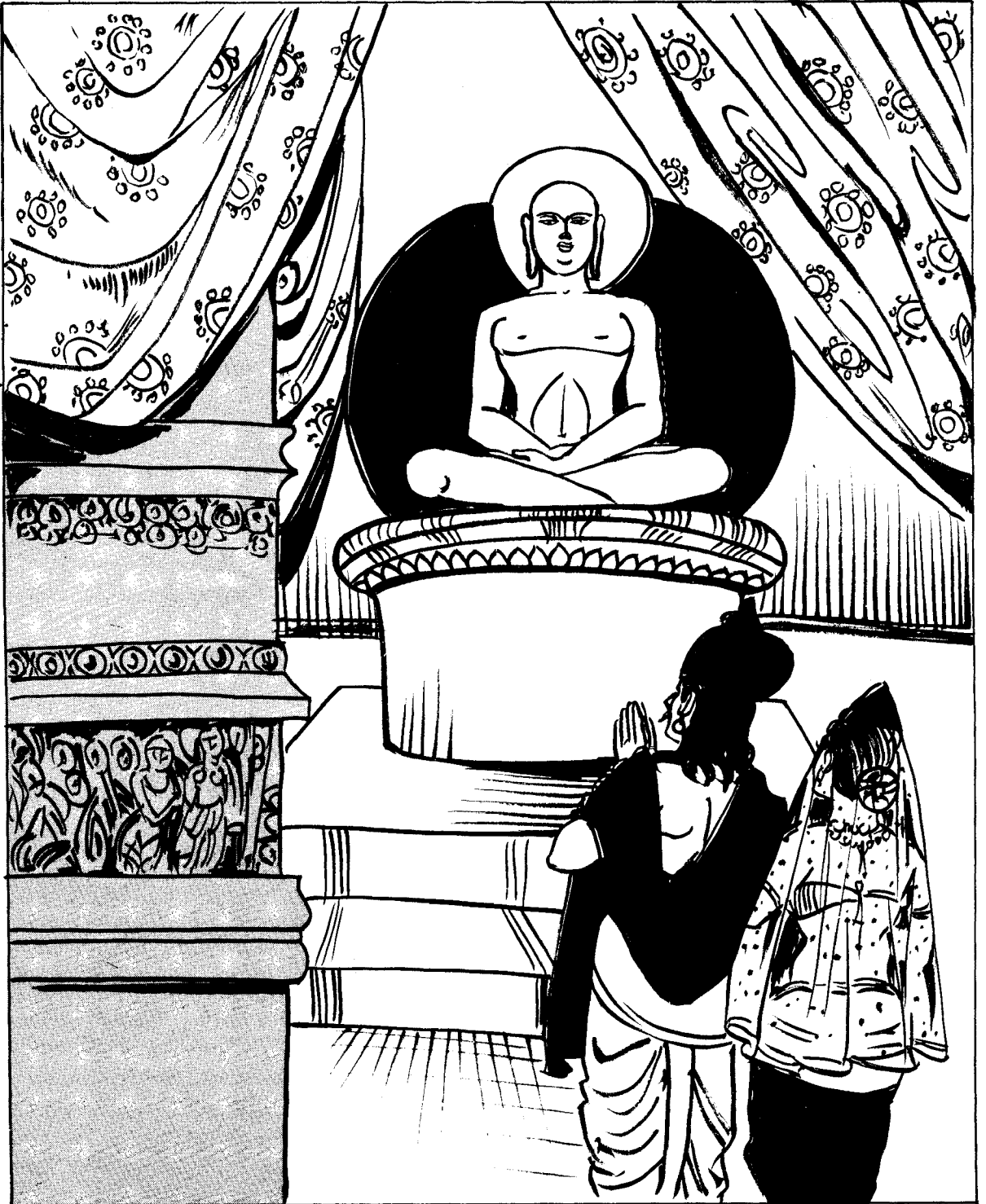


## 85. क्षात्रिय कुण्ड में श्री महावीर स्वामी

श्री महावीर स्वामी सब जनपदों और नगरों को पुनीत करते हुए अपने जन्म-स्थान क्षात्रियकुण्ड में पहुँचे। वहाँ की प्रजा ने उन्हें हृदयपूर्वक स्वागत किया। स्वामी 'समवशरण' में आसीन होकर प्रवचन कर रहे थे, तब बेटी प्रियदर्शना और दामाद जामालि ने स्वामी के दर्शन किये और उन्हें प्रणाम किया। स्वामी के लिये सब बराबर हैं। जैन-सूत्रों और अंगों के समग्र अध्यापन के द्वारा जामालि को स्वामी ने शिक्षा प्रदान की और वे कुतूहल पूर्वक चाहते थे कि जामालि जैन सूत्रों और अंगों पर भाष्य लिखे और उन्हें लोगों में लेजाय। स्वामी ने जामालि की श्रद्धा और आसाक्ति समझली। उन्होंने पुत्री और जामाता को आशीर्वाद दी और उन्हें जैन-श्रावकों की दीक्षा दी। स्वामी का अनुसरण करने के लिये उन्होंने क्षात्रिय कुण्ड छोड़ा।

### 85 SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA SWAMY IN KSHATRIYAKUND

Thus making holy all the cities, towns and Janapadas (colonies of people), Shramana Bhagawan Mahavira Swamy travelled in the direction of his native place Kshatriyakund and arrived there in course of time. The local people gave him a grand and hearty welcome. As the Swamy was seated in Samavasarana and was preaching to the crowds, his daughter Priyadarshani and son-in-law Jamali visited the Swamy and bowed to him. In the eyes of Swamy all are equal. He taught Jaina Sutras (Principles) and Angas (Sub-Principles) to Jamali. The Swamy noticed that Jamali was eager to learn and that he was eager to write commentaries (or interpretations) on Jaina Sutras and was intent upon going into the midst of the people with a view to spreading these principles among them. The Swamy noticed that Jamali had devotion and deep desire to discharge this task. So, he blessed Jamali and accepted Jamali and his wife (the daughter of the Swamy himself) into the orders of Shravaka and Shravika respectively. In order to accompany the Swamy Jamali and Priyadarshana had to leave Kshatriyakund.



## 86. श्री महावीर के गृहस्थ शिष्य आनन्द की कथा ।

यदि धर्म का, निष्ठा या चित्त-शुद्धि के साथ पालन किया जाय तो सन्यसियों के अतिरिक्त गृहस्थ भी अवधी ज्ञान या अतीन्द्रिय वीक्षण पा सकते हैं - इस बात का साक्ष्य यह कथा देती है । जब श्री महावीर स्वामी अपने गणवालों के साथ लिच्छवी राजधानी वाणिज्यग्राम में संचार करते हुए समीप वाले द्विपालस चैत्य में प्रवचन कर रहे थे । वाणिज्य-ग्राम में आनन्द नामक एक सुप्रसिद्ध वाणिज्यवेत्ता - वाणिक प्रवर रहता था । वह बहुमुख प्रज्ञाशाली और उस राज्य में सब से अधिक धनाढ्य है । उनकी सह-धर्म चारिणी शिवानन्दा है । स्वामी के आगमन से उस नगर-निवासियों के मन के पुनीत होने की बात जानकर आनन्द ने सोचा कि वह स्वयं अपनी पात्नी के साथ स्वामी के दर्शन करे तो अच्छा होगा । इस प्रकार सोचकर वह अपने परिवार के साथ स्वामी के दर्शनों के लिये बड़े आडम्बर तड़क - भड़क के साथ द्विपालस चैत्य के लिये चल पड़ा । वहाँ स्वामी ने अत्यन्त मनोहर ढंग से बहुत से साम्यों के साथ अनुराग पूर्वक, गृहस्थ को निर्दिष्ट “उपाशक दशहः” का उपदेश देते हुए आनन्द की तरफ एक बार देखा । स्वामी की उस दृष्टि ने आनन्द के भव - बन्धनों को क्षणभर में काट डाला । आनन्द उसी क्षण में अपनी धर्मपत्नि शिव के साथ स्वयं गृहस्थाम्य स्वीकार करने के संकल्प को लेकर स्वामी के समीप गये । उन्होंने प्रणाम करके सावमी से कहा

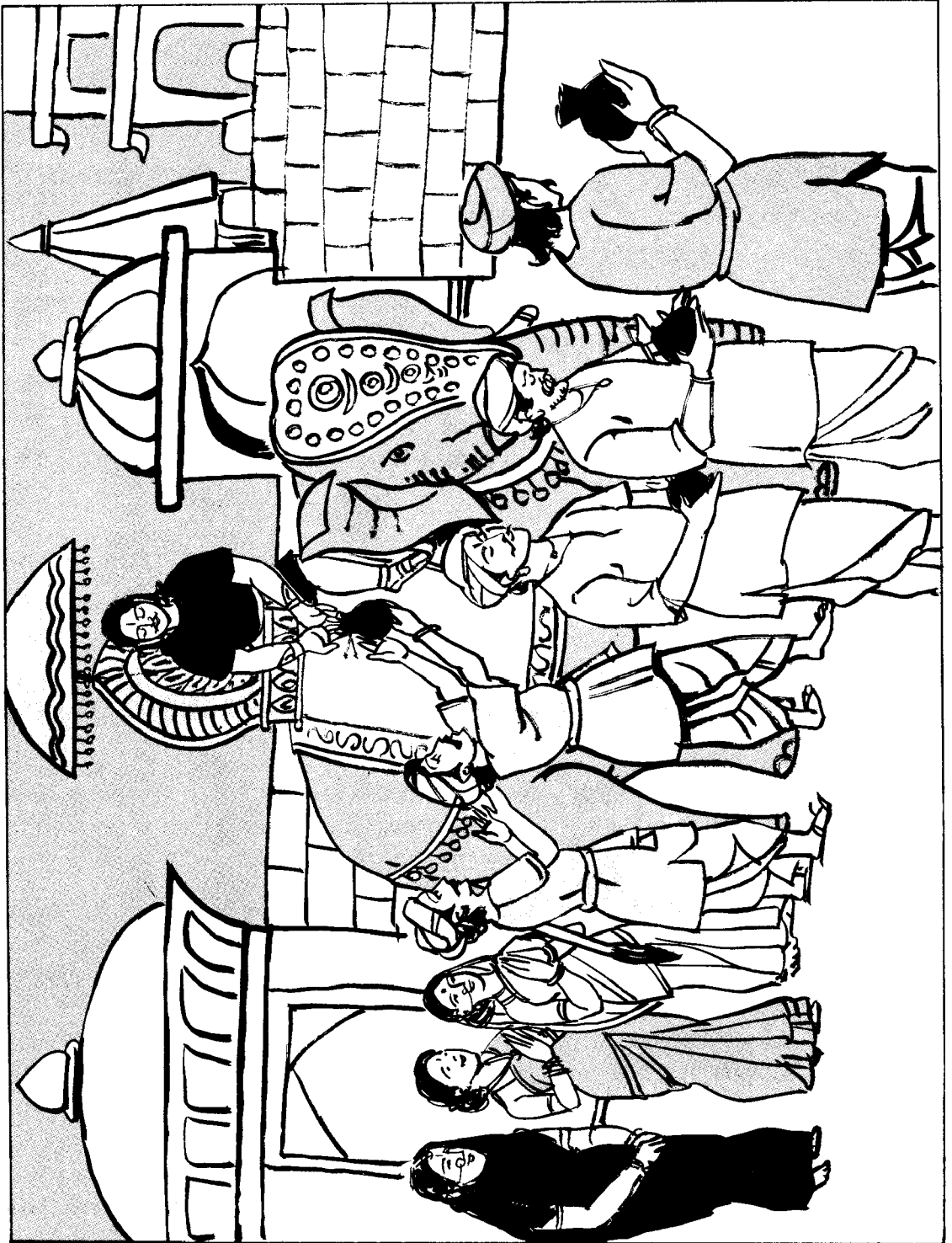
### 86 THE STORY OF SHRI ANANDA

#### (A HOUSEHOLDER DISCIPLE OF SHRMANA BHAGAWAN MAHAVIRA)

A fact that not only monks but also householders are exalted to Avadhijnana or Ateendriya Veekshana (Supra-Sensory Sight) provided they follow Dharma (the code of conduct with purity of mind) is well illustrated by the following story.

At that time, Shramana Bhagawan Mahaviraswamy, accompanied by his Ganadharas (Chief Disciples), was moving through Vanijyagram, the capital of Lichhivi Rulers. Near this place there was a Chaitya named Dvipalasa. The Swamy was seated there and was discoursing. In Vanijyagram there lived a famous businessman by name Ananda. He was a multifaceted personality, besides being the richest of the people in the Kingdom. His wife was Sivananda. Ananda observed that the minds of townsmen were purified with the preachings of the Swamy. So, he wanted to pay a visit to the Swamy. Accompanied by his wife and entourage, Ananda went to the Chaitya with great fan-fare. When Ananda reached the spot the Swamy was preaching ‘Upasaka Dasaha’ meant for practice by a Grihastha. The preaching was punctuated with very interesting and relevant comparisons, and those gathered were listening to the discourse with rapt attention. When the Swamy’s glance fell upon Ananda the merchant was filled with an instant desire to receive Jaina Grihasthamya Dharmas (the duties of Jain Householder), as his wordly attachments were snapped with





कि मैं पाँच अनुव्रतों, तीन गुणव्रतों और चार शिक्षा व्रतों का आचरण करने के लिये तैयार हूँ। ऐसा कहकर उन्होंने स्वामी की कृपा से श्रमणोपासक के रूप में दीक्षा पायी। घर पहुँचकर उन्होंने अपनी सम्पत्ति में से कुछ भाग निज सन्तति को, शेषांश वाणिज्य ग्राम वासियों में वितरित कर दिया। वह नगर छोड़कर समीप के गाँव में गये। आश्रमीजीवन बिताते हुए, दीक्षा बद्ध होकर आत्मदर्शन अर्थात् आत्म साक्षात्कार के लिये वायुवेग और मनोवेग से जा रहे थे।

that single glance of the Swamy which lasted only for fraction of a second. Thus reformed, Ananda now approached the Swamy and bowed to him. He then expressed his readiness to follow the five Anuvrathas, the three Gunavrathas and the four Siksha Vratas meant for a Grihastha to follow. The Swamy took pity upon him and administered to him the vow of a Shramanopasaka. After going back home, Ananda distributed a part of his property among his children and the rest of it he distributed among the citizens of Vanijyagram as an act of charity. He left the city and took up abode in a cottage in a neighbouring village. Shramanopasaka Ananda was thus well entrenched in his sincere effort to realise his true Self (Atma Sakshatkara) and in this course his progress was speedy and steadfast.

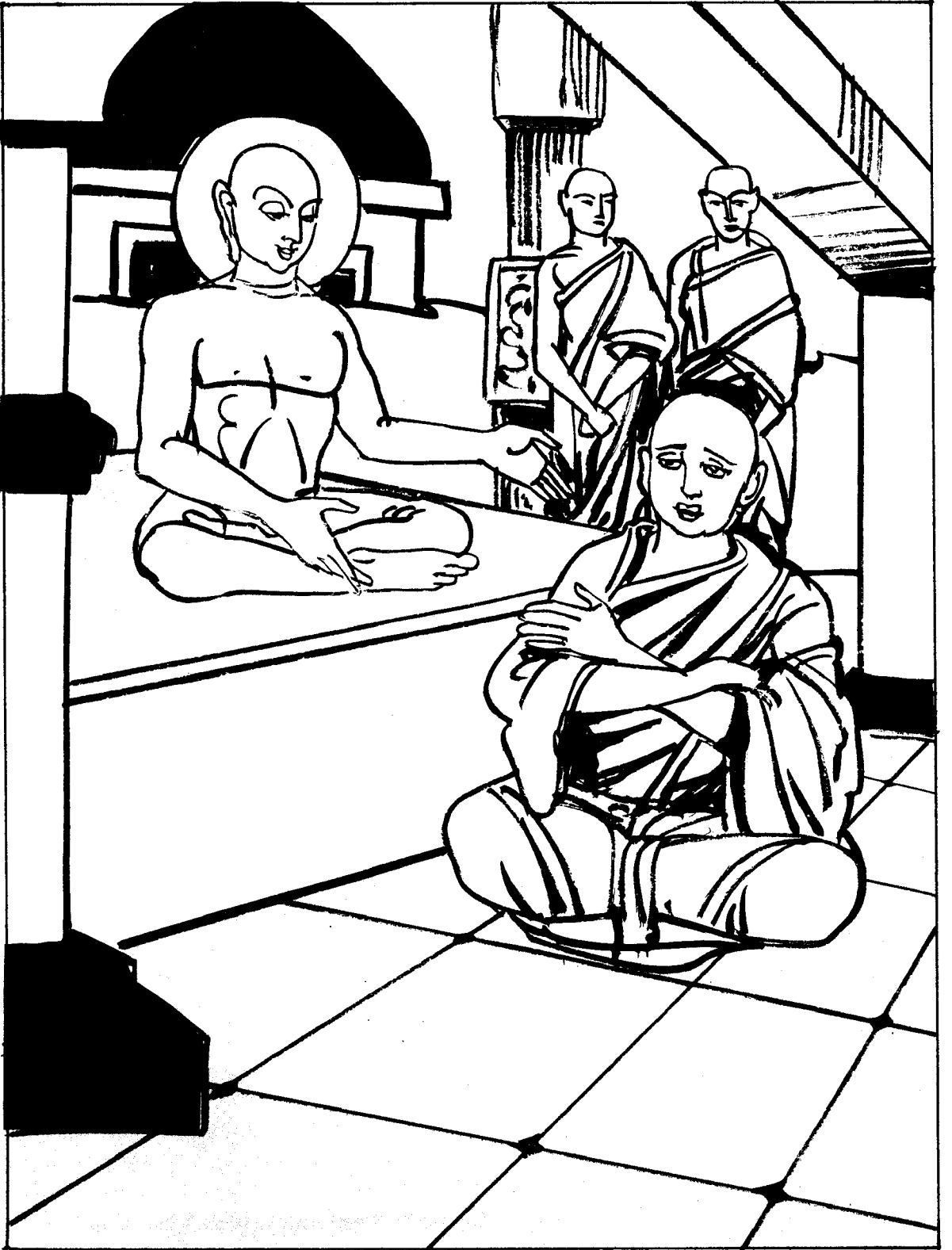


## 87. श्रमणोपासक आनन्द की संकल्प सिद्धि और गौतम इन्द्रभूति को सम्पूर्ण ज्ञान सिद्धि

उस प्रकार व्रतनिष्ठ होकर ज्ञान सिद्धि के लिये प्रयत्न करते हुए आनन्द को क्षमण भगवान महावीर की कृपा से अतीन्द्रिय वीक्षण (दिव्य-दृष्टि) प्राप्त हुआ। अनेक प्रकार के उपवास-दीक्षाओं आचरण से श्रमणों पासक आनन्द दुर्बल होकर ठहरी बन गया। तब श्री महावीर के प्रधान गणनेता गौतम इन्द्रभूति भिक्षाटन के निमित्त वाणिज्यग्राम में संचार करते हुए श्रमणों पासक आनन्द के दीक्षाव्रतों के बारे में लोगों की चर्चा सुनकर दिलचस्पी व सन्देह से ही आनन्द के आश्रम में पहुँचे। दूर से ही गौतम - इन्द्रभूति के आगमन को समझे हुए आनन्द ने उन्हें प्रणाम किया और शरीर कतया न हिलने की अपनी हालत सुनाकर क्षमाकरके अपने पास आने को कहा। दोनों के बीच पारस्परिक भवों की चर्चा के होने के बाद आनन्द ने अपने को उपलब्ध अतीन्द्रिय वीक्षण (दिव्य दृष्टि) के बारे में बताते हुए कहा कि मैं अब पाँच सौ योजनाओं (4000 मील) तक दृष्टि बढ़ा सकूँगा। गौतम इन्द्रभूति ने प्रकट किया कि उतनी शक्ति एक गृहस्थ के लिये दुष्कर (न होने योग्य) है और कहा कि जूठा हक (अधिकार) (व्यक्त) करने के पाप का प्रायश्चित्त कर लो। यह कहकर श्री महावीर स्वामी के पास आये। स्वामी ने ध्यान-स्थिति में ही गौतम इन्द्रभूति और आनन्द के बीच

### 87 THE SANKALPA SIDDHI OF SHRAMANOPASAKA ANANDA AND SPAMPOORNA SIDDHI OF GAUTHAMA INDRABHOOTI

Ananda who was thus practising the disciplines meant for Jnana Siddhi was soon blessed with success and with the grace of the teacher (Lord Mahavira) attained Supra Sensory Sight. Because of the various rigours of fasting and penances Shramanopasaka Ananda became completely emaciated. Just at that time Gauthama Indrabhoothi the chief of the disciples of Shramana Bhagawan Mahavira Swamy was moving through the town begging for alms. Then he heard people discussing the vow of penances and fasting Ananda was following. His mind was partly filled with doubt and partly with curiosity. So to satisfy his ambivalent feelings, Gauthama Indrabhoothi reached the hermitage, where Ananda was practising his rigours. Ananda recognised Gauthama Indrabhoothi from afar and paid his obeisance from the spot where he was seated. He then expressed his inability to get up, move towards and pay proper respects to Gauthama Indrabhoothi - because of his emaciated condition, and begged for forgiveness. He beckoned to Gauthama Indrabhoothi to come near him. Then the two holy men conversed with each other and during this conversation Shramanopasaka Ananda casually informed Gauthama Indrabhoothi that he was able to look at objects at a distance of five hundred yojanas away (4000 miles) from him. Gauthama Indrabhoothi doubted the claim, for it was his belief that such powers are impossible of



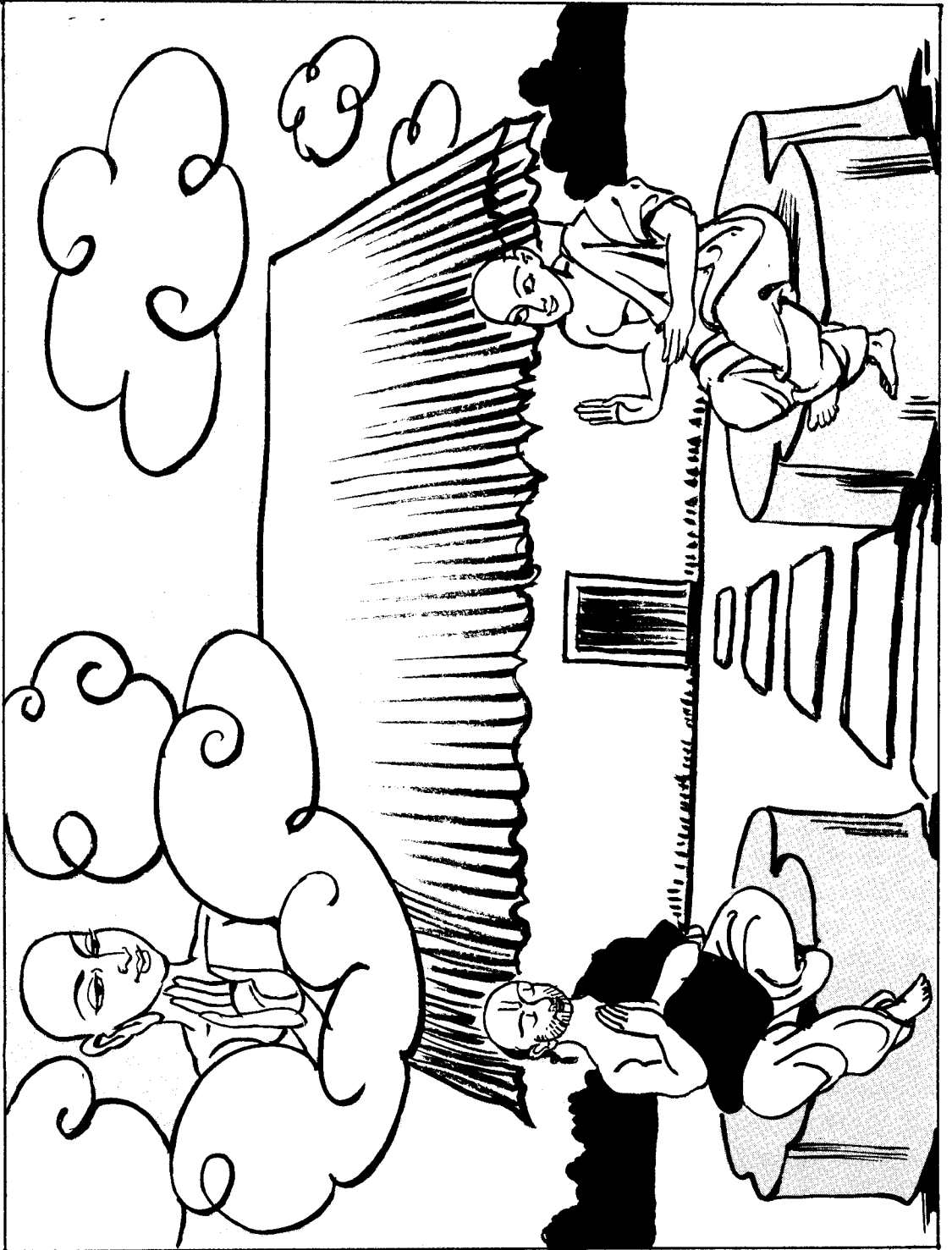
हुए संभाषण को जान लिया और तुरन्त प्रवचन किया कि गौतम इन्द्रभूति ने भूल की है, चाहे गृहस्थ ही क्यों न हो, उसके लिये अतीन्द्रिय दृष्टि सिद्ध करने योग्य (सहज या सरल) है, मुख्यतया अब श्रवणोपासक आनन्द ने उसे अनायास ही सिद्ध कर लिया है, उतने बरे श्रमण पर सन्देह करने के कारण सिर्फ गौतम इन्द्र भूतिको ही प्रायश्चित्त कर लेना चाहिये । प्रायश्चित्त कर लेने के पश्चात इन्द्रभूति ने शेष गणधारियों (नेताओं) सहित स्वामी से आनन्द के भवितव्य (होनहार) की बात पूछी । उस पर स्वामी ने अपने अवधी से प्रकट किया कि आनन्द देह-त्याग के अनन्तर स्वर्ग में पहुँचकर देवत्व को साधने के पीछे महा विदेह देश में अर्हत होगा ।

**“गोयमा महा विदेहवासे सिज्जिहि”**

attainment by a Householder. He then advised Ananda to perform certain propitiatory rites to negate the evil effect of a false claim. He then left the spot and went to where Mahavira Swamy was in Dhyana and in this state itself the latter knew about the arrival of Gauthama Indrabhooti and also what had happened between him and Shramanopasaka Ananda. As soon as Indrabhooti came near the Swamy, the latter opened his eyes and told Gauthama Indrabhooti that what he had thought and done had been wrong. It is quite possible even for a householder to attain Supra-Sensory Sight, according to the Swamy. He informed Gauthama Indrabhooti that Shramanopasaka Ananda had attained these powers quite easily and for the sin of doubting such a sincere effort and attainment, he Gauthama Indrabhooti himself must make atonement. Gauthama Indrabhooti obediently carried out the Swamy's instructions and returned to him followed by his associates. He was curious to know what further successes were in store for Ananda. The Swami, in reply, informed that Shramanopasaka Ananda would reach Heaven after his death, would attain divinity and after all these holy rewards have been spent, would be reborn as a human being in the country of Mahavideha. He would also become an Arhantha. In this way, the Swamy with his Avadhijnana forecast the future of Shramanopasaka Ananda.

**“GOYAMA, MAHAVIDEHE VASE SIJJIHI”**

Gauthama Indrabhooti for his part attained Sampoomnajnana as a result of this experience.



## 88. स्वामी गौतम इन्द्रभूति को देवशर्मा के पास भेजना

इस प्रकार कई प्रदेशों को अपने चरणरज से पुनीत करते हुए राजगृह से स्वामी उस पापा पुरी (वर्तमान पावापुरी पाटना के पास स्थित है) में पहुँचे। तब स्वामी ने गौतम इन्द्रभूति को बलाकर कहा कि पास के गाँव में देवशर्मा नामक एक ब्राह्मण है, उसको अवश्य ज्ञानभिक्षा देनी चाहिये। स्वामी के अभीष्ट को आदेश के रूप में लेकर गौतम इन्द्रभूति देव शर्मा के ग्राम में पहुँचा। उसने जैन सूत्रसार, उपवास दीक्षा, परजूसना, दिव्य धर्मों का उपदेश दिया, और श्रमण भगवान महावीर स्वामी के जीवन-वृत्तांत और अहिंसा धर्म का बोध किया। स्वामी के जीवन के चण्ड कौशिक वृत्तान्त से उत्तेजित होकर देवशर्मा ने गौतम इन्द्रभूति को अपना संशय बताया। उसने प्रश्न किया कि जब मैं जंगल में घूमता हूँ तब एक साँप मुझे डँसने के लिये सामने आ जाय तो उसे मैं मारूँ या उससे मारा जाऊँ। इसका प्रत्युत्तर देते हुए गौतम इन्द्रभूति ने उपदेश दिया कि आप जैसे उत्तम को, मैं नहीं चाहता कि साँप डसे, लेकिन किसी न किसी नष्ट होने वाले इस देह पर प्रीति का होना उचित (वाजिब-ठीक) नहीं है, इस (देह) के लिये एक और प्राणी को नहीं मारना चाहिये, मुख्य रूप से जो प्राणी (जीवी) - साँप अपनी देह पर अमित प्रीति और लालसा रखता है वैसे जीव को मारना और भी महापाप है। आत्मदर्शन के लिये प्रयत्न करने वाला प्राणी का ऐसे अवसर (मौके) पर तुरन्त देह-परित्याग कर देना श्रेष्ठ मार्ग है। उस प्रकार गौतम इन्द्र भूति देवशर्मा को नसीहत (उपदेश - शिक्षा) दे रहा था कि इतने

## 88 SWAMY SENDS GAUTHAMA INDRABHOOTI TO DEVASHARMA

Thus making hallowed the various places that he traversed with the holy dust of his lotus feet, Shramana Bhagawan Mahavira Swamy reached Apapapuri (present day Pavapuri near Patna) from Rajagriha. Then Swami called Gauthama Indrabhooti to his side and informed him that there was a Brahmin by name Devasharma in a nearby village and that he Gauthama Indrabhooti should go there and give him the Alms of Jnana (impart Jnana) without fail. Gauthama Indrabhooti, who was bent upon fulfilling the Swamy's wish as a command went to this village wherein Devasharma was living. Then he imparted (to) Devasharma the essence of Jaina Principles, the meaning and vow of fasting, Parjusanas and also related to him the life history of Shramana Bhagawan Mahavira Swamy. At the end he also taught the Brahmin certain facts about the greatness of the practice of non-violence. Devasharma on his part, was inspired by the teachings and also by listening to the episode of Chandakausika. However he had a doubt regarding a point of behaviour. He wanted to know, if, when he is roaming in the forest, he is encountered by a serpent, he should kill it or be killed by it (bitten by it). Then Gauthama Indrabhooti gave him a very enlightening reply. He observed that he would not wish that such a holy person as Devasharma should be bitten by a poisonous serpent, but since this human body is mortal and is destined to come to dust one day or the other, the development of attachment to the body is not a proper attitude. Therefore, to preserve this mortal body (for a few more days), it is not befitting for an enlightened being to take the life of another creature (here in this case the serpent). According to Gauthama Indrabhooti, it is more sinful to kill a creature which is



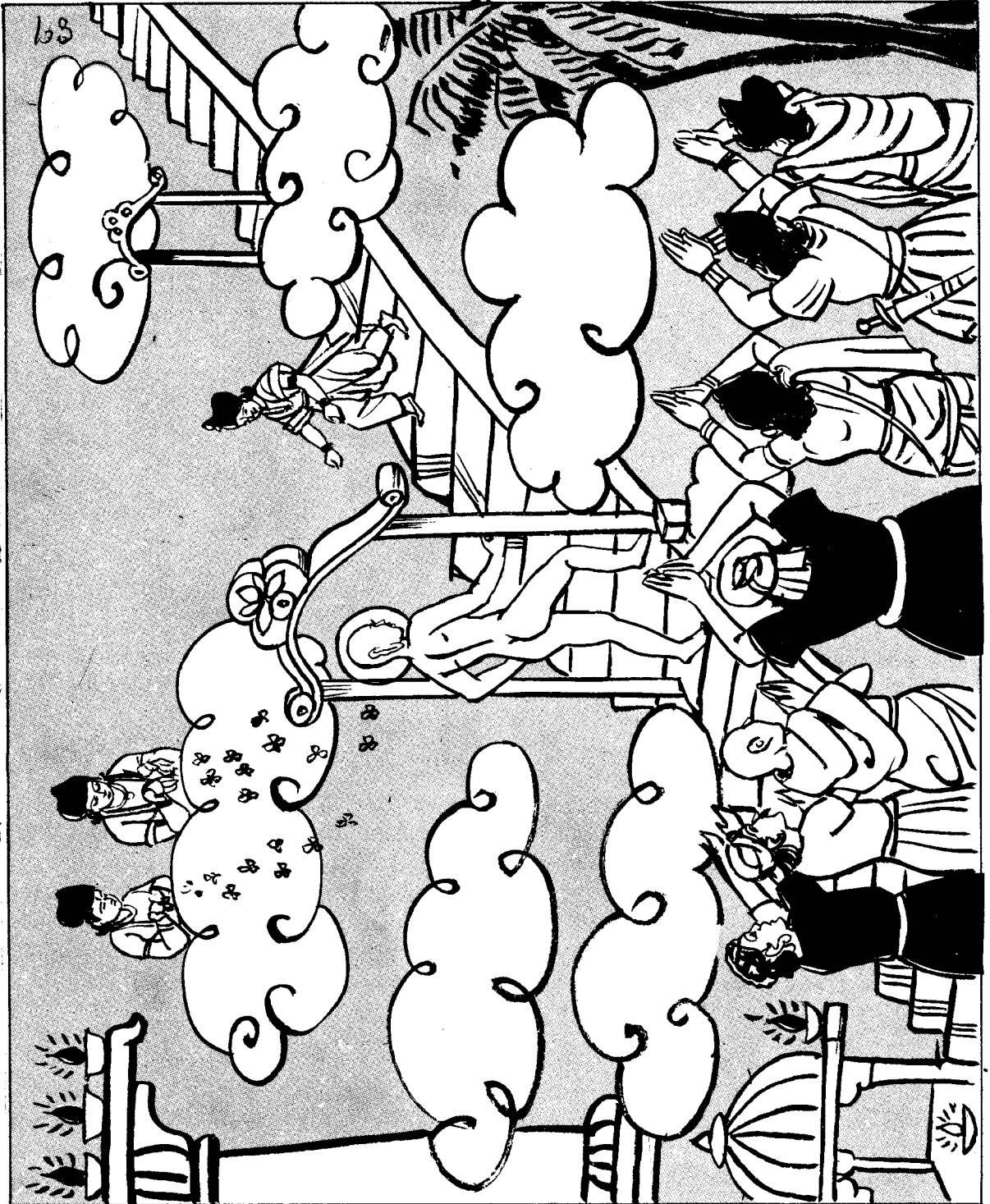


में अचानक गौतम इन्द्रभूति को आसमान से श्रमण भगवान महावीर स्वामी के कुछ उपदेश देते हुए से झलक (संकेत) मिली। सिर ऊपर उठा कर देखा तो स्वामी ने केवल गौतम इन्द्रभूति को ही दर्शन देते हुए इस तरह स्पष्टरूप से उपदेश दिया कि “गौतम! पता अपने काल के समाप्त होने पर - पीला होकर जैसे जमीन पर गिरेगा वैसे ही मानव बुढ़ापे में अपना शरीर छोड़ेगा। तस्मात्-सावधान ! हिम की बूँद पत्र के अग्र में जैसे लटकती है वैसे ही हमारे जीवन क्षाणिक हैं। तस्मात् - सावधान ! भव बन्धनों से मुक्त होकर संसार-सागर को आग्रहपूर्वक पार करते हुए एक पार को पहुँचते समय आराम करे क्यों ? जल्दी करो, उस पार पहुँचकर एक मात्र ज्ञान प्राप्त करो, गौतम ! तस्मात् सावधान ! ऐसा अनुभव (तजर्वा) पहले गौतम इन्द्रभूति को नहीं हुआ। इसका परमार्थ (वास्तविक सत्ता) क्या होगा - यह जानने के लिये आपापपुरी की तरफ गौतम इन्द्रभूति दौड़े।

very fond of its own body and wants to preserve it any cost. Finally the point driven home is that a person sincerely trying to realise his true self should give up his life to save the life of a fellow creature.

While he was teaching Devasharma the above stated truths, Shramana Bhagawan Mahavira Swamy himself appeared before the mind's eye of Gauthama Indrabhooti. It was a vision seen in the direction of the sky and Indrabhooti Gauthama felt that the Swamy was preaching something to him. Now, Indrabhooti Gauthama lifted up his head and saw the vision of the Swamy just in front of himself.

The Swamy then gave the analogy of a ripe fruit, which when it is ripe enough naturally falls to the ground without any external force being applied to it. So also a ripe old man gives up his body when he is ready to give up all his functions. He warned that one should always be aware of this truth and should be careful about straying away from the Truth, Just as a dew drop hanging down from a tip of a leaf, is ready to be pulled down by the gravitational force any fraction of a moment, so also, human life is also brittle and a man must be prepared to go, when the time comes. He warned that one should always be aware of this truth and should be careful about straying away from the Truth Then the Guru exhorted Gauthama Indrabhooti to hasten, now, at this time, when he, divested of all earthly bonds has been crossing the Sea of Samsara, ready to reach the shore at any moment. "Oh! Gauthama Indrabhooti, hasten! And reach the other shore to attain Kevalajnana, be Careful", said the Swamy. Gauthama Indrabhooti could hear these words clearly. But he was perplexed - the timing of this exhortation baffled him. The full meaning eluded him. So he ran post-haste towards Apapapuri to get his doubts cleared.



## 89. श्रमण भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण

वह वर्षा काल का चौथा मास, सातवाँ पक्ष, कार्तिक की अमावास्या का दिन था। स्वामी ने आपापपुरी (पावापुरी) में राजा हस्ति पाल के लेखा गृह में अपना अन्तिम प्रवचन दिया। वहाँ काशी, कोसल, मल्लिका लिच्छवी देशों के राजा स्वामी के प्रवचन सुनने के लिये आ पहुँचे। स्वामी ने उनको सिद्ध पुरुष (मुक्त आत्मा) की स्थिति का वचन करते हुए प्रवचन दिये। उन्होंने अपने प्रवचन में इस प्रकार कहा - सिद्धत्व को प्राप्त आत्मा की ओर पाँचों भूत नहीं जाते और न वे उसका स्पर्श करते, बल्कि पीछे मुड़ जाते हैं, वह स्थिति ऊहापोह के अतीत हैं अर्थात् उस स्थिति के बारे में तर्क-वितर्क करने की कोई जगह नहीं है। वह मन से सोचने की स्थिति नहीं है और न वह तो लम्बी है और न तो छोटी। वह तो न गोल है। वह न तो सफेद है और न तो काली। उसका तो न कोई लिंग भेद है और न तो किसी प्रकार का सम्बन्ध उसको वस्तु से अथवा कर्म से नहीं है, उसके लिये उपमेय विषय भी कोई नहीं है; वह आकृति के बिना किसी एक शून्य स्थिति में रहती है। इस प्रकार सुदीर्घ प्रवचन करते हुए श्रमण भगवान महावीर स्वामी अपने १४०० सन्यासियों, ३६००० सन्यासिनियों, १३०० आश्रमवासियों १५९०० श्रावकों, ३१५००० श्राविकाओं को छोड़कर उस कार्तिकामावास्या की रात में चन्द्रमा के स्वाति नश्रत्र में रहते समय निर्वाण प्राप्त किए। स्वामी के सिद्ध पुरुष होते ही इन्द्र ने अपने देव-गण-सहित प्रणाम करके पुष्पक विमान से सादर उनका स्वागत किया। स्वामी के निर्वाण के एक निमिश के बाद गौतम इन्द्रभूति दौड़ दौड़ कर स्वामी के पास पहुँचा और समय पर न आसकने के

## 89 THE NIRVANA OF SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA SWAMY

That was the fourth month of the rainy season, the fortnight was the 7<sup>th</sup>. The date was Amavasya (15<sup>th</sup> of the waning fortnight) of the holy month of Karthika. The Swamy was camping in Apapapuri at the office of the Scribes belonging to King Hasthipala. That was the last discourse made by the Swamy; on that day, the rulers of Kasi, Kausala, Mallika, Licchivi countries came there to listen to the Swamy. The Swamy explained to them the character and attainments of a Siddha, a liberated Soul. When an Atman attains Siddhi, the five elements cannot touch it (taint it), and so return to their sources. This state cannot be imagined because it is beyond the powers of the mind to conceive it. It is neither tall nor short, neither curved nor straight; neither black nor white; neither masculine nor feminine. It is not an embodiment. It has no attachments to any objects. It is not affected by any acts. **No other thing** can be compared to it. It has no shape and it has a state that may be explained as an inexplicable state. Thus Shramana Bhagawan Mahavira Swamy gave a lengthy discourse at this place for the last time in his life and attained Moksha. Thronging the place were 14000 Monks, 36,000 Sanyasins (nuns), 1300 Hermits, 1,59,000 Shravakas besides 3,18,000 Shravikas, plunging all these people into sorrow, the Swamy gave up his physical body and the Moon was in conjunction with Star Svathi. It was night time. When the Swamy thus became a Siddha and rose to his Heavenly Abode, Indra came forth along

कारण बहुत रोया । स्वामी के सिद्धत्व को बहुत बार प्रणाम किया । तुरन्त उनको केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई । वहाँ एकत्रित हुए राजालोग स्वामी के निर्वाण पर खिन्न हुए । आत्म ज्योति इस भूमि को छोड़ कर चली गई, अतःसाधारण मिट्टी की ज्योतियाँ जलाने की बात वहाँ के राजाओं ने बातायी और “पर भोग पोषड” नामक दीपावली को उन्होंने प्रकाश में लाकर “वीरनिर्वाणशक” आरंभ का अभिवर्णन किया ।

**जय जय जय श्रमण भगवान महावीर  
स्वामी आपको प्रणाम ।**

with his Heavenly hosts, bowed to the Swamy and took him in his Pushpaka Vimana (the Heavenly Plane). One minute after the Nirvana of the Swamy, Gauthama Indrabhooti came running to the place. He began to bitterly lament the fact that he was not by the side of the Swamy, when he gave up his body. Now Gauthama Indrabhooti bowed again and again to the Supreme Attainment of the Swamy and was immediately blessed with Kevalajnana as a result. The kings who were assembled there were extremely sad at the Swamy's Nirvana and observed that since the Atmajyothi (The Light of the Self) has left this earth, they would light ordinary earthen lamps. Then they inaugurated the tradition “Parabhoga Poshadha” the festival of row of lamps and thus brought into being the Vira-Nirvana Sakha.

**VICTORY, VICTORY, VICTORY UNTO SHRAMANA BHAGAWAN MAHAVIRA.**



